लघुकथा विशेषांक

समकाल (11)

साहित्य, कला और संस्कृति की मासिक पत्रिका

मुख्य सम्पादक
देवेन्द्र आर्य

सम्पादक
विवेक मिश्र

प्रबंध सम्पादक
आरिफा एविस

अतिथि सम्पादक
अशोक भाटिया

New World Publication

© प्रकाशकाधीन
प्रकाशक : न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन
C-515, बुद्ध नगर, इंद्रपुरी, नई दिल्ली-110012
मो. : 8750688053
ईमेल : newworldpublication14@gmail.com
संस्करण : 2023
मूल्य : 150 रुपये
मुद्रक : सूरज प्रिंटर्स, दिल्ली (110032)

SAMKAL ANK -11
Edited by : DEVENDRA ARYA, VIVEK MISHRA, ARIFA AVIS

अनुक्रमणिका

अतिथि संपादकीय – अशोक भाटिया 5

आलोचना / भगीरथ

वर्तमान समय और लघुकथा 7

रचना : एक

विशेष आमंत्रित : सूरज प्रकाश 14

विशेष आमंत्रित : राजनारायण बोहरे 20

कमल चोपड़ा 25

हरभगवान चावला 29

निर्देश निधि 31

बलराम अग्रवाल 34

चैतन्य त्रिवेदी 37

मार्टिन जॉन 40

श्याम सुन्दर दीप्ति 42

वीरेंदर भाटिया 45

आनन्द 49

सुरेश बरनवाल 52

अरुण कुमार 55

राम करन 59

शर्मिला चौहान 64

सूर्यकांत नागर 67

महेश दर्पण / लघुकथा का शिल्प 69

अशोक भाटिया / गौरतलब लघुकथा-संग्रह (2011-2022) 71

रचना : दो

सुकेश साहनी 74

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' 75

कमलेश भारतीय 77

विकास नारायण राय 79

सूर्यनारायण रणसुभे 81

सुभाष नीरव 84

अमृतलाल मदान 85

राणा प्रताप 86

आलोक कुमार सातपुते 87

योगराज प्रभाकर 89

श्यामबाबू शर्मा 92

सन्तोष सुपेकर 93

मीनू खरे 95

कनक हरलालका 97
अवधेश तिवारी 98
रतन चंद 'रत्नेश' 99
जाफर मेहदी जाफरी 100
पवन शर्मा 101
पूरन सिंह 102
कमल कपूर 103
संध्या तिवारी 104
शोभना श्याम 105
गोकुल सोनी 106
अशोक गुजराती 108
उमेश महादोषी 109
प्रतापसिंह सोढ़ी 111
रामकुमार घोटड़ 112
मधु संधु 113
पवन जैन 114
महेंद्र कुमार 115
सुनील गज्जाणी 117
अनिता रश्मि 119
बालकृष्ण गुप्ता 'गुरु' 120
प्रेरणा गुप्ता 121
कुसुम पारीक 122
राधेश्याम भारतीय 123
अनिल मकरिया 125
पवित्रा अग्रवाल 126
मनोरमा पंत 126
मधु जैन 127
अर्चना राय 128
सुनीता मिश्रा 129
खेमकरण 'सोमन' 130
संदीप तोमर 131
महावीर रवांल्टा 132
उषा लाल 133
रश्मि स्थापक 134
मनोज कर्ण 135
सुषमा सिंह करचुली 136

लघुकथा विशेषांक के बहाने...

अशोक भाटिया

हिन्दी लघुकथाओं का वर्तमान जनपथ सौ से अधिक वर्षों के संघर्ष से बन पाया है। बीसवीं सदी में प्रेमचंद, प्रसाद से लेकर कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर (आकाश के तारे धरती के फूल), रावी (मेरे कथा-गुरु का कहना है), आनंदमोहन अवस्थी (बन्धनों की रक्षा) आदि से होते हुए इसे विष्णु प्रभाकर (सम्पूर्ण लघुकथाएँ), हरिशंकर परसाई जैसे कलम के धनी कई लेखकों का साथ मिला। सन सत्तर के बाद लघुकथा के नये दौर में अनेक लेखक इसके स्वरूप को संवारने-निखारने में प्राणपण से जुटते हैं जैसे, चित्रा मुद्गल (बयान) आदि अपनी रचनात्मकता के साथ, तो रमेश बत्तरा (सवाल-दर-सवाल) और भगीरथ (पेट सबके हैं) आदि रचना और आलोचना - दोनों धरातलों पर। सन अस्सी के आसपास नवयुवा पीढ़ी बड़ी संख्या में लघुकथा को हाथों-हाथ लेती है, जिसमें गंभीर लेखकों के साथ-साथ अ-लेखक भी हाथ आजमाने लगते हैं। इससे संघर्ष का एक और मोर्चा खुल जाता है। तब से आज तक लघुकथा-साहित्य कहाँ तक पहुँच पाया? - यह गंभीर और विस्तृत चर्चा का विषय है।

'बिजूका' कविता में कवि कुंवरनारायण लिखते हैं- "बोलो - जरा जोर से बोलो/ ताकि वे भी सुन सकें/जो जरा ऊँचा सुनते हैं।"

यह विशेषांक आज के विकट दौर में लघुकथा की गंभीर, जिम्मेवार, रचनात्मक धारा को बढ़ाने-उभारने की दिशा में एक विनम्र प्रयास है। पहले भी ऐसे प्रयास हुए हैं और ऐसे निरंतर प्रयासों से ही लघुकथा के नये वातायन खुलेंगे और इसके परिदृश्य पर थिरक रहे 'निरे मिट्टी के माधो' स्वतः ही पीछे छूट जाएँगे। इस अंक में आप वरिष्ठ साहित्यकार सूरज प्रकाश द्वारा इस कठिन समय में अभिव्यक्ति की नयी युक्तियाँ खोजने की पहल देखेंगे, साथ ही अनुभवी उपन्यासकार राजनारायण बोहरे की, किसान और देहाती स्त्री के दर्द में घुली, इच्छित यथार्थ की रचनाएँ पढ़ेंगे। हरभगवान चावला की लघुकथाएँ जिस प्रकार आज के राजनीतिक विद्रूप से लोहा लेती हैं, उसे रेखांकित करने की जरूरत है। निर्देश निधि की लघुकथाओं में कहानी का-सा प्रवाह और प्रभाव अपनी अलग चमक लिए है। कमल चोपड़ा, बलराम अग्रवाल, चैतन्य त्रिवेदी और मार्टिन जॉन अपनी चिर-परिचित शैली के साथ उपस्थित हैं। इधर उभरकर आई, वीरेंदर भाटिया, सुरेश बरनवाल और आनंद की त्रयी, अपने परिपक्व दृष्टिकोण और सूक्ष्म पर्यवेक्षण-शक्ति के कारण, प्रबल संभावनाओं के साथ अंक में मौजूद है। इनके साथ

श्याम सुंदर दीप्ति, राम करन, अरुण कुमार, शर्मिला चौहान और 'रचना : दो' खंड के तमाम रचनाकार गंभीरता के साथ अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहे हैं।

वर्तमान विभाजनकारी राजनीति जहाँ सांप्रदायिक भूमियों को विष-जल से सींचने और उसकी फसल का गौरव-गान करने में जुटी है, वहीं साहित्य की विविध विधाएं आपस में गलबहियां डाले अपनी शक्ति और पठनीयता के नए आयाम सामने ला रही हैं। विश्वनाथ त्रिपाठी का 'नंगातलाई का गाँव', काशीनाथ सिंह का 'काशी का अस्सी' जैसी कई कृतियाँ इस समृद्धि की इबारत लिख चुकी हैं। यह प्रवृत्ति लघुकथा के लिए विशेष रूप से 'उत्प्रेरक' का काम कर सकती है।

प्रेमचंद जब कहते हैं कि 'सच्चा साहित्य वही है, जो हममें गति, संघर्ष और बेचैनी उत्पन्न करे', तो वे एक तरफ लेखक के चिंतन और बेहतर समाज के उसके सपने, दूसरी तरफ पाठक पर ऐसे साहित्य के पड़ने वाले प्रभाव को भी ध्यान में रखते हैं। 'गति, संघर्ष और बेचैनी' की व्याख्या करने का यहाँ अवकाश नहीं, किन्तु इनसे प्रेरित साहित्य और रोमान तत्व से संचालित साहित्य का अंतर अवश्य हमारे सामने स्पष्ट हो जाता है। अन्य विधाओं की तरह आज लिखा जा रहा बहुत-सा लघुकथा-साहित्य भी 'रोमान' से संचालित है। ऐसे में पुस्तकों, सम्मानों का गगनचुम्बी ढेर तो लग सकता है; लग भी रहा है, किन्तु यह कवायद भ्रम की धुंध फैलाने का काम अधिक करती है और सच्चे साहित्य के लिए एक नयी चुनौती खड़ी करती है। विलासी साहित्य भी 'साहित्य का गोदी युग' (बोधिसत्व) ही है, जिसे पहचानने और अलगाने की जरूरत है। ज्यों-ज्यों लघुकथा की सामर्थ्य को बढ़ाने वाली रचनाओं में वृद्धि होती जाएगी, यह परिदृश्य बदलता जाएगा। इस क्रम में अ-लेखकों की थोपी गई शर्तों के कई स्पीड-ब्रेकर टूट ही रहे हैं।

लघुकथा-क्षेत्र में गंभीरता से अभी बहुत काम करने की जरूरत है। अभी तो बेहतर रचनाओं की परम्परा को भी ढंग से संजोया नहीं जा सका है, उस पर आलोचनात्मक काम तो बाद की बात है। संक्षेप में इतना ही।

यह अंक विख्यात और पूर्ण कथाकार प्रेमचंद की स्मृति को समर्पित है, जो अनेक लोकप्रिय उपन्यासों और कहानियों के साथ 'बाबाजी का भोग', 'राष्ट्र का सेवक', 'बंद दरवाजा', 'कश्मीरी सेब' जैसी विविधमुखी, दिशासूचक लघुकथाओं के रचनाकार भी थे।

इस विशेषांक के रूप में समकालीन हिंदी लघुकथा की एक झलक आपके सामने है। ये सभी रचनाएँ पहली बार साहित्य-जगत के सामने आ रही हैं। अपनी बेबाक राय अवश्य दीजिएगा।

-94161 52100

***** सुपरिचित साहित्यकार। कविता, आलोचना, बाल-साहित्य, यात्रा-संस्मरण, व्यंग्य आदि विधाओं में लेखन और प्रकाशन। लघुकथा-रचना और आलोचना के प्रमुख हस्ताक्षर।***

वर्तमान समय और लघुकथा

भगीरथ

वर्तमान से तात्पर्य हमारे समय की स्थितियों, घटनाओं, विचारों और समस्याओं से है। वर्तमान समय कोई 'समय बिन्दु' या मौजूदा क्षण नहीं है बल्कि समय का वह विस्तार है जिसमें हम जी रहे हैं, जिंदा तीन पीढ़ियों का समय काल है।

राजनीति हमारे जीवन को नियंत्रित कर रही है। हमारे जीवन की दशा और दिशा को तय कर रही है। हम रोजगार में होंगे या बेरोजगार, हम अमीर होंगे या गरीब, हम शिक्षित होंगे या अनपढ़ रह जाएंगे, हमारा समुचित इलाज होगा या चिकित्सा के अभाव में असमय इस दुनिया से कूच कर जाएंगे, यह सब राजनीति तय करती है।

अर्थनीति पूरे नंगईपन के साथ कॉर्पोरेट के साथ गलबहियाँ कर रही है और करीब आधी आबादी भुखमरी के कगार पर खड़ी है। विदेशी कर्ज में डूबी अर्थव्यवस्था को और कर्ज के जाल में फँसाया जा रहा है। इंफ्रास्ट्रक्चर डेवलपमेंट के नाम पर जो कर्ज खर्च हो रहा है उसमें से आधा व्यर्थ ही बर्बाद हो रहा है वैसे भी कर्ज लेकर भव्य शादियाँ करना भारत की परंपरा है।

जनता पर टैक्स, शोषण की स्थिति तक पहुँच चुका है। फिर भी उसे बढ़ाने की कोशिश की जा रही है। महंगाई ने जनता की आमदनी को वैसे ही कम कर दिया है। निम्न मध्यम वर्ग और गरीब तबके की आर्थिक स्थिति बद से बदतर होती जा रही है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर पहरे बैठा दिए हैं। टीवी और प्रिन्ट मीडिया को लालच परोसकर उसे एक तरह से अपने कब्जे में कर दिया है, उनके माध्यम से सत्ता अपना एजेंडा चलवा रही है। विरोध का स्वर मीडिया से गायब है, केवल सोशल मीडिया पर कुछ साहसी पत्रकार और नागरिक प्रतिरोध की आवाज बुलंद कर रहे हैं। हाल ही में केंद्र सरकार ने कानून बनाकर इस आवाज को कुंद करने की कोशिश की है। विरोधी और विपक्ष पर राज्य की संस्थाओं द्वारा चयनित तरीके से उत्पीड़न किया जा रहा है।

समानता और सामाजिक न्याय की जंग को आगे बढ़ाने की बजाय शास्त्र और संस्कृति की दुहाई देकर पीछे धकेला जा रहा है।

संविधान और संवैधानिक मूल्यों पर सत्ता सीधे हमला कर रही है। संवैधानिक मूल्यों में सबसे ज्यादा लहूलुहान धर्म निरपेक्षता का मूल्य हुआ है।

अल्पसंख्यकों खासतौर पर मुसलमानों और ईसाइयों के प्रति नफरत फैलाने का दौर तेजी से जारी है। हेट स्पीच देनेवालों में सत्ता पक्ष के राजनेता, साधु संन्यासी है लेकिन पुलिस उन पर कोई कार्यवाही नहीं करती। हिन्दू राष्ट्र की बातें खुले रूप से की जाती है बल्कि कहा जा रहा है कि भारत हिन्दू राष्ट्र था, है और रहेगा।

वर्तमान में हम प्रकृति को विकास के नाम पर बेरहमी से नष्ट कर रहे हैं। धरती के गर्भ की सम्पदा के दोहन ने आदिवासियों को उनके प्राकृतिक होम से पुलिस फोर्स द्वारा बलपूर्वक बेदखल किया जा रहा है। आदिवासी आन्दोलकारियों को नक्सल

कहकर जेलों में ठूंसा जा रहा है। उन पर लाठीचार्ज और पुलिस फायरिंग के आदेश प्रशासन देता आ रहा है। देश के मूल निवासी जो सबसे ज्यादा वंचित और अशिक्षित है, उन पर राज्य हिंसा सबसे अधिक कारित की जा रही है। उनकी भाषा, संस्कृति और आस्थाओं को विकास की मुख्य धारा में लाने के बहाने नष्ट किया जा रहा है। इनके आंदोलनों की सरकार पूर्णतः उपेक्षा कर रही है।

किसानों और मजदूरों की मांगों पर सरकार बातचीत का स्वांग भरती है लेकिन करती वही है जो वह करना चाहती है। आंदोलन कोई भी हो सरकार उन्हें बदनाम और देशद्रोही साबित करने में लग जाती है। सीएए के खिलाफ शाहीन बाग का आंदोलन हो या किसानों का वर्षभर का धरना, सरकार पूर्णतः असंवेदनशील रही।

देश के 5% लोगों के पास देश की 60% सम्पदा है जबकि 50% लोग गरीबी के तल पर जीवन व्यतीत कर रहे हैं। आर्थिक असमानता को पाटने का कोई काम सरकार नहीं कर रही क्योंकि वो इसकी जरूरत ही नहीं समझती।

लोकतान्त्रिक संस्थाओं को निष्प्रभावी बनाया जा रहा है या सत्ता उन्हें अपनी चेरी बना रही है संसद हो या चुनाव आयोग हो। यहाँ तक कि न्यायालय को भी प्रभावित किया जा रहा है। इ.डी., सी.बी.आई. वगैरह तो पूरी तरह कब्जे में है।

समस्याएं

आजादी के बाद से ही हम बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, महंगाई, जेंडर असमानता, आर्थिक असमानता, महिला सुरक्षा, घरेलू हिंसा, गरीबी, बालश्रम, जातिवाद, सांप्रदायिकता जैसी समस्याओं से जूझते आ रहे हैं। इस समय ये समस्याएं ज्यादा गंभीर रूप ले चुकी है। और इन्हें दूर करने की इच्छा शक्ति सरकार में कम ही दिखाई देती है। लघुकथा में भ्रष्टाचार, महंगाई, बेरोजगारी पर खूब लिखा गया, लेखक लिखते-लिखते थक गया लेकिन समस्याएं यों की यों बनी रही। केवल पंचवर्षीय योजना के दौरान विकास और रोजगार बहुत तेजी से बढ़े थे।

खेती का अलाभकारी होना, किसानों की आत्महत्या का मसला, धार्मिक कट्टरता, आतंकवाद नक्सलवाद जैसे महत्वपूर्ण मुद्दे हैं जो भारतीय राष्ट्र के राजनीतिक वातावरण को प्रभावित करते हैं।

हाल के दिनों में हिन्दुत्व के बढ़ते मार्च ने मॉब लिंचिंग, गौ रक्षक दल, धर्मांतरण व गौ हत्या पर रोक, लव जिहाद, शोभा यात्रा के दौरान मस्जिदों पर हमले, सुनियोजित सांप्रदायिक घटनाएं, हिन्दू राष्ट्रवाद, हिन्दुत्व (जीवन शैली) को हिन्दू धर्म से गडमड कर देना ताकि लगे कि दोनों एक ही है व्यावहारिक धरातल पर।

वर्तमान में हम एक कठिन दौर से गुजर रहे हैं जिसमें उभरती फासिस्ट प्रवृतियाँ, संवैधानिक संस्थाओं और मूल्यों का तेजी से क्षरण, उन्मादी अराजक भीड़, नेट पर हिन्दुत्व की ट्रोल आर्मी, व्हाट्स अप के वीर, फेक न्यूज जनरेट करने वाले आईटी सेल के ज्ञानी, साधुओं की हेट स्पीच, चौथे खंभे का सत्ता की दलाली की भूमिका में आना, ये सब परोक्ष-अपरोक्ष रूप से सत्ता की मदद से हो रहा है।

क्रोनी केपटलिस्ट से सत्ता का गठजोड़ प्रबल है। सत्तापक्ष के चुनाव को पूरा

फाइनेंस करना बदले में सत्ता से टैक्स में छूट, अनपेड लोन को एनपीए कर देना, सार्वजनिक सम्पत्ति को निजी हाथों में बहुत सस्ती दरों पर बेच देना, चाहे कोयला खदान हो, बंदरगाह हो, हवाई अड्डे हो। सत्ता के बल पर विदेशों में अपने चहेतों को प्रोजेक्ट दिलवाना शामिल है।

प्रतिरोध बढ़ रहा है। लंबे प्रतिरोध जैसे शाहीन बाग, किसानों का वर्षभर लंबा धरना तथा कर्मचारियों, मजदूरों और दलितों के आंदोलनों की बात सुनने के बजाय उनका दमन करना, यह सब अलोकप्रिय कदमों को हिन्दू और सांप्रदायिक एजेंडे से ढक देने की कोशिश, के बावजूद प्रतिरोध बढ़ता जा रहा है।

वर्तमान को हम उसमें घट रही घटनाओं से देखते हैं हाल कि महत्वपूर्ण घटनाओं में अन्ना आंदोलन और उसके बाद बीजेपी का सत्ता पर काबिज होना, दिल्ली में आप पार्टी की जीत, नोट बंदी, लॉक डाउन और उसके बाद का महापलायन, कोविड की आपदा और उसका मिसमैनेजमेंट आदि ने जन जीवन को प्रभावित किया।

साहित्य में सामाजिक यथार्थ प्रतिबिंबित होता है, अतः लघुकथा साहित्य में भी ऐसा होना स्वाभाविक है। आधुनिक लघुकथा आविर्भाव के समय से ही सामाजिक विसंगतियों और विडंबनाओं को अपना विषय बनाती आ रही है, समय के साथ उसका विस्तार हुआ है नए विषयों का प्रवेश हुआ हैं। पुराने नैतिक, उपदेशात्मक और आदर्श वादी लघुकथा से आधुनिक लघुकथा ने किनारा कर लिया था और सामाजिक यथार्थ को उसकी जगह प्रतिस्थापित किया। यथार्थ को प्रतिबिंबित करने की यह जिम्मेदारी लघुकथा ने बखूबी निभायी है। लघुकथा साहित्य ने सामाजिक यथार्थ के साथ-साथ प्रगतिशील मूल्यों की पैरवी भी की है। जेंडर मुद्दों पर विशेष मुखर रही है। स्त्री के हक हकूक की पैरवी की है। जेंडर के सवाल पर खूब लिखा है और अच्छा लिखा है।

अशोक भाटिया की 'स्त्री कुछ नहीं करती!' में दिनभर स्त्री चकरघिन्नी की तरह एक के बाद दूसरा काम करती है फिर भी कहते है स्त्रियाँ करती ही क्या है? यानी स्त्रियाँ कुछ नहीं करती!

स्नेह गोस्वामी की 'वह जो नहीं कहा' की पत्नी डायरी में विभिन्न समय में दर्ज बातें पति से सम्बन्धित भले ही हो लेकिन वे उसे कही नहीं गई है. न कभी कह पाने की संभावना है ये बातें कह दी जाय तो घर में भूचाल आ जाएगा जो वो नहीं लाना चाहती। पति को खुश करने में लगी रहती है लेकिन वे हैं कि खुश होते ही नहीं। यही सब करते वह अपना व्यक्तित्व ही भूल जाती है अपनी पसंद और इच्छाएँ पूरी नहीं कर पाती।

हरभगवान चावला की 'धरती में गड़ी स्त्रियाँ' धरती से फूटते अंकुरों जैसी है जो जमीन फोड़कर निकल रही है. विद्रोह का बीज फूटकर नन्हा पौधा बन रहा है बड़ा होकर तो जलजला ले आयगा, इन स्त्रियों ने दासत्व के विरुद्ध बिगुल बजाया है, शास्त्रों को चुनौती दी है,

कनक हरलालका की 'जानवर' आरक्षित सीट से जीती साहसी गुलाबों की कहानी है जो बाहुबली विधायक के तर्कों का मुंह तोड़ जबाब देती है और नाबालिग लड़की

से छेड़छाड़ मामले पर सटीक जबाब देती है।

कुमार संभव जोशी की 'शयनेशु रम्भा' स्त्री शयन के समय अप्सरा रम्भा की तरह सुख देने वाली हो। पति ने पत्नी को एंटी एंक्जाईटी पिल, स्लीपिंग पिल्स, तो कभी खुशी के मौके पर शैम्पेन की तरह, या भड़ास निकालने के लिए पंचिंग बैग की तरह, यूज किया, उसे इंसान तो समझा ही नहीं गया केवल सेक्स डॉल समझा गया।

संध्या तिवारी की 'कविता' में स्त्री कहती है, 'मैं घर का आँगन हूँ, जहाँ मैं झाड़ बुहार करती हूँ, मैं कमरा हूँ जहाँ मैं सबके आराम का ख्याल रखती हूँ, मैं रसोई हूँ, जहाँ मैं सबका पेट भरती हूँ।' लेकिन घर के द्वार पर लगी नेम प्लेट पर वह कहीं नहीं है।,

सुकेश साहनी की 'आधी दुनिया' आज भी समानता, स्वतंत्रता और सम्मान के लिए इक्कीसवीं सदी में भी जूझ रही है. स्त्री की हर अवस्था पर कसे गए तंज, जले कटे रिमार्क, अनचाहे सुझाव और अन्ततः उसको उसकी औकात दिखाने वाले शब्द 'मुझे आँखें दिखाती हो! निकलो...अभी निकलो 'मेरे' घर से।'

अपराजिता अनामिका की 'तमगा', छवि निगम की 'लिहाफ', तारा निगम की 'मैं गुड़िया नहीं लूँगी', चित्रा मुद्गल की 'दूध' जैसी कुछ बेहतरीन लघुकथाओं का उल्लेख जरूरी है। वास्तविकता यह है कि सैकड़ों लेखक लेखिकाओं ने इस विषय पर अपनी कलम चलाई है।

लघुकथा साहित्य में आदिवासियों पर बहुत कम लिख गया है। क्योंकि जो लेखक लघुकथा में एक्टिव है वे आदिवासी जीवन से अनभिज्ञ है तथा आदिवासी लेखक लघुकथा साहित्य में है ही नहीं या नहीं के बराबर है। जसवीर चावला की 'लस्से' आदिवासी औरत के यौन शोषण की बेहतरीन कथा है। अपराजिता अनामिका की 'तमगा' की आदिवासी छात्राओं के छात्रावास की संचालिका, सर्वश्रेष्ठ का तमगा प्राप्त करने के लिए अपने सामने छात्राओं के साथ बदसलूकी होने देती है।

लघुकथा में दलित लेखक गिनती के हैं और वे भी कोई मुहिम नहीं चला पा रहे हैं बस दो चार दलित जीवन पर लघुकथाएं लिख ली। फिर भी समय की नब्ज को लघुकथा लेखकों ने पकड़ा है उदाहरण के तौर पर हम निम्न का उल्लेख कर सकते हैं तारिक असलम 'तस्मीन' की 'सिर उठाते तिनके' तथा भगीरथ की 'चुनौती' सामंतों के सामने उठ खड़े होने की हिम्मत दिखाती है, विक्रम सोनी की 'जूते की जात' मिसिर जी के गरदन में हूल उठा है और रमोली चमार के जूता छुआने से जाएगा जब रमोली जूता चलाता है तो पीढ़ियों का बदला ले लेता है। 'बनैले सूअर' चौबे और मिश्र कहलाते पंडित है लेकिन पत्र नहीं पढ़ सकते जब बिसुआ चमार का बेटा पत्र पढ़ लेता है तो वे ग्लानि से भर उठते हैं और उसे पीट-पीट कर मार देते हैं, रत्नकुमार सांभरिया की 'द्रोणाचार्य जिंदा है' रचना बताती है कि घृणा के कारणों में जाति सबसे ऊपर है इसी कारण दूसरों को मूल्य सिखाने वाला अध्यापक स्वयं मूल्य तोड़ता है।, मालती बसंत की 'अदला-बदली' एक ब्राह्मण हरिजन व्यक्ति से गोद लेने को कहता है ताकि हरिजन स्कॉलरशिप लेकर पढ़ सके, हरिजन कहता है कि मेरे बेटे को तेरे ब्राह्मण पिता गोद ले लें तो सवर्णों के साथ पढ़ने से हीन भावना से मुक्ति पा ले।, रामकुमार घोटड

की 'एक युद्ध यह भी' प्रतीकात्मक रूप से झीमली के गर्भ में पल रहे दो भ्रूण एक उसके पति का और दूसरा ठाकुर विचित्र सिंह का, आपस में लड़ते हैं अंततः शूद्र भ्रूण विचित्र सिंह के भ्रूण को ठोकर मारकर बाहर निकाल देता है। इंदिरा खुराना की 'जाति मर्यादा' राम भले ही शबरी के बेर खा ले वे भगवान है लेकिन हम जाति मर्यादा से बंधे हैं, चम्पा चमारिन को चौके में घुसने न दिया कर, कमल चोपड़ा की 'अपनों से निकलकर' अपने को ऊंचा समझने वाला कहीं का नहीं रहता।, भूपिंदर सिंह की 'रोटी का टुकड़ा' बालक का तर्क देखिए उसके हाथ का कहकर मैं भंगी हो गया और वो जो हमारे घर का सालों से कहती आ रही है बामन क्यों नहीं हो गई।, और मोहन राजेश की 'अछूत' 'जब भंगन ब्राह्मण की रजाई में घुस सकती है तो रसोई में क्यों नहीं!' 'सुरक्षित सीट (पूरन सिंह) सवर्णों द्वारा जाति और राजनीति के दांव चलकर अपना वर्चस्व बनाए रखने की तजवीज है

बहुजन वर्सेज अन्य का विमर्श भी तेजी पकड़ रहा है। बहुजन यानी आदिवासी, अनुसूचित जाति और अन्य पिछड़ा वर्ग जिसकी कुल जनसंख्या 85% है। ओबीसी 52% हैं, लेकिन आरक्षण 27% ही मिलता है, एससी 16.6% लेकिन आरक्षण 22.5%, एसटी जनसंख्या 8.6% लेकिन आरक्षण 7.5%। ये सभी वर्ग सामाजिक शैक्षिक और आर्थिक रूप से पिछड़े हैं। नया विमर्श इसे ओबीसी के प्रति अन्याय मानता है।

जिसकी जितनी संख्या उतनी उसकी भागीदारी, चाहे नौकरियों में हो, व्यवसाय में हो, सम्पदा में हो, राजनीति में हो। चूंकि यह तबका सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़ा है उन्हें सरकारी और निजी नौकरियों में आरक्षण दिया जाय तभी सामाजिक न्याय का कार्यभार पूरा किया जा सकेगा। इन वर्गों को मुफ्त गुणात्मक शिक्षा और वजीफा देकर आगे बढ़ाया जा सकता है। अगर यह आंदोलन जोर पकड़ता है तो निश्चित ही हिन्दुत्व कमजोर पड़ेगा। लघुकथा साहित्य में यह प्रतिबिंबित नहीं हो पाया है। यह आंदोलन आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के लिए 10% आरक्षण का विरोध करता है क्योंकि यह सामाजिक पिछड़ेपन पर आधारित नहीं है और बैक डोर से आरक्षण में सेंध लगता है। यह जाति गणना पर भी जोर देता है।

हिन्दुत्व के उभार के पहले लघुकथा-साहित्य के रचनाकार धर्म-निरपेक्षता के पक्षधर थे। भारतीय संविधान के कोर मूल्यों में से है धर्म निरपेक्षता जिसका संरक्षण लेखकों का दायित्व है। लेकिन बाद में लेखकों में भी दुराग्रह पैदा हो गए खास तौर पर आरक्षण को लेकर, लेकिन उनके दुराग्रह लघुकथा में खुले रूप से व्यक्त नहीं हुए, हाँ दबे छिपे जरूर मिल जाएंगे। अभी भी लघुकथा साहित्य में सांप्रदायिकता के पैरोकार नहीं है। सांप्रदायिक लेखक एंटी दलित और एंटी महिला भी होते हैं क्योंकि यही उनकी वैचारिकता को सूट करता है। तसल्ली की बात है कि लघुकथा में ऐसे प्रभावशाली लेखक नहीं है।

सांप्रदायिक सद्‌भाव को प्रेरित करनेवाली रचनाएं माधव नागदा की 'आग' पास के मोहल्ले वाले ने चिंगारी छोड़ दी। जो आग बनने लगी इस आग को बुझाने की बजाय हथियारों से लैस भीड़ चिंगारी फेंकनेवाले की तलाश में पास के मोहल्ले में गए। आग

ने पूरे शहर को अपनी चपेट में ले लिया आग का असर दोनों समुदायों पर एक सा था। रमेश बतरा की 'वजह' बताती है कि हिन्दू मुसलमान लड़ने की वजह ढूंढ़ ही लेते है क्योंकि मन में कहीं गहरी नफरत है। शहर में दंगा फैल रहा है कारण मस्जिद में 'सूअर' घुस आया है तो वह मजदूर दंगाइयों से कहता है 'जाओ सूअर को मारो यहाँ क्या कर रहे हो।' कमल चोपड़ा की 'उलटा आप' के किरदार दंगे में इंसान को बचाने के चक्कर में खुद लहूलुहान हो जाते हैं। 'धर्म के अनुसार' (कमल चोपड़ा) तो इंसान की जान बचाना ही धर्म है, दंगे में हताहत मुसलमान को हिन्दू ने पीठ पर लादकर अस्पताल पहुंचाया। सांप्रदायिक भेदभाव और छुआछूत को दर्शाती 'पानी की जाति' (विष्णु प्रभाकर) में पानी को भी हिन्दू मुसलमान बना दिया। बलराम अग्रवाल की 'गोभोजन कथा' का बशीर दंगों में मारा गया उसकी पत्नी पेट से थी। माधुरी ने कहा आटा लाई हूँ रख लो तुम्हारे लिए जो भी बन पड़ेगा वो हम करेंगे बहन। 'सांप्रदायिक सद्भावना' और नारी के प्रति नारी की सहज संवेदना की कथा है।

संविधान में राज्य से अपेक्षा की गई है कि वह वैज्ञानिक दृष्टिकोण को बढ़ावा देगी और भारतीय समाज में फैले अंधविश्वास को कम करने की दिशा में काम करेगी। लघुकथा साहित्य में अंधविश्वास को लेकर अच्छा खासा लिखा है लेकिन उनमें भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अभाव है। अंधविश्वास का तार्किक तरीके से विरोध करना वैज्ञानिक दृष्टिकोण को बढ़ाता है। कुछ लेखक आस्था और संस्कृति के नाम पर इन्हें जस्टीफाइ करने का प्रयत्न करते है या छद्म वैज्ञानिकता का सहारा लेते हैं। लेखक को स्वयं वैज्ञानिक दृष्टि कोण से सम्पन्न होना होगा तब जाकर तार्किक रचनाओं का सृजन संभव है। फूली- भगीरथ, मनहूस- गोविंद शर्मा, अनोखा मुकदमा- संदीप तोमर, चश्मे- योगराज प्रभाकर, देवी- हरभगवान चावला, मृतक व कुंडली- अशोक भाटिया उल्लेखनीय रचनाएं है।

पर्यावरण व प्रदूषण संबंधी रचनाएँ पर्यावरण की उथली समझ पर आधारित हैं और उनमें गंभीरता की कमी है। पर्यावरण संरक्षण मानव के सामने गंभीर चुनौती प्रस्तुत कर रहा है क्योंकि यह मानव के जीने मरने का प्रश्न है, इसे हलके में नहीं लिया जा सकता। पर्यावरण को विकास के बरक्स रख कर पर्यावरण के ऊपर विकास को प्राथमिकता दी जाती है और इसमे सरकारों का बड़ा हाथ है। -जारी रहेगी लड़ाई-भगीरथ।

भ्रष्टाचार और बेरोजगारी भारतीय लोकतंत्र की शाश्वत समस्याएं हैं, क्योंकि इस दिशा में हमारे प्रयत्न नाकाफी हैं। सरकारी कार्यालयों के भ्रष्टाचार पर खूब लिखा गया है पर बड़े भ्रष्टाचारों पर नहीं के बराबर लिखा गया है। राजनीतिक दलों के भ्रष्टाचारों और कॉर्पोरेट के भ्रष्टाचारों के बारे में नहीं लिखा गया है। सरकार के उच्च पदों पर आसीन मंत्रियों और अफसरों के भ्रष्टाचार पर भी कम लिखा गया है। रामकुमार आत्रेय -इक्कीस जूते।

जातिवाद के सवाल को डॉ. अंबेडकर के दृष्टिकोण से उठाने की जरूरत है। जातियों की समाप्ति उसके बिना असंभव है। वैसे लोहिया और बीपी मण्डल निम्न जातियों को उचित अवसर उपलब्ध कराकर अन्य उच्च जातियों के समकक्ष उठाने का

प्रयत्न पिछड़े वर्ग कुछ जातियों ने शिक्षा और राजनीति के बल पर अपने को उठाया है और समाज में अब वे सम्मान की दृष्टि से देखी जाती है। हरिशंकर परसाई –जाति, सविता इन्द्र गुप्ता–पूर्वाग्रह।

आइडिया ऑफ इंडिया, इन्क्लूसिव आइडिया तथा विश्व गुरु का द्वन्द्व भी हिन्दू राष्ट्रीयता और सभी धर्मों जातियों के मिले जुले राष्ट्रवाद के बीच है। विश्व गुरु का आइडिया अतीतोन्मुखी है, जो अतीत पर गर्व करके राष्ट्रवाद का काम चलाता है।

भारतीय कृषि–कर्म अभी भी अलाभकारी है। जितने भी प्रयत्न किये गए वे नाकाफी साबित हुए हैं। जब तक किसानों को अपनी उपज का लाभकारी मूल्य नहीं दिया जायेगा, उनकी स्थिति में सुधार संभव नहीं इसलिए किसान एम एस पी पर खरीद की मांग कर रहे है। किसान अशिक्षित है और पारंपरिक खेती से आगे नहीं बढ़ पाया है। कृषि रोजगार का बहुत बड़ा क्षेत्र है इसलिए इसमें सुधार जरूरी है। –कमलेश भारतीय –किसान, हरभगवान चावला–मिलन, कमल चोपड़ा–खुदकुशी व मंडी में रामदीन।

मुद्दों पर लिखने की बजाय लेखक संबंधों में उलझा पड़ा है। बहुतायत इस तरह के लेखन की है। प्रेम–संबंधों और पारिवारिक संबंधों को प्राथमिकता के तौर पर लिखता है। उसमें सीमित मात्रा में सामाजिक मान्यताओं का विरोध जरूर प्रकट होता है। कुछ संस्कारों और संस्कृति पर जोर देकर प्रतिगामी मूल्यों का संरक्षण करते हैं। ज्यादातर लेखक साहित्य के नाम पर ज्ञान बांटने, उपदेश देने, मोटिवेट करने और आदर्श समाधान प्रस्तुत करने में लगे हैं; वे खामियाँ व्यवस्था में न देखकर व्यक्ति में देखते हैं।

राजनीतिक चेतना से लैस लघुकथाकर बहुत कम संख्या में हैं, इसलिए भी राजनीति संबंधित रचनाएं बहुत कम मात्रा में उपलब्ध हैं। जो हैं, वे व्यंग्य के सामान्य स्तर की हैं, परसाई जैसी दृष्टि नहीं है। अभिव्यक्ति की आजादी, संवैधानिक संस्थाओं को सत्ता के कब्जे से मुक्त करना, समानता और सामाजिक न्याय लड़ाई को आगे ले जाना, अपराधी और राजनीति के गठजोड़ को तोड़ना जैसे महत्वपूर्ण कार्य अनदेखे पड़े हैं। विष्णु प्रभाकर–दोस्ती (अपराध और राजनीति का गठजोड़)।

वर्तमान को अभिव्यक्त करने में लघुकथा–साहित्य काफी हद तक सफल रहा है लेकिन हम देखते हैं कि बहुत से अहम क्षेत्र अछूते पड़े हैं या उन पर बहुत कम काम हुआ है, उन पर ध्यान देने की जरूरत है। लघुकथा लेखकों को अपने अध्ययन को विस्तार देने की जरूरत से भी इनकार नहीं किया जा सकता। इस हेतु वैचारिक लेखों का भी पत्रिकाओं में समावेश किया जाना चाहिए और कथेतर साहित्य को पढ़ने में प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

–09414317654

रचना : एक

विशेष आमंत्रित : सूरज प्रकाश
बर्तनों के बच्चे

एक गांव में रहने के लिए एक नया शहरी आया। चाय पानी के बहाने सबसे मेल जोल बढ़ाया।

एक दिन वह गांव के सबसे धनी आदमी के घर पहुंचा, अपना परिचय दिया, मेज पर एक उपहार रखा और बोला– शहर से कुछ मेहमान आने वाले हैं। खाना बनाने के लिए बर्तन कम पड़ रहे हैं। थोड़े से बर्तन उधार दे दीजिये, शाम को लौटा दूंगा।

अब भला बर्तनों के लिए कौन मना करता है। उन्होंने गिन कर ढेर सारे बर्तन दे दिए।

शाम को जब बर्तन वापिस आए तो धनी आदमी ने देखा कि दो–एक कटोरी और कुछ चम्मच ज्यादा हैं। पूछने पर शहरी ने लापरवाही से बताया कि बर्तनों ने बच्चे दे दिए होंगे।

धनी आदमी हैरान – ये तो अनहोनी बात है कि बर्तन भी बच्चे देते हैं। अब वह भला घर आए अतिरिक्त बर्तनों को कैसे ठुकराता।

अब तो ये अक्सर होने लगा। बर्तन मांगे जाते और शाम को कुछ अतिरिक्त बर्तन भी मिल जाते। धनी व्यक्ति खुश।

अब होने ये लगा कि बहुत ज्यादा बर्तन मांगे जाने लगे और बच्चों के रूप में बर्तन भी बड़े और ज्यादा आने लगे।

एक दिन हुआ ये कि शहरी आदमी ढेर सारे बर्तन ले गया और कई दिन तक वापिस ही नहीं किए। सेठ घबराया और खुद चल कर शहरी के घर पहुंचा और बर्तनों के बारे में पूछा।

शहरी आदमी लापरवाही से बोला– वो ऐसा हुआ कि बीती रात सारे बर्तन मर गए।

सेठ हैरान– भला बर्तन कैसे मर सकते हैं।

शहरी बोला– ठीक उसी तरह से जिस तरह से बर्तनों के बच्चे हो रहे थे।

डिस्क्लेमर : इस बोध कथा का उस देश से कुछ लेना देना नहीं है, जहां पहले कुछ चतुर लोग बैंकों से पैसा उठा कर वक्त पर लौटाते भी रहते हैं और बैंक कर्मियों को कीमती उपहार दे कर खुश रखते हैं।

फिर एक दिन आता है कि बैंकों से चतुर लोगों के पास गया सारा धन खुदकुशी कर लेता है। सुसाइड नोट भी नहीं मिलता।

कर लो जो करना है।

चोर चोर चोर...

बहुत पहले की बात है। नयी-नयी नौकरी थी। वेतन मिला था। खुश होना लाजमी था। सब दोस्त फिल्म देखने निकले।

रास्ते में भीड़ में कोई जेबकतरा मेहरबान हुआ और जेब साफ। जब तक पता चलता, मेरा पर्स निकाला जा चुका था। हम सबने शोर मचाया। तय था कि जेबकतरा अभी आसपास ही था लेकिन वहां आसपास जितने भी लोग थे, निर्विकार लग रहे थे। किसी पर भी शक करने की गुंजाइश नहीं लग रही थी। अलबत्ता, जब हमने बहुत शोर मचाया तो बीसियों सुझाव आने लगे कि पुलिस में जाओ या सब की तलाशी लो, ये करो और वो करो लेकिन कुछ भी नहीं किया जा सका। चिंताएं कई थीं। कमरे का किराया, पूरे महीने का खर्च और घर भेजे जाने वाले पैसे।

भीड़ कुछ कम हुई तो मलंग जैसा दिखता एक आदमी हमारे पास आया और बहुत ही गोपनीय तरीके से बताने लगा कि वह काला जादू जानता है और चौबीस घंटे के भीतर जेबकतरे को हमारे सामने पेश कर सकता है। वह दावा करने लगा कि उसके काले जादू से कोई नहीं बच सकता। आओ मेरे साथ। तय था कि पुलिस से मदद मिलने वाली नहीं। हम उसके पीछे चल पड़े।

वह पास ही एक कोठरी में हमें ले गया। दस बीस सवाल पूछे उसने और अपनी फीस की पहली किस्त मांगी - इक्यावन रुपये और ग्यारह अंडों की कीमत। बाकी भुगतान पर्स वापिस मिल जाने पर। हमने सोचा यह करके भी देख लिया जाये। पूरे महीने के वेतन की तुलना में सौदा महंगा नहीं लगा और दोस्तों ने उसकी सेवा की पहली किस्त चुकायी। उसने दिलासा दी कि चौबीस घंटे के भीतर जेबकतरा रोता गिड़गिड़ाता हमारे सामने होगा। हमारा पता उसने नोट कर लिया।

अगले दिन वह हमारे कमरे पर हाजिर था। बताने लगा कि बस चोर का पता लग चुका है और वह उसकी पॉवर के रेडियस में आ चुका है। बस, अगले कुछ घंटे में वह गिड़गिड़ाते हुए खुद आयेगा। इस बार इक्यावन रुपये और इक्कीस अंडों की कीमत ले गया।

किस्सा कोताह कि वह हर तीसरे चौथे दिन आता और कुछ न कुछ वसूल कर ले जाता। कभी कहता कि चोर आपके घर का पता तलाश कर रहा है और कभी कि बस चल चुका है। जब हमने देखा कि उसकी फीस हमारे खोये पर्स से भी आगे बढ़ने वाली है तो हमने हाथ खड़े कर दिये। ये सब भी तो चंदा करके दिया जा रहा था उसे।

उसने एक दिन की मोहलत और मांगी और इस बार मुर्गे की कीमत ले गया।

अगले दिन वह हड़बड़ाता हुआ आया। हमारे कमरे में ही धूनी रमायी और आंखें मूंदे कुछ मंत्र उछाले, कुछ चेतावनियां बरसायीं और कुछ धमकियों का धुआँ किया।

अचानक उसने चिल्लाना शुरू कर दिया – चोर मेरे सामने है। वह आपका पर्स मार कर बहुत शर्मिंदा है। वह ख़ुदकुशी करने जा रहा है। वह बस नदी तक पहुंचने वाला है। जल्दी बताइये क्या करूं। एक मामूली पर्स के चक्कर में उसके बच्चे अनाथ हो जायेंगे। जल्दी बतायें, वह बस छलांग मारने वाला है। कहिये तो उसे रोकूं। मुझ पर हत्या का दोष लगेगा।

पाठक गण समझ सकते हैं कि हमने तरस खा कर जेबकतरे को ख़ुदकुशी करने से रोका ही होगा और रहीम खां बंगाली को भी कुछ दे दिला कर ही विदा किया होगा।

डिस्क्लेमर : यह एक सच्ची घटना है और इसकी तुलना उस देश से न की जाये जहां आम आदमी, बैंक, जेबकतरे और बिचौलियों के बीच ये खेल अरसे से खेला जा रहा है। बेशक वहां जेबकतरा ख़ुदकुशी करने के बजाये शर्म के मारे देश छोड़ कर चला ही जाता है।

कर लो जो करना है।

तेरी बारी

एक गांव में दो लड़के रहते थे। दोनों कोई काम धाम नहीं करते थे और न ही पढ़ते ही थे। दिन भर उधम मचाते। दोनों के माता पिता परेशान रहते।

एक दिन दोनों के पिताओं ने एक फैसला लिया कि इन्हें धंधे पर लगाया जाये। पहले लड़के के पिता ने उसे केले ले कर दिये और दूसरे बच्चे के पिता ने उसे अमरूद खरीद कर दिए कि जाओ, बेचो तथा अपनी जिंदगी शुरू करो।

दोनों बाजार में अपना अपना सामान लेकर बैठ गए। अब हुआ यह कि केले वाले का पहला केला बिक गया। उसकी बोहनी हो गयी। अमरूद वाले की जब बहुत देर तक बोहनी नहीं हुई तो केले वाले ने दोस्ती निभाते हुए अमरूद वाले से कहा– चल मैं तेरी बोहनी करा देता हूं। ये ले पैसे ले और एक अमरूद मुझे दे दे। इस तरह दोनों की बोहनी हो गयी।

अब हुआ यह कि दिन भर दोनों के पास कोई ग्राहक नहीं आया लेकिन दोनों बारी–बारी से, केले वाला अमरूद वाले से और अमरूद द्वारा केले वाले से फल खरीद कर खाते रहे और एक दूसरे की बिक्री कराते रहे।

शाम हो गयी। सारे अमरूद खत्म हो गए और सारे केले भी खत्म हो गए लेकिन कमाई के नाम पर दोनों के पास सिर्फ एक ही सिक्का था। वे खुश खुश घर चले आये कि सारा माल बिक गया।

आगे चल कर उनमें से एक राजनीति में चला गया और दूसरा नामी उद्योगपति बना।

दोनों ने एक दूसरे का ख्याल रखना जारी रखा।

वे आज भी वही कर रहे हैं। माल जनता का और वे दोनों दिन भर इधर से

उधर, उधर से इधर करते रहते हैं।

आज भी वे इस बात की परवाह नहीं करते कि शाम के समय सिक्का किसके पास है। बस वे इसी बात को ले कर खुश रहते हैं कि जनता से औने पौने दाम से खरीदा या हड़पा पूरा माल खप गया।

अब उनके साथ ब्यूरोक्रेसी भी जुड़ गयी है जो दोनों के फायदे के लिए योजनाएं बनाने के एवज में दो पैसे अपने लिए भी रख लेती हैं।

डिस्क्लेमर : ये विशुद्ध बोध कथा है और इसके सारे पात्र काल्पनिक हैं। इसका किसी देश की राजनीति से या अर्थव्यवस्था के स्तम्भों से कुछ भी लेना देना नहीं है।

पैसा पैसे को खींचता है

एक देश था। उसमें बहुत सारे लोग रहते थे। उन बहुत सारे लोगों में से भी बहुत सारे लोग गरीब थे और उन बहुत सारे लोगों में कुछ कम लोग बहुत अमीर थे।

तो हुआ यूं कि उन बहुत सारे गरीब लोगों में से एक गरीब आदमी ने किसी तरह से अक्षर ज्ञान कर लिया। अब वह जब कभी फुर्सत में होता (वैसे वह हर समय फुर्सत में ही होता था) इस अक्षर ज्ञान को परखने के लिए और उन छपे हुए अक्षरों का सही अर्थ जांचने के लिए आसपास बिखरे कागजों, अखबारों की कतरनों और कहीं भी छपे अक्षर देख कर धीरे-धीरे हिज्जे करके पढ़ने की कोशिश करता। इस अक्षर ज्ञान के बलबूते पर वह समझता था कि वह कुछ कुछ सयाना हो रहा है।

एक बार की बात, उसने यूं ही छपा हुआ एक कागज बांचते हुए पढ़ा कि पैसा पैसे को खींचता है। ये इबारत उसने कई बार पढ़ी। जब उसे समझ आ गयी तो उसकी आंखों में चमक आ गयी - अरे वाह, ये तो बहुत अच्छी बात लिखी है। पैसा पैसे को खींचता है। अगर मेरे पास भी कहीं से एक पैसा आ जाये तो उसके बल पर मैं दूसरों के पैसों को अपनी तरफ खींच सकता हूं। फिर मेरे पास जब ज्यादा पैसे हो जायेंगे तो मैं उस पैसों से और ज्यादा पैसे खींच सकता हूं। तब मैं बहुत पैसे वाला हो जाऊँगा।

बस जी, उस दिन से वह एक पैसा जुटाने की जुगत में लग गया। आखिर वह एक पैसे वाला हो गया। अब उसकी तलाश शुरू हुई किसी ऐसी तिजोरी की जिसके सारे पैसे वह खींच सके।

उसे याद आया कि राशन वाले लाला की तिजोरी में दिन भर इतने पैसे आते रहते हैं कि उसे अपनी तिजोरी बंद करने का मौका ही नहीं मिलता। गरीब आदमी ने सोचा - यहीं से शुरुआत की जाये।

वह जा कर लाला की दुकान के आगे लगी भीड़ में खड़ा हो गया और मौका

देख कर अपना पैसा उस तिजोरी की तरफ उछाल दिया। एक पैसा ज्यादा पैसों में मिल गया। वह बहुत खुश हुआ और एक किनारे खड़ा हो कर इंतजार करने लगा कि कब उसका पैसा तिजोरी के सारे पैसों को खींच कर लाता है।

दिन ढल गया, शाम हो गयी, सारे ग्राहक चले गये, लेकिन उसके पैसे ने कोई करामात न दिखायी। वह परेशान होने लगा।

लाला देख रहा था कि एक गरीब आदमी तब से परेशान हाल उसकी दुकान के आसपास मंडरा रहा है। दुकान बंद करने का समय हुआ तो गरीब की हालत खराब हो गयी। लाला ने उसकी ये हालत देखी तो पास बुलाया और उसकी परेशानी की वजह पूछी।

गरीब ने रोते हुए पूरा किस्सा बयान किया। सुन कर लाला हंसने लगा – तूने ठीक पढ़ा था लेकिन आधी ही बात पढ़ी थी।

तब लाला ने गरीब आदमी को समझाया कि तूने पढ़ा कि पैसा पैसे को खींचता है तो तू देख ही रहा है कि पैसों ने पैसे को खींच लिया है। बस, तूने ये ही नहीं पढ़ा था कि ज्यादा पैसे कम पैसों को खींचते हैं। अब तू घर जा। अँधेरा हो रहा है। कहीं तुझे सांप बिच्छु न काट लें।

डिस्क्लेमर **:** ये विशुद्ध बोध कथा है। इसके पात्र पूरी तरह से काल्पनिक हैं। इस कथा का उस देश से कोई संबंध नहीं है जहां बहुत सारे गरीबों के थोड़े से भी पैसे बहुत थोड़े से अमीरों की बहुत बड़ी तिजोरी में अपने आप पहुंच जाते हैं और इस बीच अँधेरा हो जाता है।

लो मैं आ गया

एक बहुत पुरानी कथा है। बाप बेटा शहर में माल बेच कर गांव वापिस लौट रहे थे। अँधेरा हो चला था। उनके साथ का गधा बहुत बूढ़ा हो चला था। पगडंडी संकरी थी इसलिए भी तेज चलने में तकलीफ हो रही थी। वे पूरी तरह से अँधेरा घिर जाने से पहले घर पहुंच जाना चाहते थे।

अब किस्मत की मार देखिये, वे गांव के पास पहुंचे ही थे कि गधा एक गड्ढे में जा गिरा।

बाप बेटा परेशान कि अब करें तो क्या करें। गड्ढा काफी गहरा था और ऊपर से अँधेरा। किसी भी तरह से गधे को बाहर नहीं निकाला जा सकता था। सुबह तक इंतजार भी नहीं किया जा सकता था। रात भर में गधा रेंक रेंक कर सारे गांव को सोने न देता और फिर सुबह पूरे गांव की गालियां सुननी पड़तीं। अब करें तो क्या करें। दोनों सिर पकड़ कर बैठे थे कि गधे ने रेंकना शुरू कर दिया।

दोनों ने आपस में सलाह मशविरा किया और यही सोचा कि गधा हो चला है बूढ़ा। अब काम का रहा नहीं है लेकिन खुराक पूरी है। इसके चक्कर में हर

दिन काम का हर्जा होता है। कोई खरीदने से रहा। क्यों न इसे इसी गड्ढे में जिंदा दफन कर दिया जाये। जान छूटेगी।

ये सोच कर बेटा लपक कर घर गया और दो बेलचे और लालटेन लेता आया।

अब जी, बाप बेटे ने फटाफट आसपास की मिट्टी गधे ऊपर डालनी शुरू कर दी ताकि गधा मिट्टी तले दब जाये।

जब गधे पर मिट्टी पड़नी शुरू हुई तो पहले तो उसे समझ ही नहीं आया कि ये हो क्या रहा है। वह जोर से रेंका। तभी उसके दिमाग की बत्ती जली। वह दोनों की अक्लमंदी पर मुस्कुराया और मिट्टी की मार सहता रहा। बाप बेटा देर रात तक गधे पर इतनी मिट्टी डाल चुके थे कि उन्हें लगने लगा कि बस, थोड़ी ही देर में गधा जीते जी दफन हो जायेगा।

उधर गधे जी महाराज मिट्टी के हर वार को पीठ पर झेलते और बदन झटक कर मिट्टी हटा देते। मिट्टी पैरों तले आती और इस तरह से वे हर बार ऊपर उठ रहे थे। सोच रहे थे कि बस थोड़ी सी मिट्टी और पड़ी नहीं कि वे बाहर हो जायेंगे।

हुआ भी यही। थोड़ी मिट्टी और आयी गधे के बदन पर और गदहा महराज जी ने एक छलांग लगायी और सीधे ही गड्ढे के बाहर – लो मैं आ गया।

डिस्क्लेमर **:** इस बोध कथा का उस देश से कोई लेना देना नहीं है जहां आतंकवाद के, अलगाववाद के, सांप्रदायिकता के, अशिक्षा के, अज्ञानता के, नफरत के, अलां के और फलां के जिंदा मुर्दा दैत्य रोज दफन किये जाते हैं लेकिन दफन होने से पहले ही वे और मजबूती से सिर उठा कर और ताकतवर हो कर सामने आ खड़े होते हैं और चुनौती देते लगते हैं कि ये रहे हम। हमेशा से यही हो रहा है।

जो करना है कर लो।

–9930991424

लघुकथा माला : निःशुल्क प्रकाशन योजना

कोई भी लेखक जो किसी भी भारतीय भाषा में लघुकथा लिखता है वह अपनी अप्रकाशित पांडुलिपि newworldpublication14@gmail.com *पर* ***30 अगस्त 2023*** *तक भेज दे। पांडुलिपि वर्ड फाइल व यूनीकोड फॉन्ट में टाइप होनी चाहिए। साथ ही अपना संक्षिप्त परिचय और एक फोटो भी भेजें। प्रत्येक पुस्तक 128 पेज की होगी।*

30 अगस्त के बाद प्राप्त पांडुलिपि इस योजना में शामिल नहीं की जा सकेगी।

'लघुकथा माला : निःशुल्क प्रकाशन योजना' *की अधिक जानकारी के लिए* ***8750688053*** *(व्हाट्सअप सहित) पर संपर्क करें।*

–(न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन)

विशेष आमंत्रित : राजनारायण बोहरे

देसी बीज

तुमने बताया नहीं घनश्याम, कि 'मैं क्या करूं! क्या सारे बिंड़ा (टंकियां) तुड़वा दूं और यह सारा बीज खत्म कर दूँ।' एक बार फिर अपना सवाल लेकर चाचा मेरे सिर पर सवार थे।

मैंने उन्हें फिर समझाया, 'देखो चाचा हम गांव वाले हैं, जब खेत में बीज बोते हैं तो यह ठीक से जानना चाहते हैं कि हमारी जमीन के हिसाब से बीज मुफीद पड़ेगा या नहीं।'

'वही तो मैं कह रहा हूं!' चाचा बोले

'पिछले पाँच साल से मेरा बीज अपनी टंकियों में रखा सड़ रहा है और पूरा गांव गांव बाजार से नई-नई कंपनियों के जाने कैसे-कैसे बीज लेकर आ जाता है जिसका फल भुगत भी रहै हैं, कई खेतों में तो बंजर जैसी हालत हो गयी है। विदेशी जमीन के बीज हमारे खेतों में पनप ही नहीं पा रहे हैं।'

'विदेशी बीज इतनी तरह के कहाँ होंगे?'

'हां वही तो मैं कह रहा हूं, मैंने धान के बीज दस तरह के, गेहूं पाँच तरह के, ज्वार तीन तरह की और चना का तो आठ तरह का बीज संभाल कर रखा हुआ है, लेकिन अब लगता है, मुझे खत्म ही करना पड़ेगा।'

हालांकि मेरे मन में यही उत्तर आया था कि 'हां चाचा अब इन देशी बीजों का और अलग-अलग तरह प्रजाति के बीजों का हमारे किसान को कोई महत्व नहीं रह गया है, वह तो विदेशी कंपनी का बीज लाकर खेतों में फेंक देता है फिर विदेशी ही खाद उन पर डालता है, चाहे हमारे खेतों में वह विदेशी चीजें सूट करें या ना करें लेकिन वह देसी बीज नहीं लेता है।' फिर भी मैंने चाचा का मन समझाते हुए कहा 'देखो चाचा आशा से आसमान टिका है, इस साल और आजमा लेते हैं अगर बीज ठिकाने लग गया, तो अच्छी बात है,नहीं तो टंकी तोड़ कर सारा बीज बाजार में बेच देना!'

मेरी बात पूरी भी नहीं हुई थी कि गांव के पटेल सुल्तान सिंह हमारी बैठक में दाखिल हुए। मेरी बात सुनते सुनते वे बोले 'अरे क्यों बेच देना, इसी साल बीज चाहिए गांव भर को। अभी चौपाल पर सब लोग यही बात कर रहे थे। इस समय लॉकडाउन लगा है तो कोई कहीं नहीं जा रहा, अब यहां कंपनी के बीज कहां से आएंगे? सो आपके ही बीज लेंगे सब लोग और यह आप पर कोई एहसान नहीं है बल्कि हम अपने बीजों की रखवाली कर रहे हैं अगली पीढ़ी के लिए!'

पटेल साहब की बात सुनकर चाचा बहुत खुश हुए वे अपने मकान के पीछे के खोड़ा में चले गए और एक एक टंकी पर ऐसे हाथ फेरने लगे मानो कोई पिता अपने बच्चों को दुलार रहा हो।

ठसकदार

'सुनो! आज यह तीन बोरा टमाटर लेकर मंडी मत जाना, नहीं तो वही एक सौ रुपया कुंटल का दाम मिलेगा। कल की तरह किसी हाथ ठेला वाले के साथ गली-गली जाकर बेच देना जिससे हजार रुपया कमा लोगे।' अपनी मोटरसाइकिल पर बोरे बांध रहे बालकिशन को उसकी पत्नी रति ने समझाया।

बालकिशन बोला 'मुझसे नहीं होता हल्के और फर्जी काम।'

'राम राम! अरे तुम्हें हल्के और फर्जी काम क्यों लगा घर घर जाके माल बेचना?' रति हैरान थी।

'हल्का तो इसलिए कि गली गली भिखारियों की नाई आवाज लगाते फिर ना पड़ता है। फर्जी इसलिए कि कच्चे पीले और छोटे बेस्वाद टमाटर को लाल स्वादिष्ट टमाटर बता कर बेचना पड़ता है।'

रति अपना माथा ठोकते हुए बोली 'आपके जैसा झूठी ठसक वाला आदमी नहीं देखा। अरे भले आदमी कभी टेलीविजन भी देख लिया करो,जहां अच्छी खराब किसम-किसम की लाखों चीजें बेचने के लिए हमारे मुल्क के बड़े-बड़े फिल्मी सितारे और खिलाड़ी रात दिन चिल्लाते रहते हैं।'

'वे यह नाटक कर लेते होंगे भगवान, लेकिन हम जैसे किसान से ऐसे नाटक नहीं हो पाते।' कहते बाल किशन ने मोटरसाइकिल को स्टार्ट करने के लिए जोर से किक मार दी।

चुनाव

लीला अपने पति के साथ उनके कहने पर कचहरी में आयी थी। उसके पति चौधरी धनपत ने उससे कुछ कागजों पर अंगूठे के निशान लगवाये और उसे सामने खाली पड़ी बैन्च पर बैठने को कह कर निर्वाचन अधिकारी के कमरे में चला गया था।

निर्वाचन अधिकारी ठाकुर मैडम ने सरपंच का फॉर्म लेकर खड़े चौधरी धनपत से कहा कि यह सीट तो महिला के लिए आरक्षित है, फिर आप क्यों जमा कर रहे हैं फार्म? उस महिला को सामने लाइये जिसका फॉर्म भर रहे हैं।

मैडम माफ कीजिये, चुनाव लड़ने वाली मेरी वाइफ लीला है, देखिये बाहर वो घूंघट किए बैठी है न, वही। वह बाहर के काम जानती नहीं, सो मैं यह फॉर्म लेकर आ गया हूं। झिझकता हुआ चौधरी धनपत बोला तो निर्वाचन अधिकारी ने कहा- यहां तो मैं भी महिला भी बैठी हूं, मुझसे उन्हें क्या झिझक होगी भाई। जाओ, उन्हें ही भेजो।

धनपत ने वहीं से इशारा किया तो लीला उठ कर भीतर आ गयी। ठाकुर

मैडम बोलीं - चौधरी जी अब आप बाहर जाइये।

शर्मिन्दा सा होकर धनपत बाहर चला गया तो ठाकुर मैडम बोली- अपना घूंघट हटाइये।

लीला झिझकी तो ठाकुर मैडम खुद उठी और लीला का घूंघट हटा दिया। सहसा चारों ओर से गहरा उजाला आता तो दिखा, लेकिन लाज के कारण लीला की नजरें जमीन पर थी।

ठाकुर मैडम ने उसे टोका- आप दिखने में तो कितनी स्मार्ट दिखती हैं, लेकिन बिलकुल निरक्षर हैं क्या?

लीला धीमी आवाज में हिचकते हुए बोली- न जी मैं तो बी ए पास हूं।

अरे फिर अंगूठा क्यों लगाया? लो मेरा पेन लो दस्तखत करो। तुम्हें पता है कि तुम्हारा पति तुम्हें चुनाव में खड़ा कर रहा है, कल सरपंच बन गयी तो वहां भी तुमसे अंगूठा लगवा कर जाने कितने उल्टे सीधे काम करेगा।

पर्दे के बाहर से झांकते धनपत को देख कर ठाकुर मैडम ने उसे भीतर आने का इशारा किया तो वह उमगता हुआ भीतर आ गया। मैडम ने झल्लाते हुए कहा -ये लड़की तो बी ए तक पढ़ी हुई है। आप इससे निरक्षरों की तरह अंगूठा क्यों लगवा रहे थे? बड़े सयाने दिखते हैं। आप कहां तक पढ़े लिखे हैं?

बगलें झांकता हुआ धनपत बोला- हम ठाकुरों में बइयर बानियां कित्ती भी पढ़ जावें, अंगूठा टेक ही मानी जावें है मैडम जी। इस बी ए पास लीला से तो मैं इंटर पास मानुस ज्यादा होशियार हूं।

बदमाशी को होशियारी कहते हो? ठाकुर मैडम के भीतर बैठा हुआ मजिस्ट्रेट अपनी चुनाव अधिकारी की पदवी भूल कर बाहर आ गया और वह ऐंठ कर बोली- अभी अंदर करा दूंगी तुम्हारी इस होशियारी पर, इतनी पढ़ी लिखी पत्नी है और उसे बिना पढ़ी बताते हो। आज से इसको सम्मान देना सीखो, और सुन लो अगर यह चुनाव जीत गयी तो सारे काम यही करेगी। ऐसा न हो कि पंचायत की बैठक में यह घूंघट डाल के बैठे और इसके नाम से सारे काम तुम करते रहो। तुम्हें पता होगा कि तुम्हारी जनपद पंचायत की सी ई ओ मैं ही रहूंगी।

ठाकुर मैडम के कमरे से बाहर निकलते ही धनपत ने पहली बार लीला के साथ बहुत सम्मान से बात करना शुरू कर दिया था और अब भी उसका वही व्यवहार था तो लीला को अपने दस साल के वैवाहिक जीवन में पहली बार वह दिन देखने को मिला था जब जीप में बैठते समय धनपत ने कहा था कि क्यों घूंघट लटकाये बैठी हो? सुना नहीं मैडम ने क्या कहा था? हटा लो घूंघट। जब एक बार हट गया तो सदा के लिए हट गया। यह साला चुनाव भी क्या क्या करवाता है।”

गांव के रास्ते पर बढ़ रही लीला और धनपत दोनों के कान में ठाकुर मैडम

की आवाज गूंज रही थी। दोनों सोच रहे थे कि आज तो जो होना था सो हुआ, कल से इस का क्या होगा? पर्दे और लाज लिहाज से दोनों का मतलब था एक ही तो था स्त्री का अंधेरे में कैद रहना। आगे देखो चुनाव क्या क्या करवाता है?

दुख का विस्तार

चलो जी अब हम सब किचन से बाहर चलती हैं, अब उपमा आ गयी वे ही नये नये तरह के व्यंजन बनायेंगी। उपमा को देखते ही उसकी जेठानी और देवरानी किचेन में बाहर होने लगी तो सास ने रोका- अरे, वो शहर से अभी तो यहां पहुंची है, दो घड़ी आराम कर लेने दो, उसे चाय वाय तो पिलाओ, फिर वह भी किचने में ही तुम लोगों के साथ रहेगी।

ऐसा सदा ही होता था। जब भी घर की सब स्त्रियां इकट्ठा होती, उपमा सबकी जलन का केन्द्र होती। जेठानी देवरानी एक ही बात कहती है कि उपमा सबसे सुखी है जो घर की कैद से सुबह सात बजे छूटती है तो सांझ तीन बजे ही लौटती है। हम तो हमेशा घर के कोल्हू में जुते रहते हैं। क्या रात और क्या दिन? उपमा मुस्काती हुई सबकी बातें सुनती रहती है।

वह सास के पास बैठ कर घड़ी भर को सांस ही ले पायी थी कि चाय का कप सामने रख कर देवरानी बोली- दूर रहती हो तो सास की लाडली हो। लेकिन अब आ गयी हो तो सब आप ही संभालोगी जीजी।

संभाल लूंगी री, काहे चिन्ता करती है, उपमा ने मुस्करा कर देवरानी को जवाब दिया - वहां शहर में तो नौकरी और घर का काम दोनों मोर्चे संभालना पड़ता है यहां नौकरी से तो मुक्ति है, रह गया किचेन का काम तो, बहना औरत को इस मुझे किचेन के काम से कहीं मुक्ति न है, असली कोल्हू तो यही बदा है हम औरतों की किस्मत में, सो अस या बस करना ही है।

अरे दैया जीजी, तो क्या कोई महराजिन नहीं लगा रखी क्या रोटी पानी को? दो जगह के काम में तो बहुत सुबह से संजा तक बहुत थक जाती होगी

उपमा मुस्करायी- बर्तन भांड़े मांजने को तो सबके घर में बाइयें काम करती लेकिन रोटी पानी तो हर मर्द को अपनी पत्नी का ही अच्छा लगे हैं, सो मुश्किल है कि सौ घर में से एक घर में महाराजिन लगती हो। तुम लोगों को लगता है कि काम वाली औरतें खुश रहती, लेकिन तुम नहीं जानती हो कि वे तुमसे ज्यादा दुखी हैं। तुम्हारे तो केवल एक ससुराल वाले ही ऐंठते हैं, हमारे ऊपर तो दो दो ससुराल रहती हैं, यहां की ससुराल के अलावा हमारे जितने भी अफसर हैं वे सब के सब ससुरालियों से ज्यादा नखरे दिखाते और ऐंठते हैं, सो वहां भी हम कोल्हू की तरह जुती रहती हैं और घर लौट कर भी वही किस्सा होता है।

अपने दर्द को अब तक दबाती रही उपमा ने इस बार देवरानी के बहाने से

सबको बताया तो क्षण भर में ही वह सबकी सहानुभूति का केंद्र बन गयी, लग रहा था कि उपमा ने यह बात कहके अपने दुख का विस्तार कर दिया है जिसके कुहासे में न केवल सास, बल्कि देवरानी जेठानी भी डूबने लगी थी। घण्टे भर में ही उसे पता लग गया कि जेठानी और देवरानी भी बहन हो सकती हैं, दोनों ने उसे हथेलियों पर रखा। उसे बड़ा दुख हुआ कि अब तक उसने अपना दर्द इन लोगों से साझा क्यों न किया।

–9826689939

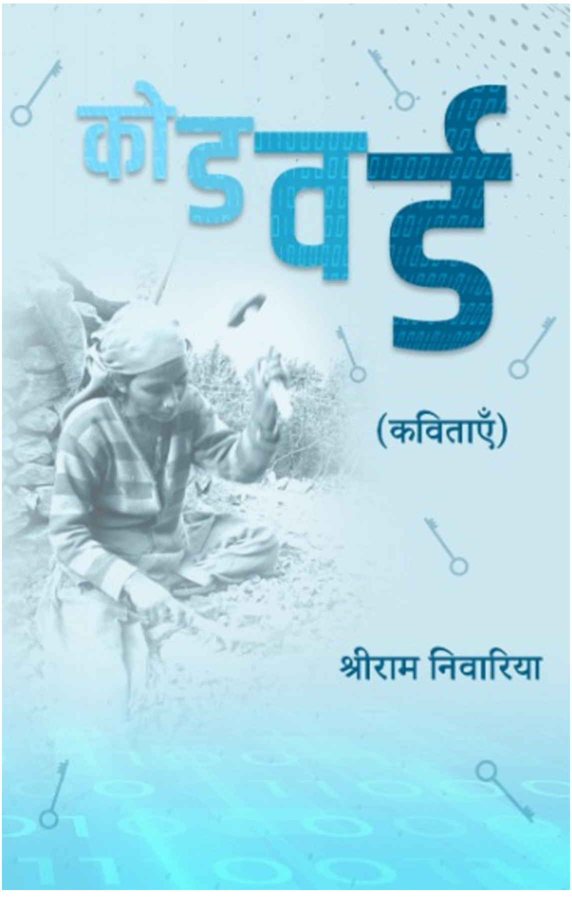

कमल चोपड़ा

तंत्र

बाजार में बंद पड़ी एक दुकान के फट्‌टे पर चढ़कर एक युवक बोलने लगा- "खल्क-खुदा की। हुक्म बादशाह का। तंत्र प्रजा का। वेश फकीर का। चेहरा प्रधान का। चरित्र तानाशाह का। इच्छा पूंजी नाथ की। इशारे कम्पनियों के। खून हमारा। पसीना हमारा। मेहनत हमारी। शक्ति हमारी। सत्ता उनकी। पावर उनकी। मल्कियत उनकी। पहाड़ उनके। जमीन उनकी। इमारतें उनकी। कारखाने उनके। माइन्स उनकी। खजाने उनके। अफसर उनके। सिपाई उनके। डंडे उनके। मुल्क हमारा। भूख हमारी। बेरोजगारी हमारी। अभाव हमारे। कंगाली हमारी। विवशता हमारी। फिर भी हमारा राज। हमारे द्वारा, हमारे लिए। वह जो दिये थे तुमने अपने हाथ काटकर। वही जो दिया था वोट। अब भुगतो...। बनाया सेवक? हुआ कब्जा? हमने पाला हमीं को भौं-भौं। हमारी जूती....। हमारे डन्डे। हमारे सर।"

राज है जिसका वह राजा है भूखा। राजा है नंगा। राजा है बेघर। मांगेगा जो रोटी कपड़ा और रोजगार। माना जायेगा उसे गद्दार। गद्दी पर है चौकीदार। उसे हासिल है सेठ का दुलार। करवाये प्रचार। समझे सिर्फ सेठ का अधिकार। उसे पसंद नहीं चींख पुकार। करेगा जो हाहाकार होगी आंसू गैस लाठीचार्ज और गोलियों की बौछार। करो जय-जय कार, बार-बार, हर बार। यही सरकार। यही सरकार। ये नहीं तो वो सरकार वो नहीं तो ये सरकार। करो जय-जय कार। करो जय-जय कार।

बाअदब-बामुलाहिजा होश्यार। होश्यार। बनो होश्यार। रहो होश्यार। रहो होश्यार।

"यह है जुमले बाजी। अच्छे-अच्छे बोल-ढोल की पोल। कट गये हैं हाथ बाकी है जान। सलामत है जुबान। करेगी जमीनी हकीकत बयान। सुनेगा जहान करता रहा मेरा दादा उम्र भर घाटे का सौदा। उगाता रहा अनाज। नहीं की थी उसने आत्महत्या। सरकारी नीतियों, लालों-दलालों ने की थी उसकी हत्या। कम्पनी को चाहिए थी हमारी जमीन। सरकार ने हमारी जमीन अधिाग्रहण करके दे दी कम्पनी को। मेरे पिता बैठे विरोधा में धारने पर। विरोधा में खानी पड़ी उन्हें गोली।

जिन्हें हमने बिठाया सिर पर। उन्होंने मारी गोली आंसू गैस और डन्डे। कैसे हमारा राज? हमारे द्वारा? हमारे लिए?"

वहाँ जुट आये कुछ लोगों ने उसे पकड़ लिया। हमारे बादशाह को झूठा कहता है। मारो साले को। भीड़ ने मार-मार कर उसे अधामरा कर दिया। वह नीचे गिर कर बेहोश हो गया।

भीड़ में से एक बुजुर्ग महिला ने आगे आकर कहा, "मत मारो बेचारे को। बेचारा अपना मानसिक संतुलन खो चुका है। इसकी मां ने लोगों के घर बर्तन मांज-मांज कर और कुछ इधर-उधर से कर्जा लेकर इसे उच्च शिक्षा दिलाई।

लेकिन नौकरी नहीं लग पाई। सरकार ने कहा पूड़ी-पकौड़े की रेहड़ी लगाओ। इसने इधर-उधर से कर्ज लेकर पकौड़े की रेहड़ी लगाई। एक दिन कमेटी वाले आये और इसके बर्तन रेहड़ी गाड़ी में लादकर ले गये। यह छुड़वाने गया तो उन्होंने पाँच हजार का चालान या चार हजार रिश्वत भरने को कहा। कहाँ से देता? कोई चारा नहीं था इसके पास। यह जाकर बेरोजगारों के धरने जुलूस में शामिल हो गया। फिर पुलिस का एक डन्डा इसके सिर पर लगा और यह तब से अपना मानसिक संतुलन खो बैठा है। कहता है राज मेरा है। मेरे द्वारा है। मेरे लिए है फिर भी...?"

दंभ

वह अपनी पत्नी के सामने छोटा, दीन-हीन और कमजोर नहीं पड़ना चाहता था। पत्नी रश्मिका से खाना लेते वक्त करण ने देखा था उसकी आंखों से आंसू ढुलक रहे थे। उसे देखकर सहानुभूति का ग्लेशियर उसके अंदर भी पिघला था। पर उसे याद आया कि वह तो पुरुष है। जरूरत से ज्यादा कड़क होते हुए उसने पूछा किसका मातम मना रही हो?"

"दो-तीन बार पहले भी बता चुकी हूं कि मुझे ऑफिस में साथ काम करने वाले पुरुषों की गंदी नजरें और बॉस की गंदी नीयत का शिकार बनना पड़ रहा है। मैं नौकरी छोड़ना चाहती हूँ।"

गुस्से में वह फट पड़ा "घर की हालत तुम्हें पता है। इन दिनों में नौकरी कर नहीं रहा हूं। बच्चे की फीसें, काम वाली बाई के पैसे, कार, फ्रिज, एसी, फ्लैट की किश्तें। किश्तें टाइम पर न दी गई तो रिकवरी वाले गुंडे आकर परेशान करेंगे। आस-पड़ोस रिश्तेदारी में क्या इज्जत रह जाएगी?"

वह झुंझलाई-इज्जत की बात करते हो? पत्नी की इज्जत खतरे में है और तुम्हें पैसे की पड़ी है?" उसकी पत्नी जैसे उसकी मर्दानगी को ललकार रही है। गुस्से में उसने खींच कर एक थप्पड़ रश्मिका को दे मारा। वह रोती हुई रसोई की तरफ चली गई। उस दिन उसे पत्नी पर हाथ उठाने की अपनी ज्यादती पर पश्चाताप हुआ था और रात भर वह सो नहीं पाया था। अगले दिन सुबह उठकर रोज की तरह रश्मिका घर का काम निपटा कर ऑफिस चली गई थी। कितनी सहनशक्ति होती है औरत में! वह हैरान था। पहले वह आठ लाख के पैकेज पर काम कर रहा था और पत्नी छह लाख पर। अब इधर बढ़िया नौकरी मिल नहीं रही थी और छोटी मामूली वह करना नहीं चाह रहा था। उसे पाँच लाख के पैकेज का ऑफर मिल रहा था पर पत्नी के छह लाख के सामने वह इन्फीरियर पड़ने को तैयार नहीं हो पा रहा था। रश्मिका से वह ज्यादा पढ़ा लिखा है। उसे देर सबेर बढ़िया नौकरी मिल ही जायेगी। बात-बेबात वह रश्मिका को डांटता-झाड़ता रहता ताकि उसे अहंकार न हो जाये कि इन दिनों घर उसी की तनख्वाह से चल रहा है। कई

बार उसे अहसास होता कि घर और ऑफिस दोनों जगह उसकी पत्नी के साथ ज्यादती हो रही है। लेकिन उसे लगता कि वह मर्द है। इसलिए उसे पत्नी को दबाकर ही रखना चाहिए, ताकि वह उसके सिर पर न चढ़ जाये। इज्जत पर खतरे वाली बात उसकी मर्दानगी को धिक्कारती पर वह अपनी विवशता को और भी भयानक और विकराल बनाकर देखने लगता। अपना शिकंजा कसे रखने के लिए वह हर दो-तीन दिन बाद रश्मिका का मोबाइल चेक करता रहता।

आज ऑफिस से आने के बाद पत्नी वॉशरूम गई हुई थी कि उसने उसका मोबाइल चेक करना शुरू किया। ऐसा-वैसा तो कुछ नहीं मिला पर एक मैसेज टाइप किया हुआ मिला। जोकि अभी तक किसी को भेजा नहीं गया था। लिखा था घर और ऑफिस दोनों जगह से प्रताड़ित होने के कारण बुरी तरह टूट चुकी हूं। इसलिए आत्महत्या कर रही हूँ। इसके लिए दोषी तो सभी है पर किसी को भी परेशान न किया जाये।

कांप कर रह गया। वह वॉशरूम की तरफ लपका। कुछ ही क्षणों में क्या कुछ बीत गया उस पर। पत्नी वॉशरूम से सलामत बाहर निकली तो उसकी जान में जान आई। मोबाइल दिखाते हुए उसने कहा, ''यह क्या है?''

''कमजोर क्षणों में मैंने लिख दिया था।''

''इसी वक्त रिजाइन लिख। कल से तू ऑफिस नहीं जायेगी।''

ऑफिस में रिजाइन तो मैंने कल ही दे दिया है। आज तो मैं दूसरी जगह इंटरव्यू के लिए गई थी। और आप भी कहीं छोटी-मोटी नौकरी मत पकड़ना।

बढ़िया पैकेज मिले तभी एक्सेप्ट करना। मैं नहीं चाहती आपको कभी इन्फीरियरटी का अहसास हो.....।

आधुनिक

''तनाव की बदरंग परतों से लिथड़े हुए दोनों के चेहरे बेतरह सुलग रहे थे।''

''ऐसा नहीं होना चाहिए था।''

''पुरुष के अंदर का पशु तो बेलगाम होता है। तुम्हें रोकना चाहिए था?''

मर्यादा का ख्याल....?''

मैंने कितना तो मना किया था। तुम ही जबरदस्ती मर्यादा की कंटीली हद के इस पार आये।''

दोनों के मां-बाप को उनके घूमने-फिरने और मिलने में कोई ऐतराज नहीं था पर हर हाल में हद में रहने की हिदायत वे देते रहते। दोनों की मंगनी मां-बाप की मर्जी से हुई थी।

यू.एस. से मनिंदर सिंह इंडियन लड़की से शादी करने के लिए ही इंडिया आया हुआ था। जसलीन से उसकी मंगनी भी तय हो गई थी। शादी को अभी तीन महीने शेष थे। दोनों हर दूसरे-तीसरे दिन कभी मॉल तो कभी सिनेमा घूमने-फिरने

लगे थे। मनिंदर के साथ जसलीन पूरी मॉडर्न बनने की कोशिश करती ताकि वह उसे गंवार उजड्ड ना समझे। मॉडर्न बनने और फॉरेन रिटर्नड मंगेतर का साथ देने के लिए जसलीन को दो-एक बार वाइन भी गटकनी पड़ी। उस दिन जब दोनों एक दूसरे की आंखों में खोये हुए थे, मनिंदर को एकदम बेसब्र, बेचैन, बेताब और बेकाबू सा पाकर जसलीन को हंसी आ गई। "क्या हो रहा है आपको?'' उसकी हंसी ने मनिंदर की हिम्मत को और बढ़ा दिया और वह आगे बढ़ गया। जसलीन ने बहुत रोका, ''शादी से पहले यह सब नहीं?''

''क्या गंवार पेण्डुओं वाली बात कर रही हो?''

जसलीन ने पूरी ताकत से विरोध किया। वह पुराने परंपराओं, संस्कारों, मूल्यों और मान्यताओं की बातें कहती रह गई पर मनिंदर ने एक नहीं सुनी। उसने सभी हदें जबरदस्ती पार कर दी। इस बार जसलीन मिली तो बोली, ''इस महीने पन्द्रह दिन ऊपर हो गये हैं। मुझे पीरियड्स नहीं हुए हैं। मैंने यूरिन टेस्ट करके देखा है। पॉजिटिव आया है।''

वह उल्टा उसी की गलती बताने लगा।

पहले जसलीन संस्कारों, मूल्यों, मान्यताओं की बात करती रही थी। अब संस्कारों और मर्यादा की बात मनिंदर कर रहा था। वह उसे डांटने लगा था। तुझे मुझसे बचना चाहिए था। गलती तूने की है।

गीेंली आंखों और भर्राये गले से जसलीन ने कहा, ''वैसे चलो गलती तो दोनों की है। पर अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा। शादी को अब तो एक ही महीना रह गया है। शादी के आठ महीने बाद भी डिलीवरी हुई तो किसको पता कब क्या हुआ था?

दोनों काफी देर चुप बैठे रहे थे। फिर अपने-अपने घर लौट आये थे।

आज अचानक जसलीन को मोबाइल पर मैसेज मिला अब यह शादी नहीं हो सकती।

कंपनी ने मुझे तुरंत वापिस बुलाया है। टिकट कन्फर्म होते ही दो-एक दिन में यू.एस. लौट जाऊंगा। गुड बाय।

वह एकाएक जैसे आग की लपटों से घिर गई।, ''ऐसे-कैसे कर सकता है वह? गलती उसकी है, सजा मैं भोगू? अब क्या मैं आत्महत्या कर लूं? मैं इतनी भी उजड्ड गंवार नहीं। मुझे तुरन्त कुछ निर्णय लेना होगा।'' और उसी शाम जब मनिंदर अपने घर से कहीं जाने के लिए बाहर निकल रहा था कि पुलिस ने आकर उसे धर दबोचा। वह फड़फड़ाया, ''मैंने क्या किया है?''

''आप पर जसलीन ने धोखा-धड़ी और रेप का इल्जाम लगाया है।''

-9999945679,

हरभगवान चावला

इबादत (आजादी-1)

सत्ता और धर्म दाएँ तथा बाएँ पंजों की तरह थे। प्रजा दोनों हथेलियों के चंगुल में फँसी थी। ऐसे लोगों की कमी नहीं थी जो हथेलियों की हर उँगली की जुंबिश को पहचानते थे और उन्होंने स्वयं को इसके अनुकूल बना लिया था। ऐसे भी थे, जिन्हें चंगुल की आदत हो गई थी और अब वे इसके बिना रह नहीं सकते थे, पर बहुतायत उन लोगों की थी जो चंगुल से छूटकर अपनी जिंदगी अपने तरीके से जीना चाहते थे। औरतों के एक बड़े हिस्से ने इस चंगुल को झटका दिया और ऐलान कर दिया कि बस बहुत हो गया, तुम्हारे बनाए कानून हमें मंजूर नहीं। सबसे पहले उन्होंने अपने लिए तय किए गए लिबास को तिलांजलि दी और बिना पर्दे के सड़कों पर उतर पड़ीं। वे नारे लगा रही थीं और सत्ता ने 'विद्रोह' को दबाने के लिए सिपाही सड़क पर उतार दिए। सत्ता ने कहा – औरतों का यह सुलूक ऊपर वाले की बेअदबी है।

औरतों ने कहा– आजादी ऊपर वाले की इबादत है।

ऊपर वाले ने कहा– इबादत का यह नायाब तरीका मुझे पसंद आया।

मुस्कान (आजादी-2)

औरतों की आजादी की लड़ाई में बहुत से मर्द शामिल थे। सिपाही पैलेट गन से छर्रे दाग रहे थे। इन छर्रों ने एक लड़के की दोनों आँखें छीन लीं। वह अंधा हो गया था, फिर भी आजादी के लिए हो रहे प्रदर्शनों में शामिल था। एक प्रदर्शन के दौरान वह पत्थर पर खड़ा नारे लगा रहा था कि एक सिपाही ने उसे धक्का दिया, पर जमीन पर गिरने से पहले ही एक लड़की ने उसे थाम लिया। लड़के ने कहा– शुक्रिया। काश, मैं अपने इस मददगार को देख पाता!

– ओह, तुम्हारी आँखें?

– इनकी पैलेट गन ने छीन लीं।

लड़की खामोश हो गई, उसकी आँखों में नमी उतर आई थी। लड़के को चुप्पी बर्दाश्त नहीं हुई, उसने कहा – तुम उदास क्यों हो गई? मुस्कुराओ, तुम्हारी आवाज से अहसास होता है कि तुम्हारी मुस्कान बहुत खूबसूरत है।

– मेरी मुस्कान कैसे देख पाओगे तुम?

– तुम मुस्कुराओ तो, मैं मन की आँखों से देख लूँगा।

– अच्छा! यह तो बताओ कि आँखों को खोने से पहले आखिरी बार तुमने किसकी मुस्कान देखी थी?

– मैंने आखिरी बार उस सिपाही के होठों पर नफरत और जिल्लत भरी मुस्कान देखी थी, जिसने मुझे अंधा किया। वह मुस्कान कभी न भरने वाले जख्म की तरह टीसती है।

– वह नफरत और जिल्लत भरी मुस्कान दरअसल जालिम हुकूमत की थी,

होंठ जरूर सिपाही के थे। वह तो फकत मशीन का पुर्जा है।

लड़का लंबी और अधीर साँसें ले रहा था, उसका चेहरा लाल हो गया था। लड़की ने उसके कंधे पर हाथ रखा, रोई और फिर खुलकर मुस्कुरा दी।

फाँसी (आजादी-3)

फाँसी पर लटकाने के लिए ले जाए जा रहे युवा पहलवान से साथ चल रहे सिपाही ने कहा- भरी जवानी में मर रहे हो, क्या मिला औरतों के लिए प्रदर्शन करके?

- दुनिया भर में आजादी के लिए संघर्ष करते हुए लाखों युवाओं ने अपने लिए फाँसी का फंदा चुना, उन्हें क्या मिला?

- वे अपने-अपने मुल्कों में शहीद कहलाए। नायक का दर्जा हासिल किया उन्होंने। अपने-अपने मुल्क को गुलामी से आजाद करवाने की कोशिश में गुलाम बनाने वालों के हाथों मारे गए थे वे।

- मैं भी वही कर रहा हूँ, जो शहीद कर रहे थे।

- शहीद और तुम...हा...हा...हा...गद्दार हो तुम!

- सत्ता के गुलाम तब भी शहीदों को गद्दार कहते थे, आज भी यही कहते हैं। गुलामों के पास अपनी सोच कहाँ होती है?

सिर

वक्ता बोल रहा था - पृथ्वीराज चाहता तो संयोगिता को साथ लेकर दिल्ली की तरफ जा सकता था, पर वह चोरों की तरह भागना नहीं चाहता था। उसने कन्नौज में ढिंढोरा पिटवा कर जयचंद को युद्ध के लिए चुनौती दी। जयचंद के पास लाखों की सेना थी और पृथ्वीराज के पास केवल सौ सैनिक सरदार थे। ऐसे में शत्रु के देश में युद्ध के लिए चुनौती देना बहुत बड़ी बात थी। जयचंद की सेना ने पृथ्वीराज के शिविर को घेर लिया। शिविर के भीतर से एक सरदार निकलता और जयचंद की सेना के हजारों सैनिकों की हत्या कर देता। इन सरदारों की बहादुरी शब्दों में बयान नहीं की जा सकती। हजारों को मारने के बाद जब सरदार का सिर कट जाता तो भी कितनी ही देर तक उसका धड़ लड़ता रहता।

- अब आप फेंक रहे हैं महोदय! भला सिर से रहित धड़ कैसे लड़ सकता है? एक श्रोता ने कहा तो वहाँ मौजूद सभी श्रोताओं की गर्दनें सहमति में हिलने लगीं।

वक्ता मुस्कुराया- आपको लगता है बिना सिर के नहीं लड़ा जा सकता। मैं कहता हूँ, लड़ा ही बिना सिर के जाता है। सिर का काम है सोचना। यदि ये लोग सिरों से काम लेने वाले होते तो युद्ध की जरूरत ही नहीं थी। बिना किसी उद्देश्य के, सिर्फ आका के आदेश से मात्र लड़ने के लिए लड़ना- यह केवल धड़ का काम होता है, सिर का नहीं।

-9354545440

निर्देश निधि

चोर कौन

भारतीय सभ्यता संस्कृति से अवगत होने के लिए एक विदेशी यात्री जॉन 14 घंटों की थकान भरी लंबी यात्रा कर भारत आया। हालाकि वो छह फीट चार इंच लंबा हट्टा-कट्टा जवान है पर मैं जानता हूँ कि लंबी हवाई यात्रा हरेक की शक्ति क्षीण करने में माहिर होती हैं, वही जॉन के साथ भी हुआ।

जैसे ही वह प्लेन से उतरा उसने फोन से टैक्सी बुक करनी चाही परंतु पता चला कि फोन का सिम अभी तक काम नहीं कर रहा अत: उसने कैब काउंटर जाकर एक प्रीपेड टैक्सी ले ली। वो हिंदुस्तान कंपनी की एक काली एम्बेसडर कार जिस पर पीली धारियाँ थीं। हालाकि अब कंपनी ने इसका निर्माण बंद कर दिया है फिर भी यह अब तक अपने गौरवपूर्ण दिनों की तरह ही चमचमा रही थी। पाँच फिट सात इंच लंबे सामान्य कद काठी वाले ड्राईवर राम कुमार के चेहरे पर एक विनम्र मुस्कुराहट थी जब वो जॉन का सामान टैक्सी में रख रहा था।

हालाकि उसकी अँग्रेजी भाषा कतई अच्छी नहीं फिर भी वो जॉन की मातृभाषा में बोल कर उसे अपनेपन का आभास कराता है। "व्हेयर टू सर?"

जॉन उसे एक पंचतारा होटल का पता देता है जो एयरपोर्ट से सामान्य ट्रैफिक के चलते लगभग आधे घंटे की दूरी पर था। राम बात छेड़ता है, "यू आर हियर फॉर टूर, सर?"

"येस" छोटा परंतु त्वरित उत्तर दिया जॉन ने, जो राम को थोड़ा नागवार गुजरा क्योंकि राम बातें करने के मूड में आ गया था परंतु जॉन पूरे चौदह घंटे थकाऊ हवाई यात्रा में बिता कर आया था। बाकी रास्ता जॉन ने अपने सिम को चालू करने के प्रयास में और राम ने जॉन की सहूलियत का ध्यान रखते हुए कम आवाज में सत्तर के दशक की बॉलीवुड फिल्मों के गाने सुनते हुए बिताया। वे निर्धारित समय से पाँच मिनिट पहले ही गंतव्य पर पहुँच गए। जॉन जब राम को किराया देने वाला था तो उसने देखा कि उसके पास "कनवरटेड करेंसी" नहीं थी। उसने राम को डॉलर देने की पेशकश की तो उसने खुशी-खुशी स्वीकार कर लिया और होटल से तीस किलोमीटर दूर अपने घर चला गया।

अगले दिन राम ने होटल के रिसैप्शन पर अपने दोस्त से पूछा - डॉलर को रुपये में कैसे बदला जाता है? उसने पास वाले बैंक का पता लिया। पंद्रह मिनिट लाइन में लगे रहने के बाद उसका नंबर आ गया। "कनवर्जन" और दूसरी बातें जान लेने के बाद बैंक-कर्मी विजय ने राम से नोट मांगा।

नोट देखते ही विजय ने बैंक मैनेजर को बुलाया। राम बोला कोई परेशानी है क्या? उसने सोचा शायद नोट नकली है। मैनेजर आया और विजय से कुछ बातें करने के बाद राम से बोला, "कहाँ से चुराया है?" एक ऐसा प्रश्न जिसे राम सोच भी नहीं सकता था। राम नहीं जानता था की जॉन ने गलती से उसे सौ डॉलर का

नोट दे दिया था, जो कि भारतीय रुपयों में छह हजार रुपयों के बराबर था। राम ने बहुत प्रयास किया उन्हें समझाने का कि उसने वो नोट चुराया नहीं है। पर खुद को निर्दोष साबित करने का उसका हर प्रयास निष्फल रहा। उसे बहुत घबराहट हो रही थी। इसलिए नहीं कि उसने सौ डॉलर का नोट चुराया था बल्कि इसलिए कि कोई बेचारा सिर्फ तीस मिनिट के सफर के लिए पूरे छह हजार रुपये दे गया था। उसकी इतनी घबराहट देख कर बैंक मैनेजर ने पुलिस बुला ली थी। राम पुलिस को भी अपना निर्दोष होना साबित करने में नाकाम रहा। एक घंटे की पूछताछ के बाद राम को तो पुलिस ने छोड़ दिया था पर सौ डॉलर के नोट को नहीं।

बेचारा

उनकी बड़ी बहू एक कामकाजी महिला थी। दिन भर ऑफिस, आए दिन कामवाली की छुट्टी, सामंती पति के रुमाल देने से खाना परसने तक के ढेरों काम। उस पर तीन बरस के छोटे से बच्चे की देखभाल। कोई हंसी खेल था क्या? उनकी छोटी बहू पढ़ी-लिखी तो बड़ी बहू से भी अधिक थी पर उसने अपने घर को प्राथमिकता दी थी और अपनी लगी-लगाई सरकारी नौकरी को वह पल में तिलांजलि दे आई थी, सिर्फ यही नहीं किया, उसने सुगृहणी भी बनकर दिखाया। बाहर का काम सिर्फ पति करता वह घर और बच्चों की देखभाल करती, समय पर खाना बनता, खाया जाता, बच्चे स्वस्थ व संतुष्ट रहते।

एक दिन बड़ी बहू छोटी के घर आई। बड़ी का बच्चा कुछ अनमना उदास सा लग रहा था, जबकि छोटी के बच्चे उसका हाथ पकड़-पकड़ कर अपने साथ खेलने का प्यार भरा आग्रह कर रहे थे। छोटी को बच्चे पर लाड़ आया और बोल उठी, "कैसा उदास लग रहा है बेचारा बच्चा..." अभी इतना ही कहा था कि बड़ी वाली उस पर बरस पड़ी, बेचारा कैसे है ये हम भी तो जानें, हम क्या इसका ध्यान नहीं रखते? हम क्या इसके सौतेले हैं जो इसे प्यार नहीं करते? तुम्हारी मजाल कैसे हुई इसे बेचारा कहने की?"

"जीजी मैं तो....." छोटी धीरे से बोली, पर बड़ी ने बीच ही में टोक दिया। "वैसे तुम इसके लिए कर क्या रही हो जो तुम्हें इसे बेचारा पुकारने का हक मिल गया, इसके पास तुम्हारे बच्चों से संख्या और कीमत दोनों में दोगुने खिलौने हैं, दस गुने मंहगे कपड़े हैं। हमने इसे सबसे महंगे क्रच में डाल रखा है, आया रखी है छह हजार रुपए महीने की, एक पल भी वो अकेला नहीं छोड़ती इसे, अच्छे से अच्छा खाना बनाकर खिलाती है अपने हाथों से, क्रच की छुट्टी होने पर जब ये घर लौटता है तो वो इसकी देखभाल सावधानी से करती है, और यह सब कन्फर्म करने के लिए हमने घर के हर कोने में सी सी टी वी कैमरे लगा रखे हैं, समझीं तुम। आई बड़ी बेचारा बोलकर सहानुभूति दिखाने वाली। अब तो छोटी को यकीन हो गया था कि वह नन्हा बच्चा वाकई बहुत बेचारा था।

–9358488084

मैं आश्वस्त हुआ

वह उसे बरसों के बाद मिला था। हमेशा की तरह आज भी वह अपनी शान बघारने से चूका नहीं था। अगर यही शान उसने न बघारी होती तो आज वह उसकी पत्नी होती। हालाँकि उनका बरसों प्रेम चला था, फिर भी उसकी इस लत ने उस प्रेम को दाम्पत्य में बदलने से जबरन रोक दिया था। उसने आर्ट्स में पीएच.डी. किया था जबकि वह एक अच्छे इंजीनियरिंग कॉलेज से इंजीनियर बनकर निकला था। वह विज्ञान विषय को ही संसार का सत्य समझता था जैसे मानवीय संवेदना और अन्य भावनाओं का उसके मस्तिष्क में कोई स्थान ही न था। हर बात पर एक ताना था, हाँ तुम करोगी ही इस तरह की तर्कहीन बात क्योंकि तुमने साइंस तो पढ़ी ही नहीं। आखिर तुम रहीं पढ़-लिखकर भी अनपढ़ ही। प्रेम में साइंस या साहित्य का विचार होता ही कहाँ है जो वह उसे गंभीरता से लेती। आरंभ में तो वह मजाक समझती रही थी। प्रेम के आधिक्य में ध्यान ही नहीं गया कि वह इस कदर बड़बोला है, परंतु धीरे-धीरे सब समझ में आने लगा। पहले वह पिता से जिद कर रही थी उसके साथ ही घर बसाने की, फिर खुद उसने ही मना कर दिया।

बरस अपनी बीतने की पुरानी लत लिए न जाने कितनी बार बीते। उन दोनों के रास्ते कहाँ से मुड़कर कहाँ पहुंचे, दोनों में से किसी ने मुड़कर नहीं देखा। वह अपनी शान बघारने के लिए विदेश चला गया था, देश में उसके स्तर का कोई संस्थान था ही नहीं। इस बीच वह भी जानी-मानी लेखक, शिक्षाविद और भारत सरकार की शिक्षा सलाहकार बन गई थी। इज्जत सम्मान उसके इर्द-गिर्द घूमते थे।

इस बरस कॉलेज के शताब्दी वर्ष पर सभी पुराने छात्र-छात्राओं को बुलाया गया था वह तो आई ही थी, वह भी विदेश से आया था। इस बार एक-दूसरे से बिल्कुल नया परिचय हो रहा था। वह अपनी वही शान बघार रहा था। वह चुपचाप सुन रही थी, कि विदेश में उसने क्या-क्या असेट बनाए, वह कहाँ-कहाँ पूजा गया, किस-किस ने, कब-कब उसका लोहा माना। वह यह सब बता रहा था, यही सोचकर कि वह तो अभी भी उसी कुएं में घूम रही होगी मेंढकी की तरह गोल-गोल या इस दीवार से उस दीवार तक। जो वह सोच रहा था वही शब्दों में कहने के लिए उतावला हुआ जा रहा था। इसी धुन में उसने थोड़ा ज्यादा ही हिल-डुल कर पूछा था कि और तुम कहो अपनी, किसकी गृहस्थी संभाल रही हो, किसके बच्चे पाल रही हो?' इस बेहूदे प्रश्न का उत्तर देने का मन नहीं हुआ था उसका। साथ खड़े सहपाठी ने बताया था उसका वर्तमान परिचय। एक पल को वह खिसियाया हुआ चुप ही रह गया था। पर वह तो जैसे चुप रह जाने के लिए बना नहीं था, बहुत शान से बोला था कि, मैं आश्वस्त हुआ कि मैंने किसी साधारण लड़की से प्रेम नहीं किया था...

बलराम अग्रवाल

तीन वेताल कथाएँ

कोउ नृप होय...

"अच्छा, एक बात बताओ वेताल..." विक्रम ने चलते-चलते पूछा।

"क्या?"

"धमकीभरा सवाल पूछने की लत तुम्हें कब और कैसे लगी?"

"मैं और धमकी?" वेताल सोचने-सा लगा; कुछ देर सोचने के बाद बोला, "पहली बात तो यह कि तुमसे पहले मेरी बात किसी अन्य शख्स से कभी हुई ही नहीं! दूसरी यह कि तुम्हें भी धमकी तो मैंने कभी दी ही नहीं!"

"भूल रहे हो कि..." विक्रम ने शिकायती-स्वर में कहा, "पहले ही दिन तुमने धमका दिया था कि- तुम्हारे सवाल का यदि जान-बूझकर जवाब नहीं दूँगा तो मेरा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

यह सुनते ही वेताल जोर का ठहाका लगा उठा, "कोउ नृप होय, हमें का हानी-वाले निष्क्रिय बुद्धिजीवियों से यह देश अटा पड़ा है राजन साफ बोलने का अवसर आए तो मुँह में दही जमा बैठने में ही वे अपनी सुरक्षा और बड़प्पन देखते हैं। ऐसे लोगों का सिर टुकड़े-टुकड़े देखने की इच्छा में क्या बुराई है, बताइए?"

नरवाहन

"जीवित रहते मैं एक बड़े लोकतन्त्र का शासक था।" वेताल ने बोलना शुरू किया, "अनेक वर्षों तक जनता के सिरों पर नाचता रहा।"

"फिर!"

"फिर, मेरे मन में एक इच्छा जागी कि लोकतन्त्र हो या राजतन्त्र, जनता तो कमजोर और बेबस ही रहती है। अब किसी राजा पर सवारी गाँठनी चाहिए। तुम्हें शायद विश्वास न हो कि इस इच्छा के अगले दिन ही मेरी हत्या हो गयी।"

"ओह!"

"अफसोस मेरी हत्या पर नहीं, उस इच्छा पर करो जिसे साक्षात् देखने के लिए मुझे अपनी हत्या से गुजरना पड़ा।"

"मतलब?"

"जीवित रहते किसी राजा पर नहीं लद सका था, लेकिन...।"

"हे भगवान!" तात्पर्य समझकर विक्रम के मुँह से निकला।

"दुआ करो, जीते-जी किसी पर लदने की इच्छा कभी भी तुम्हारे मन में न जागे!" वेताल ने कहा और उड़ गया।

पालनहार

"राजन, क्या तुमने उज्जयिनी का नाम सुना है?"

"लो सुनो, मैं राजा हूँ वहाँ का; मैंने उसका नाम नहीं सुना!"

"अच्छा-अच्छा। यह बात दरअसल मेरे जेहन से उतर ही गयी थी। चलो, यह बताओ कि उज्जयिनी में सबसे प्रभावशाली इंसान कौन है?"

"बेशक मैं।"

"और ताकतवर?"

"वह भी मैं।"

"सबसे धनी व्यक्ति कौन है?"

"मैं ही हूँ।"

"और निर्धनतम यानी कंगाल?"

"..."

"इसका जवाब तुम्हारे पास नहीं है। तुम्हें मैं उस आदमी के पास ले चलता हूँ, जिसके पास इस आखिरी सवाल का भी जवाब है। तुम बस इतना करना कि इसी क्रम में उससे सवाल करना।"

इसी के साथ राजा यंत्रचालित-सा मुख्य पगडंडी छोड़ बायीं ओर के ऊबड़-खाबड़ रास्ते पर मुड़ लिया। चलता गया, चलता गया। सामने, सिर पर लाल गमछा बाँधे बूढ़ा-सा एक व्यक्ति खेत की मेंड़ पर बैठा था। उसके सामने जाकर विक्रम के कदम एकाएक रुक गये।

"नमस्ते! क्या मैं आपसे कुछ बातें कर सकता हूँ?" विक्रम के गले से निकला।

"हाँ-हाँ, क्यों नहीं!" उठकर खड़ा होते हुए बूढ़ा बोला।

"क्या आपने उज्जयिनी का नाम सुना है?"

"आप और हम इस समय उज्जयिनी के सीमावर्ती इलाके में ही खड़े हैं।"

"अच्छा-अच्छा। यह बताओ कि यहाँ का सबसे प्रभावशाली नागरिक कौन है?"

"मैं!" बूढ़े ने बेझिझक कहा।

"ताकतवर?"

"मैं।"

"सबसे धनी व्यक्ति?"

"मैं।"

"और सबसे निर्धन।"

"मैं।"

"धनपति भी तुम, कंगाल भी तुम; यह कैसे हो सकता है?" राजा ने पूछा।

"मैं किसान हूँ महाशय।" बूढ़ा सपाट स्वर में बोला, "राजा मुझे नहीं, मैं राजा

को अन्न देता हूँ; लेकिन बदकिस्मती देखिए कि खेतों को जिंदा रखने के लिए साल-दर-साल इस-उस के आगे हाथ पसारते जिंदगी गुजारता हूँ!"

"चाहो तो इससे आगे भी बातचीत जारी रख सकते हो राजन्।" वेताल विक्रम के कान में फुसफुसाया और चला गया।

–8826499115

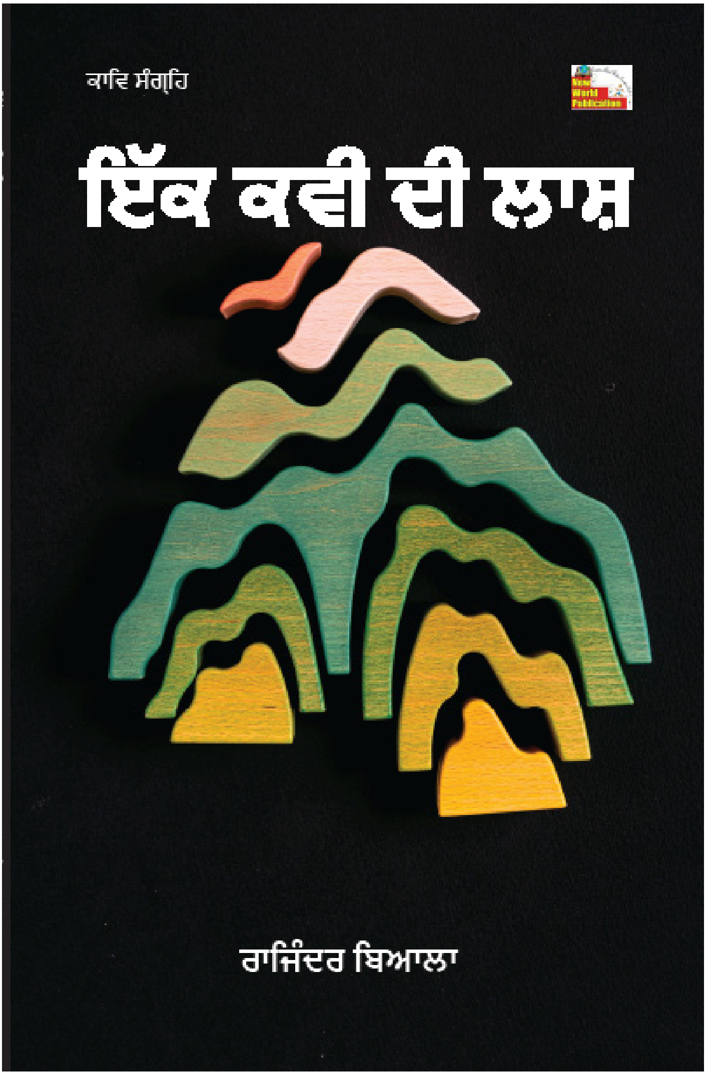

चैतन्य त्रिवेदी

कल दूसरे आएँगे

वह चोर था। उस रात भी काम पर था। उस रात उसके हाथ कुछ नहीं लगा। आखिर एक कच्चे से मकान में कुछ टटोलते-टटोलते कोने में रखी लाठी फर्श पर आ गिरी। गिरने की आवाज सुन कुछ हलचल हो इसके पहले वह लाठी साइकिल पर बाँध चल देता है। एक आदमी ने जो बाहर ठेले पर लेटा जाग रहा था, उसे चुपचाप जाते देख टोक दिया ''भई चौकीदार हो तो सीटी भी तो बजाओ। कुछ बोलो भी", उसने दो-चार सीटियाँ मारी और लाठी ठपकारते हुए चिल्ला पड़ा ''भागते रहो।''

क्या बोल रहा है ये 'भागते रहो।'

अरे नहीं तो, आप उनींदे से हैं, बराबर सुना नहीं मैंने कहा ''जागते रहो।''

हाँ, जरा साफ-साफ चिल्ला!

सीटी की आवाज सुन उसके दो-तीन साथी भी एक धुंधली रोशनी की जगह आ मिले! ''यार सीटियाँ क्यों मार रहा था? कोई खतरा है क्या!''

'अरे क्या बताऊँ', और उसने पूरा किस्सा बयान किया।

चलो मेरे साथ, दूसरे चोर ने कहा। वे तीनों गाँधी प्रतिमा पर पहुँचे। गाँधीजी के हाथ की लाठी सड़ रही थी। गले में, पिछले साल की माला के फूल कंकालवत् हो चुके थे।

उस चोर ने गले में पड़ी पुरानी माला हटायी और सड़ रही लाठी हटा, उनके हाथ में यह नई लाठी पकड़ा दी।

फिर उन तीनों ने ताली बजायी। तभी उधर से गुजरता सिपाही हँसा, ''अरे बेवकफूो गाँधी जयंती तो कल है।'' उनमें से एक बोला, ''कल दूसरे आएँगें।''

संस्कृति का कोषागार

वह आदमी सहमा-सहमा आया, बोला - ''मुझे कोई लिख रहा है।''

पहली दफा कोई ऐसा आदमी मिला 'जो दिख रहा है' की बजाय कह रहा है, 'मुझे कोई लिख रहा है।'

मैंने उसे भरोसा दिलाया, ''डरो मत! वह स्वयं को दुबारा पढ़ना चाहता है।''

''तो मेरे को ही निशाना बना ऐसा क्यों कर रहा है।'' - उस गरीब ने कहा

''अरे घबरा मत! ऐसा करने से उसे आसानी हो जाती है। तुम पर वारे गए सारे सच अपने पर ले लेगा, और खुद पर मढ़े हुए झूठ तुम पर डाल देगा।''

उस गरीब ने कहा - ''यह तो सरासर बेईमानी है। लेखन थोड़े ही है।''

नहीं! यह रचनात्मकता है।''

''आप तो ये बताओ, हमेशा मेरा ही पीछा क्यों करते रहते हैं ये लोग!'' - वह गरीब बोला।

ऐसा है कि तू अब गरीबी में दुर्दान्त हो चुका है। हीरे कहाँ मिलते हैं। 'खदानों में!'

'अरे तो फिर क्यों डरता है। ये बेचारे तो आलू, अदरख, कंदमूल से खुश हो जाते है! तू गरीब नहीं, इस जगह का हीरा है। हीरा सबके लिए।'

पक्षाघात

मैं उन्हें नहीं जानता था। बस इतना भर कि वे तीन मकान छोड़ आलीशान बंगले में रहते थे। बड़े संभ्रांत लोगों की कॉलोनी थी। संभ्रांत का मतलब यह कि किसी को किसी से कोई लेना देना नहीं। इन धनी संभ्रांतों के बीच, मैं फूटी आँख न सुहाने जैसा बसा हुआ था।

मैंने सुना मेरे तीन मकान छोड़ कोठी मालिक पक्षाघात से पीड़ित हो गए हैं।

उस कोठी का चौकीदार और मैं अक्सर पान की दुकान पर एक ही दियासलाई से दो मुँह धुँआ-धुँआ कर लेते रहे हैं।

रात टहल जब लौट रहा था तो कानाफूसी में छन-छन कर आती यह बात मेरे कान पर लौट पड़ी। ये गेलसिप्पा जा रहा है ना! इसको पता होगा, इसकी उस बंगले के चौकीदार से अच्छी छनती है।

अरे इसका क्या माँजना है! लोगों में उठने बैठने का भी सलीका होता है। ज्यादा मुँह मत लगाना।''

छोड़ो ना यार, हमें तो बस यह मालूम करना है, कोठी में क्या कुछ घट रहा है।

इस दफा देखना, बेटों में छन जाएगी। बूढ़े की राह तक रहे हैं सारे। जिस दिन ये टें बोला, कोहराम पहले मचेगा मातम बाद में - ये अलग-अलग स्वर थे।

दूसरे दिन सुबह-सुबह ताले-चाबी की दुकान वाले वासु जी ने अपनी जुबाँ खोली- ''सुना है कोई पंडित आता है, गीता पाठ सुनाता है! क्या हालात इतने नाजुक हो गए हैं?'

हाँ! चौकीदार बता तो रहा था! - मैंने कहा

''और क्या बताया उसने'' एक पड़ोसी जो मुझे देखते ही मनहूस कह पलट जाता रहा, मेरे से घुलमिल-सा गया था।

मैंने कहा ''चौकीदार बता रहा था कि मालिक को स्वयं लग गया है, अब ज्यादा दिन नहीं है।''

अब रोज रात खाना खाने की टहल के बहाने वे तीन-चार संभ्रांत मेरे साथ

हो लेते, या हम किसी के गेट पर जुट जाते।

मैं कल रात जब गुजर रहा था, किसी के रोने की आवाज सुनी।

तो फिर क्या हुआ! – सभी ने आँखें फाड़ ली। चौकीदार ने बताया मुझे, ऐसा लग रहा था कि वे निकल लिए हैं!

फिर!

''कोई डॉक्टर आया था! उसने सूई ठोंकी! वे फिर हरकत में आ गए!''

''बहुत ढीठ बुढ़ऊ है! ऐसे थोड़े ही जाएगा! राँधेगा अभी। पीछे वाले पीछा छुड़ाने की ताक में खड़े लोगों को।'' – यह उनके निकट पड़ोसी का स्वर्ग था।

अब मुझे मुगालता हो गया कि मैं इन संभ्रांतों की रुत में आ गया हूँ। मैं भी खुश, चलो इस बुढ़ऊ के आखरी वक्त पर मेरा चार लोगों में उठना-बैठना शुरू हो गया है।

मैं जब भी गुजरता टहलते हुए। रात उस बंगले की पहली मंजिल की खिड़की पर एक निगाह मार लेता।

चौकीदार ने जानकारी दे रखी थी। मालिक इस खिड़की के पास ही पड़े हैं।

कभी मैं आफिस से घर लौटता तो, या वे लोग आते-जाते देखते कहीं कोठी के गेट पर कंडा तो नहीं लगा दिया है। लेकिन किसी को पता ही न चला वे चल बसे। बेखबर चल बसे।

कल उनका उठावना था।

रात को टहलने गया तो मैंने देखा, वे लोग अजनबी, अपरिचित की तरह देख रहे थे। मैं उम्मीद में रहा, कोई तो बुलाएगा। मुझे लग गया, उनका उठावना कल है, इन लोगों ने मेरा आज ही कर दिया।

सोचता रहा, आखिर पक्षाघात किसे हुआ था?

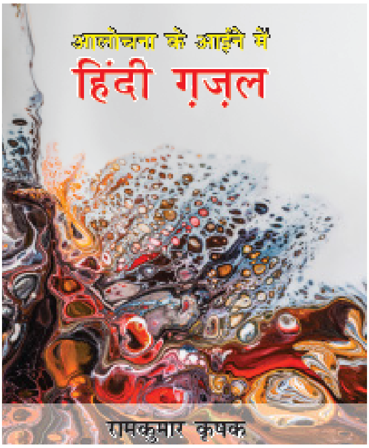

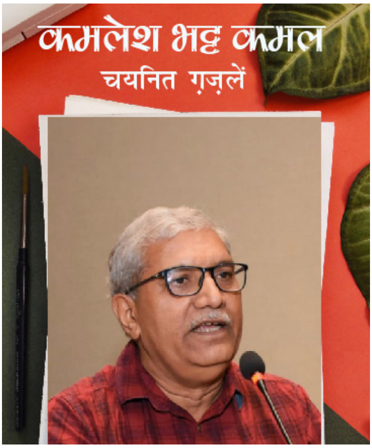

मार्टिन जॉन

छापा

एक प्रख्यात और सुप्रतिष्ठित गैर-सरकारी संस्थान ए.बी.सी. ने इस साल एक्सीलेंट परफोर्मेंस के लिए 'ईयर ऑफ दी चैनल' का अवार्ड एक ऐसे चैनल को प्रदान करने की घोषणा की जो बिना लाग-लपेट के, लीक से हटकर अपनी खबरों के द्वारा सीधे जनता से संवाद करता है। जनसरोकार वाली खबरें प्रसारित करने वाला यह चैनल सत्ताकेंद्रित शक्तियों की 'कारगुजारियों' का पर्दाफाश कर उस पर तीखा प्रहार करने से भी नहीं हिचकता। इस खबर से अवार्ड पाने की उम्मीद लगाए सत्ता से जुड़े अरबपति मीडिया घरानों में ही नहीं वरन सत्ता के गलियारों में भी खलबली मच गई। सत्ता की ओर अंगुलियां उठाने वाले को प्रेस्टीजियस अवार्ड से नवाजे जाने वाली खबर उन्हें बेहद चुभने लगी।

जिस दिन अवार्ड सेरेमनी का भव्य आयोजन था, उस दिन सुबह-सुबह तमाम अखबारों, सोशल मीडिया के विभिन्न प्लेटफॉमों में जो खबर सुर्खियों में छाई थी उसे देख-पढ़कर सब सकते में आ गए। तथाकथित राष्ट्रवादी चैनलों के खबरनवीस चीख-चीख कर, कूद-कूद कर किसी जंग में फतह हासिल करने वाले अंदाज में खबरें चला रहे थे '......आज की सबसे बड़ी खबर ....एक्सीलेंट अवार्ड बाँटने वाले संस्थान ए.बी.सी. के ठिकाने पर प्रवर्तन निदेशालय और आयकर विभाग का संयुक्त छापा ....'

बाजार के प्रतिरोध में

"सुना है, आपकी नई किताब आ रही है!"

"सही सुना है। "

"कहानियों की किताब या उपन्यास?"

"मेरे चुनिंदा आलेखों का संग्रह है।"

"किस विषय पर?"

"मशीनीकरण के बाद हमारी जिंदगियों को डिजिटल स्लेव बनाकर उसका बाजारीकरण किये जाने का जो ग्लोबल षडयंत्र है ....

".....मतलब बाजार के प्रतिरोध में?"

"शत-प्रतिशत!"

"किस प्रकाशन से?"

"नीलकमल प्रकाशन से। "

"अरे वाह!...ये तो नेशनल लेबल का प्रेस्टीजियस पब्लिकेशन है। ...इसकी तो कमाल की मार्केटिंग है। "

"बेशक...बाजार में अपने प्रोडक्ट को खपाने का नायाब तरीके हैं इसके पास।"

"और बाजार की नब्ज पर जबरदस्त पकड़ भी है। "

"प्री बुकिंग शुरू हो गई है सोशल मीडिया पर।.....अमेजन, फ्लिपकार्ट वगैरह में तो आना ही है...।"

"चलिए, अग्रिम बधाई और शुभकामनाएं ....आपकी किताब बाजार में कीर्तिमान स्थापित करे।"

जगह

मुख्य संपादक का कक्ष।

"सर, इसे इत्तिफाक ही कहेंगे!" राष्ट्रीय स्तर के एक अखबार के कार्यकारी संपादक ने कक्ष में दाखिल होते ही कहा।

"इत्तिफाक?....मतलब?"

"देश की दो नामी-गिरामी हस्तियां गुजर गई आज ही....एक ही वक्त पर।"

"दो हस्तियां?....एक तो रूलिंग पार्टी के राजनेता गजेन्द्र तोदी। दूसरी?"

"सर, आपको नहीं पता? दो दर्जन से अधिक किताबों के लेखक, हिंदी की मुख्य धारा की साहित्यिक पत्रिका 'बदलाव' के प्रकाशक, संपादक नगेन्द्र यादव।"

"ओ .....नगेन्द्रजी भी नहीं रहे! .....वाकई बहुत बड़े साहित्यकार थे।"

"जी, बिलकुल!....उनकी कई किताबें स्कूलों, कॉलेजों में लगी हुई हैं। कई किताबों पर भारतीय भाषाओं में फिल्में भी बन चुकी हैं। कई भाषाओं में अनुवाद भी हो चुके हैं।"

"तो सर, कल के अंक में दोनों खबरें फ्रंट पेज पर लगा देते हैं।"

"नहीं, बिल्कुल नहीं!.......फ्रंट पेज पर राजनेता गजेन्द्र ही रहेंगे। लेखक महोदय को तीसरे या चौथे पेज में जगह दीजिए कुछ ही पंक्तियों में। "

-9800940477

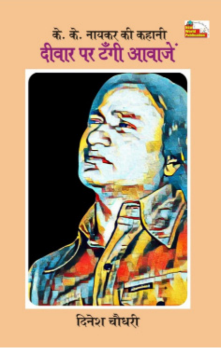

श्याम सुन्दर दीप्ति

सलीका

जब से उसने प्रधान कार्यकर्ता का पद संभाला था, उसने आसपास से उभरते विरोध के स्वर सुने। यही स्वर उसे बिल्कुल पसन्द नहीं था। वह इस आग को अपना सबसे बड़ा दुश्मन समझता था। वह इस बात से अनभिज्ञ था कि आग ही जीवन में ऊर्जा का सबसे बड़ा स्रोत है।

स्वर तीव्र होता गया और वह उसी अनुपात से बेचैन। उसने अपने घनिष्ठ कार्यकर्ताओं को बुलाया और इस आग को ठण्डा करने का फरमान जारी किया। उन्हें यह भी चेताया गया कि आग उसे बिल्कुल पसंद नहीं। विरोध विकास का गतिरोधक है।

सभी ने शान्ति का प्रतीक श्वेत वस्त्र धारण किए और उन उपद्रवियों से आ मिले। शांत, शीतल, पानी की तरह।

"क्या बात है वत्स?" एक शांत स्वर उभरा।

''हमें रोटी चाहिए,'' उधर से एक चिल्लाया, जिसके पेट में आग लगी थी।

''शांत वत्स! ठीक है, जीवन के लिए रोटी चाहिए, पर रोटी जीवन नहीं है। जीवन व्यापक है, उसे समझो।''

''हमें कुछ नहीं समझना। हमारे हाथों को काम चाहिए।'' एक और गूँज।

''हाथों को काम, वत्स। क्रिया प्रकृति का नियम है, सृष्टि का आधार। सूर्य, पृथ्वी, जगत के सभी जीव, अपने निर्धारित कार्य में नियमितता से लगे हैं। इस के लिए काहे की चिन्ता।''

''हमारे जीवन में न सुख है, न खुशी।'' आवाज अब कुछ धीमी थी।

इसी तरह, भभकती आग की लपटों को शांत व रहस्यमयी स्वरों ने लील लिया।

प्रधान कार्यकर्ता ने अपने राज्य के स्थापना दिवस पर श्वेतधारी लोगों को सम्मानित किया। उपद्रवियों ने भी, प्रधान कार्यकर्ता का धन्यवाद किया कि उन्होंने श्वेतधरियों को मार्गदर्ज़न के लिए भेजा।

प्रधान कार्यकर्ता ने श्वेतधारियों को यह कार्य निरन्तरता से जारी रखने के लिए, एक योजना बना कर देने को आग्रह किया।

इस तरह उसने बड़े सलीके से शीतलता को भी, आग की तरह एक तरफ कर दिया तांकि उसका अपना कार्य निर्विघ्न चलता रहे।

रोटी का सफ़र

(1)

''ये इतनी सारी रोटियां बच गई, अन्न की बरबादी नहीं करते।'' मां ने रसोई में घुसते, रोटियों के लगे ढेर को देखते हुए कहा।

''मां जी, पहले समोसे-पकौड़े खा लिए, फिर रोटियां किसने खानी थीं'' बहू ने जवाब दिया।

''होटल से रोटियां कम मंगवानी थी ना'', मां ने रोटियों को एक लिफाफे में डालते कहा।

''बस मां जी, जल्दी-जल्दी हंसी मज़ाक में बैठे हिसाब नहीं लगा, और इन्होंने कर दिया आर्डर।'' बहू ने स्पटीकरण देने की कोशिश की।

''चल छोड़, अब इस तरह कर, बाहर रख दे कूड़े के साथ। कूड़ा उठाने वाला लड़का आएगा ना, उसे दे देना, किसी गरीब के मुंह में तो जाएंगी,'' मां ने लिफाफा बहू के हाथ पकड़ाते कहा।

कूड़े वाले ने बेल दी तो मां ही भागी हुई गई। दरवाज़ा खोलकर जब वह कूड़ा उठाने लगा तो मां कहने लगी, ''भईया ये रोटियां भी ले जाना।''

कूड़े को रेहड़ी में डाल, डस्टबिन वापस रखा और रोटियों वाला लिफाफा उठा कर रेहड़ी में, कूड़े के साथ रख लिया।

मां अभी वहीं खड़ी ही थी। एकदम बोली, ''तूने इन्हें भी गंद के साथ रख लिया। रेहड़ी के हैंडल से टांगनी थी।''

''बीबी जी,'' वह कहते-कहते हुए रुका और फिर कहा, ''बात ये है कि बच्चे खाते नहीं।''

''क्यों? क्या हुआ है, ताज़ी जैसी ही हैं, रात को ज्यादा मंगवा ली बच्चों ने'', मां ने समझाने की कोशिश की।

उसने मन में कहा, 'गर ताज़ी जैसी हैं तो आप क्यों नहीं खा लेते', पर बोला नहीं। उसे तकरीबन हर रोज़ ही ऐसी बातों का सामना करना पड़ता।

उसने सहज भाव से कहा, ''वो तो ठीक है बीजी, बच्चे कहते हैं मां के हाथ से बनी रोटी खाएंगे।''

(2)

रात की बची बासी रोटियों का लिफाफा उठा, बीजी बाहर को जाने लगी तो बहू ने कहा, ''रामू भईये को मत देना, वह भी अपने जैसा ही है, हम गली की गायों या कुत्तों को डाल देंगे।''

''वही करने ही चली थी, मुझे पता है तेरे उपदेशों का। रामू के रास्ते में पड़ती गऊशाला है ना, वहीं पकड़ाने को ही कहना था,'' बीजी ने बहू को वापस

जवाब दिया।

रामू को जब गऊशाला में रोटियां पकड़ाने के लिए लिफाफा दिया तो उसने पूछा, ''क्या ये गऊशाला में ही देनी हैं?''

''हां'' बीजी ने संक्षिप्त सा जवाब दिया, और फिर पूछा? ''क्यों? क्या बात?''

'नहीं, वैसे ही' और फिर मन की बात कह गया, ''यूं जी, जहां मैं कूड़ा फेंकता हूं ना, वहां कई गऊएं कूड़े में मुंह मार रही होती हैं। अगर गऊओं को ही डालनी है तो उन बेचारियों को डाल दूंगा।'' फिर थोड़ा रुक कर बोला,'' वैसे वहां तो कई बार, बच्चे भी रोटी के टुकड़े ढूंढ़ते होते हैं गंद में....बड़ा मन दुखता है।''

वह चुप रही।

रामू ने बीजी के चेहरे की तरफ देखा और किसी तरह की प्रतिक्रिया ना पा कर बोला, ''मैं ये इसलिए पूछता हूं कि किसी की आस्था को ठेस न पहुंचे।''

बीजी को अब भी कोई जवाब नहीं सूझ रहा था।

राजू ने जवाब के इन्तजार में कहा, ''बीजी एक बात कहूं, गऊशाला वाली गायों के लिए तो सुबह से ही लोग जुड़ जाते हैं। कोई रोटी, तो कोई आटे का पेड़ा लेकर खड़ा है। चारा खिलाने वाले तो कई होते हैं।''

अब बीजी के मुंह से निकला, ''भई, ये तो अब करमों-करमों की बात है। खैर, तेरी मरजी, बस किसी जीव के मुंह में पड़ जाएं रोटियां।''

किसी अन्य किस्म की बात में पड़ने से पहले, राजू ने रेहड़ी चला ली।

-098158.08506

वीरेंदर भाटिया

अपना देस

शहर के एक प्रॉपर्टी डीलर ने एक व्हाट्स एप ग्रुप बनाया। नाम रखा 'अपना देस'। उस ग्रुप में आरती पाठ और ईश्वर-स्तुति के फोटो मेसेज और वीडियो आने लगे। एक लोकल पत्रकार भी उसमें अपनी वीडियो डालने लगा। वकील, अध्यापक, कर्मचारी, समाजसेवी- सब तरह के लोग उस ग्रुप में धीरे-धीरे जुड़ने लगे। कभी-कभार सर्वधर्म की बात भी की जाती।

एक युवक साइलेंट रहकर उस ग्रुप को वाच कर रहा था। रोज वीडियो मेसेज फोटो देखता, रोज विचार पढ़ता। होली-दीवाली के अतिरिक्त तमाम अन्य कम प्रचलित त्योहारों की भी अति महिमा सुनाई जाती। हिंदूवादी नेताओं की फोटो वीडियो भी खूब आती। नायक महानायक और ईश्वर तक की उपाधि उन्हें दी जाती। उनके अनैतिक कार्यों की भी भूरि-भूरि प्रशंसा होती!

नवरात्रों पर भी उस ग्रुप में खूब वीडियो फोटो शेयर हुए। युवक जो खामोशी से सब देखता था उसने रमजान की बधाई का एक वीडियो उस ग्रुप में शेयर कर दिया। रमजान और नवरात्र उन दिनों एक साथ ही आये थे।

सबसे पहले एक वकील बोला, ये कौन मुल्ला है इस ग्रुप में। वकील ने जबकि कानून में पढ़ा था कि अपना देश सेक्युलर स्टेट है। यहां सब धर्मों के लिए समान भाव, समान आदर है।

एक समाजसेवी बोला, ये सब यहां नहीं चलेगा।

युवक पूछना चाहता था कि यहां नहीं चलेगा मतलब ग्रुप में या देश में? लेकिन युवक अभी ग्रुप का तापमान देख रहा था।

प्रोफेसर बोला, बधाई ही तो दी है रमजान की। क्या ही कुफ्र हो गया। हम भी तो नवरात्रों की बधाई दे ही रहे हैं यहां।

वकील बोला, आपको प्रोफेसर किसने बना दिया? ये हिंसक, मांसाहारी लोग, एक से अधिक शादियां करने वाले लोग, हिन्दू को काफिर कहने वाले लोग। इनकी बधाई लोगे आप?

एक से अधिक शादियां हमारे राजा नहीं करते थे क्या? मांस हिन्दू नहीं खाता क्या? हिंसा तो आप अब भी कर रहे हैं। हमने बौद्ध मारे, दलित अपने से अलग रखे। उनके तमाम अधिकार छीन लिए। जिंदा रहने के लिए न्यूनतम स्पेस छोड़ा। ये हिंसा नहीं थी क्या? और जैसे आप सब भारतवासियों को सनातनी कहते हैं, ये उसे मुसल्लस ईमान वाला कहते हैं। कि जिसका ईमान नहीं वह काफिर है। परिभाषाओं को थोड़ा ब्रॉड होकर समझो वकील साहब।

प्रोफेसर की लेकिन घेरेबंदी कर ली गई। प्रोफेसर ने आखिर पूछ लिया कि ग्रुप का मकसद क्या है? अपना देस आप ऐसा बनाना चाहते हैं कि एक ही धर्म हो, उसी की बात हो? बाकी लोग बाकी धर्म सब उसी तरह हो जाएं, जैसे पुराने समय में दलित थे? गाँव से बाहर बस्ती!

तापमान अब बढ़ने लगा था। प्रोफेसर की घेरेबंदी करने की कोशिश की गई। युवक ने प्रोफेसर का साथ दिया। अंततः प्रोफेसर और युवक को ग्रुप में से निकाल दिया गया।

युवक हंसा। सोचने लगा कि ऐसे कितने ही 'अपना देस' मिलकर देश बना है। तुम पर संविधान न होता तो तुम अपना देस कैसा बनाते, यह समझा जा सकता है!

मजदूर दिवस

मजदूर दिवस की पति को छुट्टी थी। लेकिन पत्नी को स्कूल जाना था। पति छुट्टी के दिन लेट उठने के आदी थे, लेकिन पत्नी काम के लिए उठ गई तो पति की भी नींद खुल गयी।

अन्य दिन वह अपने काम पर अलसुबह निकल जाता, इसलिए पत्नी स्कूल के लिए कैसे तैयार होने का वक्त निकालती, कैसे बेटे को स्कूल के लिए तैयार करती, कैसे छोटी बेटी को दूध देकर टिकाती और कैसे उसकी आँख में धूल झोंककर निकलती ये उसने कभी आँखों से देखा ना था।

पति आज उठा, उसने बेटे को कपड़े दिए। जूते पोलिश किये। पत्नी बेटी को फीड करवाने लग गयी। पति रसोई में गये। तवा चूल्हे पर ही टिका था। आटा निकला पड़ा था। पति ने फटाफट चार रोटी बनायी। दो बेटे के टिफिन में डाल दी और दो रैप करके बीवी के पर्स में डाल दी। बेटी को चॉकलेट के बहाने गोदी में लिया और पत्नी का माथा चूम कर बोला- यू आर ग्रेट।

पत्नी भाव-विभोर पति को देखती रही।

एक झटके से वह डर कर उठ गई। सुबह के 5 बज रहे थे। अलार्म डरावनी आवाज में बज रहा था। पास में सोया पति गुर्राया- 'बन्द करो अलार्म। छुट्टी के दिन भी चैन नहीं। उफ्फ!' पत्नी ने सामने टँगी तस्वीर को माथा नवाया। और मन ही मन बुदबुदाई...'हे ईश्वर, जो सपने सच नहीं हो सकते वह दिखाता क्यों है?'

पिछड़ापन

1

लड़की दसवीं कक्षा में थी और लड़का बारहवीं कक्षा में! दोनों एक ही स्कूटी से स्कूल आते, एक ही स्कूटी से वापिस जाते! लंच समय में भी दोनों अक्सर साथ होते, स्कूल में प्राय उन्हें साथ ही देखा जाता!

स्कूल में आये नए प्राचार्य ने एक दिन लड़का-लड़की को बुलाया और कहा, बेटा, थोड़ा तहजीब सीखो! इस तरह से स्कूल का माहौल खराब होता है! तुम दोनों को बाकी बच्चे देखेंगे तो क्या सीखेंगे?

व्हाट सर! हमने क्या किया है? लड़की ने प्रतिप्रश्न किया

बेटा लड़का-लड़की साथ-साथ रहेंगे घूमेंगे तो...

लेकिन सर इसमें बुरा क्या है?

तुम मुझे सिखा रहे हो? समझा रहे हो या बता रहे हो? आजकल का माहौल है यह ठीक है लेकिन यह स्कूल में नहीं चलेगा बेटा!

ये मेरे बड़े भैया हैं सर, हम तो घर से साथ आते हैं साथ ही जाते हैं! टिफिन अदल-बदल लेते हैं कई बार, भैया मेरी केयर करते हैं!

तुम रियल बहन भाई हो?

हाँ सर,

लेकिन रहते तो तुम दोस्तों की तरह हो

'तो सर हमें कैसे रहना चाहिए!' लड़की ने प्राचार्य की आँख में आँख डालकर सवाल किया!

प्राचार्य निरुत्तर लड़की को देखता रहा!

2

अगली सुबह प्राचार्य के रूम में बच्चों के पिता आये और स्कूल लीविंग सर्टिफिकेट मांग लिया!

प्राचार्य ने वजह पूछी!

पिता ने कहा, आपको दोस्ती से ऐतराज है, ऐसे स्कूल में मुझे मेरे बच्चे नहीं पढ़ाने!

मुझे मालूम नहीं था कि वे भाई-बहन हैं! प्राचार्य ने कहा,

यह और भी ऐतराज वाली बात है, कि यदि वे भाई बहन नहीं होते तो आपको उनकी दोस्ती से ऐतराज होता?

प्राचार्य खामोश रहे।

पिता ने कहा, आपको मालूम है, इससे पहले ये बच्चे किसी और स्कूल में पढ़ते थे! बेटी को जब पहली बार पीरियड्स हुए तो मैडम ने बेटे को बुलाया और कहा कि बहन को घर ले जाओ इसकी तबियत ठीक नहीं है, बेटे ने वजह पूछी तो मैडम ने कहा, तुम नहीं समझोगे, यह लेडीज प्रॉब्लम है! बेटे ने बेटी से

पूछा और उसे प्रॉब्लम मालूम हो गयी! बेटे ने मैम से कहा पीरियड्स आये हैं, मैं पैड्स ला देता हूँ मैम, मैडम ने डांट लगाई, ज्यादा स्मार्ट मत बनो, जितना कहा है उतना करो, इसे घर ले जाओ! बेटे ने ही रास्ते में पैड्स खरीदे! बेटी पहले से अवेयर थी इस प्रॉब्लम से! घर आकर उसने खुद ही सब मैनेज कर लिया! मैंने उस स्कूल से बच्चे निकाल लिए! मुझे स्कूल मेरे घर से ज्यादा प्रोग्रेसिव चाहिए प्राचार्य साहब और आप बहुत पिछड़े हुए हैं!

प्राचार्य अपने पिछड़ेपन की गाथा जड़ बैठे सुनते रहे!

मजदूर

(कोविड के वक्त पलायन में 40 मजदूर मालगाड़ी के नीचे कट कर मर गए थे। सत्ता ने बताया कि मजदूर थक कर पटरी पर लेट गए थे और उनकी आंख लग गयी थी)

रामदीन!

हाँ

क्या लगता है, गांव पहुंच पाएंगे हम?

मालूम नहीं। अभी तो बहुत दूर हैं हम

रामदीन!

हां

क्या लगता है, जीवन बच पायेगा गांव पहुंचने तक?

मालूम नहीं। लेकिन हलकान हैं बहुत।

रामदीन!

हाँ

क्या लगता है, एक रोटी के लिए हमने देश में कितना कुछ खड़ा कर दिया। हम खड़े कब होंगे?

मालूम नही। इतने पिटने-लुटने के बाद अब तो लगता है लड़खड़ा ही जाएंगे हम।

रामदीन!

हां

बहुत जलील महसूस कर रहा हूं भाई। घर में भी क्या मुंह ले कर जाएंगे?

हां। जलील तो इतने हैं कि दहाड़ कर रोने का मन करता है।

रामदीन!

हां

एक लम्बी नींद सोने का मन है। थक गए हैं जिंदगी से। सो जाएं क्या?

हां। सो ही जाते हैं भाई।

और सभी मजदूर छातियों पर रोटियां रख कर रेल की पटरी पर सो गए।

-7015641668

आनन्द

मानव स्वभाव

उस साल को गुजरे अब बहुत साल हो चुके थे जब कपास की रिकॉर्ड पैदावार हुई थी। बाद के सालों में कपास की पैदावार इतनी कम हुई कि वह साल हमारी यादों में आता और हम आह भर कर रह जाते। इस साल मगर, कपास के पौधे इतने अच्छे से पल्लवित, पुष्पित और फलित हो रहे थे कि रिकॉर्ड पैदावार होने की गारंटी लेते-से लगते।

मंद हवा में झूमती, फलों से लदी टहनियों और उन पर मुस्कुराते फूलों के संग, हम भी वर्षों के अधूरे सपने पूरे होने की उम्मीद में मुस्कुरा रहे थे कि मौसम में एकाएक आए बदलाव की वजह से अचानक सुंडियों का इतना भयंकर आक्रमण हुआ कि सुनहरे भविष्य के हमारे सपने चूर-चूर होने लगे। कुछ दिन पहले तक फसल में एक भी सुंडी नहीं थी लेकिन अब जहाँ भी देखे सुंडियाँ फूल और फलों को चट करती नजर आतीं।

कृषि विशेषज्ञों की सलाह पर अच्छे से अच्छे कीटनाशकों का छिड़काव किया जाता, मगर सब बेसअर रहता। निराशा में डूबे हम किसानों की चर्चा और चिंता भी सुंडियों से शुरू होती, सुंडियों पर खत्म। खेत में जाते ही मुंह आई फसल को सुंडियों से तबाह होते देख मैं आपे से बाहर हो जाता। पगलाया-सा मैं पौधें व मेरे कपड़ों पर चिपकी सुंडियों को मुट्ठी में मसलने लगता। घास पर दिखतीं तो पैरों से कुचलने लगता। हाथ में डंडे बरसाता रहता, जब तक कि वे खाक में नहीं मिल जातीं। इतना तक भी मैं नहीं सोच पाता था कि मेरे इस प्रयास से वे खत्म होने वाली नहीं हैं।

दिन-भर कीटनाशक का छिड़काव कर उस शाम जब घर लौटा तो कीटनाशक का घोल शरीर पर यहाँ-वहाँ पर गिर जाने की वजह से इतनी अधिक जलन, खुजली और थकान हो रही थी कि सीधा बाथरूम में जा घुसा। कपड़े उतार कर ज्यों ही बाल्टी से पानी लेने को हुआ कि देखता हूँ, पानी में गिरी एक सुंडी अपनी जान बचाने के लिए छटपटा रही है। अनायास बिना सोचे-विचारे किसी रिमोट से संचालित-सा मैं, यह सावधानी बरतते हुए कि अँगुलियों का दबाव सुंडी पर न पड़े, बेहद कोमलता से उसे पानी से बाहर निकालता हूँ और समीप ही उग आई घास पर छोड़ आता हूँ।

विचित्र विधान

यह उसकी बाल्यावस्था थी, जबकि वह मुझसे कुछ कहना चाह रहा था। तीन-चार शब्दों का छोटा-सा वाक्य अपनी तोतली जुबां में बार-बार बोल रहा था। मैं समझ नहीं पा रहा था उसके कहे को। मैंने सोचा वह कुछ लेना चाह रहा था। ड्राइंगरूम में सजी एक-एक कलाकृति को मैं उठाता। उससे पूछता, ''ये लोगे?...'' ''ये?''....''तो ये?'' वह हर बार इंकार से सिर हिला देता और वही वाक्य दोहरा देता।

मैंने फिर से, ज्यादा गौर से सुनने और समझने की कोशिश की। मगर मैं फिर असफल रहा। मैं अंदाज से अलमारी में रखे खिलौने एक-एक कर उसे देने लगा। उसने किसी खिलौने की तरफ देखा तक नहीं और अपनी रटन्त जारी रखी।

मैंने टॉफी देनी चाही। उसने नहीं ली। उसका ध्यान और कहीं हटाने के लिए मैंने कहा, ''वो देखो पेड़ पर कितना सुंदर मोर है। अरे यहां कितने तोते भी हैं। देखो तो इधर, कितने प्यारे-प्यारे हैं वे सब।''

लेकिन उसके रिकार्ड प्लेयर की सुई अब भी एक ही जगह अटकी थी और बार-बार वही कुछ कहा जा रहा था।

मेरा धैर्य जवाब दे चुका था। खीजते हुए मैंने उसे ऊंची आवाज़ में धमकाया, ''ओ जिद्दी गूंगा। कुछ समझ भी तो आए कि क्या चाहता है तू?''

उसने मेरी डांट-फटकार की ओर जरा भी ध्यान नहीं दिया और वही कुछ कहता रहा। उसे चुप कराने के तमाम प्रयत्न असफल होने पर मेरा गुस्सा भड़क उठा। थोड़ा बड़ी उम्र का होता तो अब तक अच्छी-खासी मरम्मत कर दी होती, लेकिन उस मासूम का क्या किया जाए, समझ नहीं आ रहा था। लाचार हो उससे पीछा छुड़ाने के लिए मैं उठ खड़ा हुआ। वह रोने लगा। बेरहमी से उसे रोता छोड़ मैं बाहर निकल गया।

आज मैं उसे एक सवाल समझा रहा था। मेरे दो-तीन बार समझाने पर भी जब सवाल उसके समझ में नहीं आया तो गुस्सा हो मैंने उसके दो थप्पड़ जड़ दिए। रोते-सुबकते वह बोला, "कैसा ये दस्तूर है कि बच्चे के लाख समझाने पर बड़ा न समझे, या कि बड़े के दो-तीन बार समझाने पर बच्चा न समझे, रोना बच्चे ही को पड़े।''

युद्ध और वसंत

सब कुछ मौसम पर निर्भर था, जबकि मौसम का कोई भरोसा नहीं था। पल में फुहार, पल में कड़कती धूप। धूप इतनी तेज कि सब कुछ सुखा देने को आतुर हो, जैसे घटाएँ घिरें तो ऐसे कि जल मग्न हो जाएगा सब कुछ। अविश्वसनीय बहरूपिया मौसम गिरगिट बन आया था। नहीं अनुमान लगा पा रहा था कोई, कि क्या होगा अगले पल। ऐसे में जिन किसान परिवारों में पर्याप्त लोग थे, वे पक चुकी फसल की कटाई और परती जमीन की जुताई साथ-साथ कर सकते थे। दिक्कत थी तो उन्हें जिनके यहाँ काम करने वाले कम थे, जबकि न परती जमीन की जुताई को टाला जा सकता था, न पकी फसल की कटाई को टाला जाना चाहिए था। लेकिन प्राथमिकता तय करने के अतिरिक्त कोई चारा भी नहीं था उनके पास।

यह किसान भी उलझन में था। पहले कटाई या बुवाई? आखिर उसने सोचा बुवाई का क्या है? कुछ ठहर कर भी की जा सकती है। बीच-बीच में फुहार गिर रही है। पाँच-सात दिनों में नमी बिल्कुल ही थोड़े न सूख जाएगी। लेकिन अगर आंधी-तूफान, ओले आ गए तो मुँह आई फसल चौपट हो जाएगी। कुछ भी तो हाथ नहीं लगेगा। यही सोच उसने शाम को पत्नी से कहा, ''सुबह फसल काटने चलेंगे।''

तमाम उस रात मौसम साफ रहा। सुबह किसान ने सोचा-आकाश साफ है आज तो मौसम खुल गया हो शायद। कहीं ऐसा न हो कि तमाम फसल की कटाई होने तक जमीन इतनी सूख जाए कि बुवाई के लायक नमी ही न रहे। कटाई के लिए तो रोज ही मौका है, लेकिन बुवाई अनुकूल नमी जमीन में रोज-रोज थोड़े न रहती है। अगर बुवाई ही नहीं होगी तो न कुछ उगने को होगा, न कुछ काटने को। यही सब सोच, सुबह वह बोला, ''पहले बुवाई करते हैं। फसल काटना बाद में शुरू करेंगे।''

खेत में जाते-जाते छोटी बहू ने अपने सैनिक पति को पत्र लिखा, ''चिट्ठी में तुम ने लिखा है कि लड़ाई की आशंका की वजह से तुम्हें अभी छुट्टी नहीं मिल सकेगी। युद्धोन्मादी शासक तो शायद ही समझे, लेकिन सैनिक हुए तो क्या, बेटे तो तुम किसान के हो। तुम तो समझो कि लड़ाई और कटाई तो कभी भी की जा सकती है, लेकिन सृजन और प्रणय का दुर्लभ मौसम वसंत रोज-रोज थोड़े न आता है। अलबत्ता तो मनुष्य के छोटे से जीवन में प्रगाढ़ प्यार के मौसम होते ही कितने हैं। फिर उन्हें भी लड़ने-झगड़ने में जो कोई गँवा दे, बाद में बहुत पछताता है वह। इसीलिए कहती हूँ लड़ना-झगड़ना छोड़, वसंत रहते-रहते मेरे गले मिल लो'।

–9813368705

सुरेश बरनवाल

पवित्र नगर

गर्म सड़क, जीबी रोड, दलाल मार्ग, आनन्द बस्ती, महासुन्दरी नगर।

एक ही शहर में जब मुझे इन नामों की सड़कें, गलियाँ और कॉलोनियों के बारे में सुनने को मिला तो मैंने इनमें से एक में जाने का निर्णय लिया। वहां जाकर थोड़ी सी पूछताछ के बाद ही मैं उस स्थान पर पहुंच गया जहां छोटे और उत्तेजक कपड़े पहने कितनी ही औरतें ग्राहकों के इन्तजार में इधर उधर घूम रही थीं। मैं उनमें से एक के पास जा लिया। सौदा होने के बाद वह मुझे एक कमरे में ले गई।

''बड़े सटीक नाम रखे हैं इन जगहों के...!''- मैं हंसा- ''...नया आदमी भी आसानी से समझ जाता है कि कहाँ जाना है।''

वह भी हंसी-''तभी तो...!''

''अच्छा यह बताओ...।''- मैंने सस्ती चादर बिछे बिस्तर पर बैठकर सिगरेट जलाते हुए पूछा- ''इस शहर में ऐसी गलियां या कॉलोनियां भी हैं जिनके नाम ढंग के हों?''

''हैं न...!''- मुझसे बिल्कुल सटकर बैठते हुए उसने मेरे हाथ से सिगरेट ले ली और एक कश का धुआं छोड़ते बोली-''गांधी कॉलोनी, पवित्र नगर, पुराना मंदिर इलाका, सफेद सड़क, इबादत बस्ती...कितने ही तो हैं!''

''अच्छा! वहाँ तो सभी अच्छा अच्छा होता होगा।''- मैंने ठिठोली की।

''हां...वहाँ से ही तो ग्राहक आते हैं हमारे पास!''- और वह ठिस्स से हंस पड़ी।

युद्ध और ईश्वर

युद्ध बहुत लम्बा चला था। इतना लम्बा कि सेना की बन्दूकों के लिए गोलियां भी खत्म हो गई थीं। गोलियां बनाने वाले कारखानों में गोलियों के लिए लोहा और पीतल कम पड़ने लग गया था। सैनिक अब युद्ध के मोर्चे पर भी जाते और आसपास के गांवों से लोहा और पीतल भी तलाशते। हर टुकड़ी को आदेश थे कि हथियार के कारखानों तक वह कच्चा माल पहुंचाए।

ऐसे ही एक गांव में एक सैनिक टुकड़ी अपने दो ट्रकों के साथ आई। कमांडर ने गांव के मुखिया को बुलाकर अपना आदेश सुनाया।

''पर यहां पहले भी सेना की एक टुकड़ी आकर सारा लोहा ले जा चुकी है।'' - मुखिया ने हाथ झटके।

''ओह...पर हमें और भी चाहिए।'' -कमाण्डर ने अपनी बात दोहराई।

''अब तो किसानों के हल और मजदूरों के औजारों में ही लोहा बचा है जनाब।'' - मुखिया ने हाथ जोड़ लिए।

''उन्हें छोड़कर और बताओ क्या बचा है?'' -कमाण्डर ने पूछा।

उसी समय गांव के चर्च में प्रार्थना के लिए बज रहे घण्टे की आवाज सुनाई दी।

यह आवाज सुन कमाण्डर ने एक क्षण सोचा फिर अपने सैनिकों को आदेश दिया-''यहां के सभी धार्मिक स्थलों से लोहे और पीतल की सभी चीजें उतार ली जाएं।''

लोगों के विरोध के बावजूद सभी धार्मिक स्थलों से लोहे पीतल की तमाम चीजों के साथ इनसे बनी मूर्तियां भी उठा लाई गईं।''

''हम सभी के ईश्वर की मूर्तियों को तो छोड़ देते जनाब!'' -तमाम धर्मों के लोगों ने गुहार लगाई।

''यह युद्ध का समय है। इस समय ईश्वर से अधिक गोलियों की जरूरत है।'' -कमाण्डर ने सख्त स्वर में कहा-''इन सामानों और मूर्तियों को गलाकर गोलियां बनाई जाएंगीं।''

''पर हमें यह मूर्तियां वापिस कब मिलेंगी?'' -एक स्त्री ने लगभग रोते हुए पूछा।

''जब युद्ध रुक जाएगा तो बची हुई गोलियों को गलाकर तुम्हारे ईश्वरों की मूर्तियां फिर बना दी जाएंगी।'' -आश्वासन देकर कमाण्डर वहां से रवाना हो गया।

कहानियों का कत्ल

''जंगल की कहानी सुनाऊं?''-रात को सोते वक्त दादी ने अपनी छोटी-सी पोती से पूछा।

''नहीं, जंगल की नहीं!''-बच्ची एकदम से सहम गई।

''शेर की?''

''नहीं!''- वह लगभग रो पड़ी।

''तो मेरी गुड़िया...किसकी कहानी सुनाऊं?''-दादी ने दुखी मन से पूछा।

''मुझे नहीं पता!''-बच्ची ने बहुत उदास स्वर से जवाब दिया।

''अच्छा...परी की कहानी...?''

''नहीं...नहीं...!''-और वह चीखती हुई अब दादी की गोद में सिमटकर रोने लगी।

''पर परी की क्यों नहीं...वह तो बहुत अच्छी होती हैं!''-दादी ने उसे बहलाना चाहा।

''वो अंकल लोग...वे मम्मी को परी जैसी सुन्दर बता रहे थे और फिर मम्मी को मार दिया!''-कहकर बच्ची अचानक दहाड़ मार कर रोने लगी।

दादी सकते में आ गई। वह समझ गई थी कि उसकी पांच साल की पोती इन शब्दों से क्यों खौफ खा रही है? एक साल भी तो नहीं हुआ था जब शहर में भड़के दंगों में बलवाईयों ने उसके घर पर हमला किया था। उसके बेटे को मार डाला था और उसकी बहू को घसीटते हुए खुली जीप में बैठा पास के जंगल में ले गए थे। बेटी मां के शरीर के साथ चिपटी चिपटी वहां चली गई थी और बाद में सदमे के कारण बेहोश मिली थी।

दादी को याद हो आया कि कैसे बलवाईयों का सरदार जाते जाते कह गया था–''हम शेर हैं। हमसे कोई कैसे छिपा रह सकता है? हम गोश्त को कहीं से भी सूंघ लेते हैं।''

''सो जा बेटी!''–दादी ने अपने आंसू पोछते हुए पोती को अपने अंक में कुछ और समेट लिया–''कल सुनाऊंगी कोई कहानी।''

पोती के सोने के बाद आधी नींद और बेइन्तहा दर्द में डूबी अनपढ़ दादी बड़बड़ा रही थी–''मुए, मेरी पोती से उसकी कहानियां भी छीन ले गए!''

असल तस्वीर

नवनिर्मित मंदिर में देवता की मूर्ति पर आज सोने का मुकुट चढ़ाया जा रहा था। इसके लिए भव्य आयोजन किया गया था। दान देने वाले सेठ का परिवार भी पूरे सजधज के साथ वहां खड़ा था। कई महापंडित मंत्रोच्चार कर रहे थे। चंदन का अर्क उछाला जा रहा था। मंदिर में जहँ तहँ फूलों के द्वार बनाए गए थे।

''ओह! कितना सुन्दर दृश्य है!''– वहां आए एक व्यक्ति ने अहोभाव के साथ कहा।

''ओह! कितना त्रासद दृश्य है!''– तभी उसके साथ आए दूसरे व्यक्ति के मुंह से अकस्मात् निकला।

दोनों के पास खड़े तीसरे व्यक्ति ने हैरानी से दोनों की तरफ देखा।

पहले का मुंह मंदिर के भीतर की तरफ था जहाँ धन का गैरजरूरी और अतिप्रदर्शन था।

दूसरे का मुंह मंदिर के बाहर की तरफ था जहां आँखों में भूख सहेजे, प्रसाद के लालच में भिखारियों और झोंपड़-झुग्गियों के बच्चों की भीड़ उमड़ी हुई थी।

–94662 00712,

अरुण कुमार

आसान रास्ता

विजय और शीला शहर छोड़ने से पहले आखिरी बार दामू बिटिया के स्पैशल स्कूल की संचालिका जसविन्दर मैडम से मिलने पहुँचे। स्कूल के गेट में घुसते ही दामू उन दोनों का हाथ छुड़ाकर भाग खड़ी हुई। वह मैम...मैम...चिल्लाती हुई स्कूल में ही गुम हो गई।

अगले कुछ ही पलों में विजय और शीला जसविन्दर मैडम के कमरे में उनके सामने बैठे थे।

'तो...? हिसार हुई है आपकी बदली?' जसविन्दर मैडम के सवाल पर विजय ने मुस्कुराकर जवाब दिया– "हाँ मैम! पर काश! यह बदली न हुई होती!"

'क्यों...' जसविन्दर मैडम ने चौंकते हुए पूछा तो शीला बोली, 'मैम! हम तो बड़े चिन्तित हैं कि दामू को अब यह स्कूल छोड़ना पड़ेगा।.. यहाँ तो इसे आप लोगों से काफी लगाव हो गया था। घर पर भी जब किसी बात पर नाराज़ होती है तो स्कूल जाना है...स्कूल जाना है कि रट ही लगा देती है।" शीला पल भर के लिए रुकी तो विजय बोला, "आपके पास दामू को भेजकर हम लोग निश्चिन्त हो जाते थे। बस अब भगवान जी से हाथ जोड़ कर यही प्रार्थना है कि आगे भी इसे ऐसा ही सुरक्षित माहौल मिले..।" यह कहकर विजय ने थोड़ा विराम लिया तो शीला ने सिरा पकड़ लिया, "...आजकल समाज में नॉर्मल बच्चों के साथ ही इतनी हरासमैंट, इतनी एब्यूज़मैन्ट बढ़ गई है कि यह सोचकर ही डर लगता है कि हमारी दामू एबनॉर्मल है। ...कुछ भी बोल-बता पाने में सर्वथा असमर्थ!"

जसविन्दर मैडम ने दोनों के चेहरे गौर से देखे, बोली, "क्यों चिन्ता करते हो?...सब अच्छा ही होगा! ...आप दोनों तो पढ़े-लिखे हैं। समझदार हैं। ...आप दोनों तो अपनी बच्ची को बहुत अच्छे से संभाल रहे हैं। ...कम से कम आप उन लोगों से तो बहुत ही अच्छे हैं जो अपने 'रिटार्डिड' बच्चों को ऐसे ही रुलने के लिए छोड़ देते हैं। ...मैं आपको एक लड़की की बात बताती हूँ। ...वह पास के गाँव से आती थी, हमारे पास। अब जैसा गाँवों में होता है। माँ-बाप दोनों ही घर, खेती और पशुओं की सार-संभाल में व्यस्त। उनके पास इतना वक्त ही नहीं होता कि अपनी बच्ची को भी संभाल लें। बेचारी लावारिसों की तरह इधर-उधर लुढ़कती रहती थी। ...और माहवारी के दिनों में तो ...बस पूछो ही मत। ...फिर पता नहीं किस भले आदमी ने अथवा किसी भले डॉक्टर ने उन्हें सलाह दे दी ...और उन्होंने उस लड़की की बच्चादानी निकलवा दी। ...ऐसा होने के पश्चात माँ-बेटी को उन मुश्किल दिनों से तो निज़ात मिल ही गई। ...अब मेरी तो आप लोगों को भी

यही सलाह है कि किसी अच्छे से सर्जन से बात करके बच्ची की बच्चादानी..''

विजय और शीला सुन्न पड़ गये थे। उन्होंने अपनी बच्ची के बारे में कभी इस तरह से तो सोचा ही नहीं था। उन दोनों को चुप देखकर जसविन्दर मैडम पुनः बोली, ''डोंट टेक मी अदरवाइज़! बच्ची के आगे के भविष्य को देखते हुए यह एक बेहतर रास्ता है। ...और वैसे भी मैंने आजकल के माहौल को देखते हुए भी आप लोगों को यह सलाह दी है। ...अब चौबीसों घण्टे तो आप लोग भी बच्ची की रखवाली नहीं कर सकते। ...और आदमी ...आदमी तो साला स्वभाव से ही जंगली होता है ...जानवर! इधर आपकी नज़र हटी और उधर बाज़ ने झपटा मारा ...! ...मेरे ख्याल में तो सब स्थितियों को देखते हुए इन बच्चियों के लिए यही बैटर ऑप्शन है कि रिमूव द...!''

जाति

डाक बँगले के भोजन कक्ष में मैं अपनी टीम के साथ भोजन करने बैठ गया था। कुछ सोचते हुए मैंने शर्मा से कहा कि वजीर सिंह ड्राईवर को भी यहीं बुला लो, वह भी साथ ही खा लेगा।

शर्मा एक बार तो चुप खड़ा रह गया फिर मुझसे नजरें चुराकर बोला, ''सर, आप शुरू करो, वह बाद में रसोइये के साथ ही खा लेगा।''

''अच्छा ...पर मैं तो चाहता था कि वह हमारे साथ ही भोजन ग्रहण करता। सुबह की दुर्घटना से वह काफी घबरा गया है। और फिर उसे सिर पर चोट भी तो आयी है। यह तो किस्मत अच्छी थी जो हम सब सुरक्षित बच गए, वरना जीप की हालत देखकर तो कोई कह ही नहीं सकता कि इसमें यात्रा करने वाले सुरक्षित बच गए होंगे!''

''हाँ ...यह तो किसी चमत्कार से कम नहीं है कि हम सब सुबह सुरक्षित बच गए। वैसे सर, गलती हमारी भी है जो हमने एक दिन पहले यात्रा शुरू नहीं की बल्कि तारीख़ वाले दिन ही सुबह चार बजे यात्रा शुरू की। ...और ड्राईवर को आदेश दे दिया कि दस बजे तक कोर्ट में पहुँचा दे ...अब कम से कम पाँच घण्टे लगते हैं हिसार से चण्डीगढ़ पहुँचने में। ...सुबह-सुबह कितनी भी जल्दी यात्रा शुरू कर लो ...ड्राईवर पर तो दबाव रहता ही है कि जल्दी पहुँचना है ...!''

''तभी तो कह रहा हूँ कि ड्राईवर को भी बुला लो। साथ बैठेगा, खाना खाएगा, थोड़ी देर बोल-बतला लेगा तो वह भी तनाव मुक्त हो जाएगा।''

मैंने कहा तो शर्मा ने बड़े ही आश्वस्त भाव से कहा, "सर...वह आपसे शर्माता है। एक तो आप अफ़सर हैं। दूसरा आपको शायद पता नहीं है कि वह जाति का भी चमार है।...अब थोड़ी झिझक तो रहती ही है न!"

शर्मा ने चमार शब्द का उच्चारण करते हुए उस पर अतिरिक्त जोर दिया

और चेहरे की भाव-भंगिमा भी अतिरिक्त रूप से सिकोड़ ली थी। मुझे समझते देर न लगी कि शर्मा ही नहीं चाहता कि वजीर सिंह, ड्राईवर, हमारे साथ बैठकर भोजन करे। मैंने उसकी आँखों में ताकते हुए पूछा, ''शर्मा, सुबह हम कितने लोग थे गाड़ी में?''

मेरे प्रश्न पर वह हँसता हुआ बोला, 'सर ड्राईवर मिलाकर छह लोग थे ...पर अब आप यह क्यों पूछ रह हैं?'

''जरा सोचो शर्मा...अगर सुबह हम छह जन उस दुर्घटना में वहीं मर-खप गए होते तो क्या होता...?''

''क्या पता क्या होता सर! मरने के बाद कोई देखने थोड़ी ही आता,''...उसने लापरवाही से कहा तो मुझे गुस्सा आ गया, ''...मैं बताता हूँ तब क्या होता! ... तब हमारी लाशें खून से लथपथ एक-दूसरे से लिपटी पड़ी होतीं। ...और वहाँ से उठाकर हमें पोस्टमार्टम रूम में भी ऐसे ही पटक दिया जाता। ...तब किसी ने यह नहीं पूछना था कि हममें से कौन किस जाति से सम्बन्धित है!...''

पता नहीं शर्मा को कुछ समझ आया या नहीं पर वह हड़बड़ाता हुआ बोला, ''सर ...सर ...मैं अभी वजीर को बुला कर लाता हूँ।'' ...और वह वजीर-वजीर की टेर लगाता हुआ भोजन कक्ष से बाहर चला गया था।

दर्द

''डॉक्टर साहब! लगता है यह सिर के दर्द का रोग तो मेरी जान लेकर ही रहेगा।'' विजय ने दोनों हाथों से अपना सिर पकड़ते हुए कहा।

डॉक्टर कुमार ने गौर से विजय का चेहरा देखा और अपने कम्प्यूटर का की-पैड संभाल लिया। सॉफ्टवेयर में नाम, उम्र वगैरह भरते ही स्क्रीन पर सवालों की लम्बी फेहरिस्त उभर आयी। वह एक-एक कर विजय से सवाल पूछने लगे और की-पैड पर उँगलियाँ चलाते हुए अपने कम्प्यूटर में जवाब दर्ज करने लगे।

विजय के गृहस्थ जीवन से संबंधित कुछ निजी सवाल भी उन्होंने पूछे। एक सवाल बच्चों के विषय में भी उन्होंने विजय से पूछा तो जवाब में विजय ने उन्हें बताया, ''जी मेरे पास तीन बेटियाँ हैं। मेरी बड़ी बेटी 'ऑटिस्टिक' है।''

डॉक्टर कुमार की उँगलियाँ की-पैड पर रुक गईं। उन्हें उत्सुकता हुई। विजय की तरफ रुख करते हुए डॉक्टर कुमार ने पूछा, 'कितनी उम्र है बेटी की?'

''विजय ने काँपती आवाज़ में बताया कि उसकी उम्र आज लगभग पच्चीस वर्ष के करीब हो गई है।

''पढ़ती है कुछ ...? मतलब स्कूल वगैरह जाती है?''

''स्पैशल स्कूल में जाती है। ...पढ़ती तो नहीं है बस यूँ ही थोड़ा टाईम पास कर आती है वहाँ पर।''

''फिज़िकली ठीक है ...?''

''इस मामले में तो परमात्मा का शुक्र है डॉक्टर साहब कि मेरी बच्ची बिल्कुल ठीक है। वरना इस तरह के अन्य बच्चे तो फ़िज़िकली भी हैंडीकैप ...'' आगे के शब्द विजय की जुबान पर आते-आते रह गए।

''अपने रोजमर्रा के कार्य कर लेती है?''

''दूसरे की मदद से ही कर पाती है।''

''उसकी समझ कैसी है ...? मतलब ..क्या वह अपनी ऐज के अकोर्डिंग ...

''समझ तो उसकी तीन-चार साल के बच्चे जैसी ही है...!'' विजय ने डॉक्टर कुमार के सवाल को पूरा होने से पहले ही जवाब दे दिया था। डॉक्टर कुमार बेचैन-से हो उठे। बोले, ''यहीं तो आप चूक गए!''

विजय के चेहरे पर ढेरों सवाल उग आये थे। डॉक्टर कुमार बोले,'' होम्योपैथी में ऐसे बच्चो के लिए एक बहुत अच्छी दवा है। उस दवाई के हमने अन्य बच्चों पर बहुत अच्छे रिजल्ट देखे हैं।...मैं यह दावा भी नहीं करता कि इस दवाई के प्रयोग से इस तरह के बच्चे पूरी तरह से ठीक हो जाते हैं। ...पर यदि यह दवाई बच्चे को बहुत शुरू से शुरू करके लम्बे समय तक खिलाई जाये तो उसके व्यवहार में थोड़ा बहुत फ़र्क जरूर पड़ता है। ...मैं कहना चाहता हूँ कि आज आपकी बेटी की समझ भी ज्यादा नहीं तो दस-बारह अथवा तेरह-चौदह वर्ष के बच्चे जैसी जरूर होती।''

''...आप मेरी पच्चीस वर्ष की बच्ची को ...तीन-चार साल की छोटी बच्ची ही रहने दें, डॉक्टर साहब।''...विजय की आवाज मानो बहुत दूर से आयी थी।

''क्यों ...क्या आप नहीं चाहते कि आपकी बच्ची बड़ी हो जाए ...मतलब उसकी समझ पहले से और अच्छी हो जाए?''

"डॉक्टर साहब! ...मेरा तो यही ख्वाब है कि वह बिल्कुल ठीक हो जाये। वह खूबसूरत लड़कियों की तरह से उठे-बैठे, चले-फिरे! खूब हँसे-खिलखिलाये! ...वह खूब पढ़े-लिखे! ...फिर उसकी शादी हो! उसका दूल्हा घोड़े पर बैठकर आए ...एक राजकुमार की तरह से ही ...उसे ब्याह कर ले जाये ...दो जोड़ी कपड़ों और ...एक रुपये के दहेज में ...मात्र! ...नहीं-नहीं डॉक्टर साहब.. उसे बच्ची ही रहने दो ...उसे बड़ा मत होने दो .. उसे अच्छा मत करो ...आह! ...मेरा सिर!...यह दर्द ...'' कहते-कहते उसने अपना सिर दोनों हाथों से जकड़कर अपने ही सीने में छुपा लिया था।

-93552-21504, 94671-71504.

राम करन

कृतघ्न

वह रेलवे के पार्सल ऑफिस में खड़ा था। पार्सल बाबू किसी ट्रैन से पार्सल उतरवाने दूसरे प्लेटफार्म पर गया था। वह प्लेटफार्म को देखने लगा। प्लेटफार्म एक छोटे से मेले जैसा लग रहा था। कोई आ रहा था तो कोई जा। हॉकर दौड़ रहे थे। दुकानें थी और शोर था। कुछ बच्चे चिल्ल–पों कर रहे थे। कौन सी गाड़ी किस प्लेटफार्म पर आएगी और कौन किस से जाएगी, की घोषणा लगातार हो रही थी। जैसे मेले में होता रहता है। तभी हलचल तेज हो गई। एक पैसेंजर ट्रेन आकर प्लेटफार्म एक पर खड़ी हो गयी। यात्री उतरने लगे। प्लेटफार्म हुजूम से भर गया। लोग अपना सामान हाथ में लटकाए या सिर पर लादे चल रहे थे। बच्चे बड़ों की अंगुलियां थामे थे। धीरे–धीरे भीड़ हल्का हो गया। तभी उसकी नजर एक आती हुई महिला पर पड़ी। विशेषकर इसलिए कि उसे लगा कि महिला उसे ही देख रही थी। उसने महिला से नजर हटाकर दूसरी तरफ देखने लगा। महिला प्लेटफार्म पर चलते–चलते ओझल हो गई। थोड़ी देर बाद वही महिला दूसरी तरफ से वापस आती हुई दिखी। प्लेटफार्म लगभग खाली हो चुका था। महिला इस बार भी उसे देख रही थी। उसे गुदगुदी होने लगी। एक रहस्यमयी खुशी के एहसास उसे पूरे शरीर में झुरझुरी हुई। उसने अपने ड्रेस को ठीक किया। फिर उसे शक हुआ प्रश्नवाचक नेत्रों से देखने लगा। उसने फिर से अपना कालर ठीक किया। महिला और पास आ गयी। आते ही बोली– 'एक कुली की जरूरत है...?'

उसकी गुदगुदी और झुरझुरी गायब हो गयी। उसने अपने टी–शर्ट को देखा। वह लाल रंग का था। उसे अजीब सी मिचलाहट हुई। तो मोहतरमा उसे कुली समझ रही थी। उसका दिमाग झनझना गया। बोला – 'खोजिए, मिल जायेगा।'

'एक मिला था।'

'मतलब...?'

'बहुत पैसा माँग रहा था...।'

'वो तो मांगेगा..।'

उसकी नीरसता पूर्ण जवाब से महिला को निराशा हुई। उसका चेहरा उदास दिखने लगा। वह एक कदम पीछे हटकर चलने को हुई तो उसने कहा – 'किस सवारी से जायेंगी?'

'बाहर तो ऑटो कर लूँगी।'

'तो एक काम करिए...उसी ऑटो वाले से कह दीजिएगा वह आपका सामान उठा ले जायेगा,' उसने सलाह दिया।

'ऑटो वाले से कहा था। वह बोला कि कुली लोग प्लेटफार्म से लगेज नहीं उठाने देते....हां, अगर किसी तरह से बाहर गेट के बाहर हो जाए तो वह उठा लेगा।'

उसने गेट की तरफ देखा। गेट प्लेटफार्म से दूर नहीं था। बोला– 'क्या सामान है?'

'ज्यादा नहीं तीन छोटी–छोटी गेहूँ चावल–गेहूँ की बोरियां हैं,' महिला ने बोरियों की तरफ इशारा किया।

उसने बोरियों को मन ही मन तौला। पकड़ने के लिए दो आदमी तो चाहिए ही – 'आपके साथ कोई नहीं है?'

'बेटा है...,' बोरियों के पास एक छः–सात साल का लड़का खड़ा था। फिर बात अटक गयी। लेकिन महिला कुछ सोचकर बोली – 'एक तरफ से मैं पकड़ लूँगी।'

इसका मतलब समझते उसे देर नहीं लगी। एक क्षण वह झिझका। पर फिर बोला – 'चलिए।'

दोनों ने दोनों सिरे से बोरियों को पकड़कर गेट के बाहर किया। लेकिन इस दौरान वह सहमा सा था कि कोई परिचित उसे यह सब करते देख न ले। तीनों बोरियां जैसे ही बाहर हुई वह झट से मुड़ कर दूर हो गया और पार्सल ऑफिस की तरफ चलने लगा। लेकिन अब उसे विचित्र सी बेचैनी होने लगी। पश्चाताप भी। उसे लगा कि जैसे किसी ने बेवकूफ बना दिया हो। वह सोचने लगा – कितनी कृतघ्न महिला थी। एक बार 'धन्यवाद' भी नहीं बोली। बेकार ही वह मासूम चेहरे पर फिसल गया। पार्सल बाबू आ गया था। वह ऑफिस में घुसा कि उसके कानों में आवाज आई– 'थैंक यू सर!'

वह झेंप कर रह गया। उसने कनखियों से देखने की कोशिश की। महिला वापस जा रही थी। वह उसके चेहरे को याद करने की कोशिश करने लगा। किन्तु चेहरा नजर नहीं आ रहा था। बस एक मीठी आवाज उसके अंदर गूँज रही थी – थैंक यू सर!

कंपन

संतलाल के हाथ, पाँव को जैसे शहर का रास्ता मालूम था। उसके पैर खुद–ब–खुद पैडल पर चल रहे थे। हाथ अपने आप हैंडल को दिशा दे रहे थे। वह तो कहीं और खोया था। शहर के चौक में जाकर वह रोबोट सा खड़ा हो गया। ग्राहक आने लगे। एक साहब के साथ मजदूरी तय हुई और वह उनके पीछे चला। मकान तिमंजिला था। बाँसों को जोड़कर वह सीढ़ी बनाने में लग गया। ऊंचाई पर काम करने में वह माहिर था। सधे हाथ–पैरों से वह ऊँचे से ऊँचे मंजिल पर

काम करने के लिए वह खुद ही आतुर रहता था। आसपास वाले कामगारों को भी यह बात पता था। इसलिए ऐसे कामों के लिए उसे ही आगे किया जाता। सब इसे बन्दर का चेला कहते।

तिमंजिले पर चढ़ने के लिए बांस की सीढ़ी तैयार हुई तो चार आदमी उसे खड़ा करने में लगे। दो मजदूर सीढ़ी को नीचे से थामे। उसे ऊपर चढ़कर पुताई करना था। पुट्टी लेकर वह चढ़ने लगा। पल भर भी नहीं लगे कि वह ऊपर पहुंच गया। नीचे सीढ़ी पकड़कर खड़ा मजदूर गर्दन उचकाकर उसे देख रहा था। किन्तु अगले ही क्षण जो उसने देखा उस पर उसे विश्वास नहीं हुआ। संतलाल सीढ़ी पर चिपक गया था। उसके हाथ-पांव काँपने लगे। नीचे खड़े मजदूर के होश उड़ गए। वह घबराकर चीखा – 'क्या हुआ..अ अ आ....?'

इसका जवाब तो नहीं आया पर उसने देखा कि उसके हाथ से बाल्टी छूट गयी थी और वह नीचे आ रही थी। उसने अपना सिर बचाया और बोला – 'नीचे आ जा..।'

किन्तु संतलाल के पांव में जैसे भूकम्प उतरा हुआ था। वह जहां था जड़वत पड़ा था। उसे कुछ सुनाई और दिखाई नहीं पड़ रहा था। उसके सामने तो एक ही दृश्य घूम रहा था – वह था राम तेज का। जो दिल्ली में बिल्डिंगों की पेंटिंग करता था। दो दिन पहले वह गिर गया था। कल उसकी लाश आयी थी।

ढुनमुन

जब पिछली बार प्रधानी की सीट अनुसूचित घोषित हो गयी तो बाउजी ने ढुनमुन से कहा कि वह चुनाव लड़ जाय। ढुनमुन ने ऐसा कभी सपने में नहीं सोंचा था। उसके लिए तो बाउजी ही प्रधान थे। आज से नहीं अनादि से। उसने बाउजी के पैर पकड़ लिए – 'इ का कह रहे हैं बाउजी....हम्मै नरकवौ में ठौर नाहीं मिली।' बाउजी समझ गये कि ये गुलामी का खून है। इसमें कोई उफान नहीं होगा। सो उन्होंने ढुनमुन के बेटे नरसू को बुला भेजा। वह बीस साल का युवा था। बाउजी की बात उसके लिए आशीर्वाद था। वह चुनाव में खड़ा हो गया और बाउजी की मदद से जीत भी गया।

बाउजी बड़े सैद्धांतिक आदमी थे सो उन्होंने पाँच साल के लिए नरसू को नहीं छेड़ा। इस बीच जैसे-जैसे ढुनमुन के घर की हालत ठीक होती गयी उसकी और उसकी शारीरिक कमजोरी बढ़ती गयी। उसे अब विश्वास होने लगा था कि उसका बेटा जो अब नरसू से नरेन्द्र बन गया था घर-परिवार सम्भाल लेगा। ऐसे में ढुनमुन ने एक दिन बाउजी के दरबार में अर्जी लगाई कि उसकी तबियत ठीक नहीं रहती सो उसको काम-धाम से थोड़ी सहूलियत मिले। बाउजी ने सोंचा – घर में आटा-दाल रहता है तो शरीर पर चर्बी चढ़ ही जाती है। उन्होंने उसकी प्रार्थना

स्वीकार कर ली। अब ढुनमुन कभी-कभार ही कोठी में दिखाई देता।

समय बीता और दूसरे प्रधानी का चुनाव आ गया। इस बार सीट सामान्य हो गयी। सबको पता था कि प्रधानी तो अब बाउजी की। लेकिन सारे भ्रम में थे, क्योंकि नरेंद्र अब पुराना नरसू नहीं रह गया था। सो उसने ने सबको चौंका दिया - वह फिर से मैदान में था। इस समाचार से धक्का खाने वाला पहला व्यक्ति उसका बाप ढुनमुन ही था- बाप रे बाप! ...बाप न दादे, पूत हरामजादे! ढुनमुन के पांवों तले से जमीन खिसक गयी। बोला- 'बिटवा, बाउजी के खिलाफ ऐइसन हिमाकत ठीक नाहीं।' लेकिन पांच सालों में नरेंद्र ने बहुत खुला आसमान देख लिया था। ढुनमुन का दिल धड़-धड़ बजता था लेकिन कहीं कोने में हल्की सी खुशी थी कि कौन जाने कुछ अच्छा हो जाय।

ढुनमुन किंकर्तव्यविमूढ़ था कि क्या करे, क्या न करे। कभी मन करता कि बाउजी के पास जाकर कहे कि नवा लइका है, नासमझ है। लेकिन हिम्मत नहीं थी। ऊपर से डर भी लगा था कि कहीं नरसू के साथ कोई अनहोनी न हो जाय। सो वह उसके पीछे-पीछे लगा रहता। आखिर में बाउजी के आमने-सामने चुनाव हुआ और मतगणना का दिन आ गया। ढुनमुन की धुकधुकी बढ़ गयी। मतगणना चल रही थी। सब कैंडिडेट अपन-अपने दल के साथ बाहर डेरा डाले पड़े थे। ढुनमुन चादर में मुँह छिपाए था। डर लग रहा था कि कहीं बाउजी के सामने न पड़ जाय। लेकिन जिसका डर था वही हुआ। एक हरकारे की आवाज से हिल गया- 'ढुनमुन....बाउजी बोलावत...।'

उसके मन में आया कि वह उल्टे पाँव कहीं भाग जाय। पर कुछ समझ नहीं पा रहा था। ऑटोमैटिक मशीन सा वह चलकर बाउजी के सामने हाथ जोड़कर खड़ा हो गया- 'बाउजी....।' वह काँपने लगा।

बाउजी की भारी आवाज जैसे लोहार के घन सा उसपर पड़ा - 'तू मुँह भी चुराने लगा..।'

'मुँह देखावै लायक नाहीं हइ सरकार।' बाउजी की जगह सरकार ने ले लिया।

'अब तो खिलाड़ी हो गया है...।'

'ऐइसन न कही सरकार.....का करें लड़िका नालायक निकरि गै....हम तो खुद आपन वोट आपै के....।'

'झूठ भी बोलता है।'

'बीसों नह में कोढ़ फूटै जो मुँह से गलत निकरै,' उसने अपने जुड़े हाथों से पैरों के नाखून दिखाए।

बाउजी को पता नहीं विश्वास हुआ कि नहीं, पर उन्होंने कहा - 'कल आना।' वह धीरे-धीरे खिसकने लगा। पर पैर थे कि उठ ही नहीं रहे थे। किसी तरह दूर

जाकर बैठ गया और धड़कते दिल को संभालने की कोशिश करने लगा। बेचैनी बहुत हो रही थी। मन करता था कि खूब गहरी नींद आ जाये और वह बेसुध सो जाय। पर नींद नहीं आ रही थी। उधर नरसू उसे ढूंढ़ता हुआ आ गया – 'का हुआ दादा? पसीना काहें....?'

'बाउजी बोलाए रहे...।'

'हाँ, पता है। का भवा?'

'हम डर गये रहे बिटवा...मुँह से निकरि गवा कि हम बाउजी वोट दई दिये. ..लेकिन इ झूठ है...।'

'का हम ज
जानित नाहीं...तू चिंता जिन करा...।'

ढुनमुन नरसू के कंधे पर सिर रखकर फफक पड़ा।

– 8299016774

शर्मिला चौहान

बैलेंसिंग

पहाड़ी सर्दियों की सुबह नदी के किनारे बैठा रामदीन, आज भी कुछ चिकने पत्थरों को संतुलित करने में लगा है।

अस्सी साल का वृद्ध, इसी गाँव में पैदा हुआ पला बढ़ा है।

बचपन में इस नदी के वेगवान पानी को, अपने बर्तनों में समेट लेने में जो आनंद आता था, वह आज भी वही अनुभूत करना चाहता है।

सर्दियों में ठिठुरते सूरज की एक दो दबंग किरणें, नदी के पानी पर चमक रहीं थीं।

'मेरे बूढ़े शरीर की तरह तुम भी सिकुड़ गई हो।' लकड़ी के सहारे कृशकाय नदी के पानी तक पहुँचने की कोशिश थी रामदीन की। हमेशा किनारों पर बैठकर रामदीन पत्थरों को एक पर एक जमाता, यही उसके जीवन को संतुलित और स्फूर्त बनाए रखता है।

किनारों की ऊँचाई तक, लहरों की अंगड़ाइयों के निशान बना करते थे। रामदीन ने महसूस किया, अब नदी की साँस फूल जाती है। उसकी तलहटी के रंग-बिरंगे चिकने पत्थर, जिन्हें वह जवाहरातों की तरह, बंद डिब्बे में सुरक्षित रखा करता था, अब धूसर, मटमैले से दिखते हैं।

पहाड़ी गाँव, रहन सहन, बदलती मानसिकता और बँटते लोगों का साक्षी रामदीन, आज भी नदी को स्पर्श करना चाहता है।

'अरे चाचा, कहाँ चले। आपको मालूम नहीं है क्या, लोगों ने अपनी जरूरतों के हिसाब से नदी के किनारे बाँट लिए हैं। यह अब अपने इलाके में नहीं आता, चलिए बहुत आगे है अपना किनारा।' रामदीन का हाथ पकड़ कर, एक नौजवान ने बताया।

'नदी के किनारे भी बँट गए, कब, कैसे?' बड़बड़ाते हुए रामदीन ने जाते जाते अपनी लाठी से, खुद के बैंलेस किए पत्थरों को गिरा दिया था।

अर्धांगिनी

फोन पर मैसेज चैक करते हुए राकेश ने अपनी पाँच सितारों जड़ी अंतिम तनख्वाह को जी-भर निहारा। तनख्वाह के स्वागत में, बैंक एकाउंट एकदम उछल गया है।

'बाबूजी, सरकार रिटायरमेंट की उम्र बढ़ाने वाली है। दो साल आप और काम कर लेंगे तो घर की मरम्मत, पेंटिंग बढ़िया हो जाएगी।' आज सुबह ही राकेश के

बेटे सुदीप ने कहा था।

'तुम दोनों ने तो अपना फ्लैट बुक कर लिया है। इस घर की मरम्मत से क्या सरोकार है?' मायके आई राकेश की बेटी ने अपनी भाभी को घूरते हुए कहा।

'बाबूजी, शादी के वक्त आपने मेरे लिए हीरों का टॉप्स नहीं लिया था, आपकी नौकरी दो साल बढ़ गई तो मुझे वो टॉप्स चाहिए।' ठुनकते हुई शादीशुदा बिटिया, अब भी ऐसे कह रही थी जैसे बचपन में चाकलेट माँगा करती थी।

राकेश के कानों में सुबह फोन पर बोले अपने बाबूजी के शब्द गूँज रहे थे, 'अगले महीने रिटायर हो जाओगे तब जो पैसा मिलेगा, उससे गाँव के घर का भी थोड़ा देख लेना। अब छोटे के सिर पर उसके बच्चों की पढ़ाई-लिखाई खड़ी है।'

स्कूटर पर कपड़ा मारते राकेश के पास, उनकी पत्नी रमा आ गई।

टिफिन, बैग हाथ में पकड़ा दिया। ब्लड प्रेशर की दवा हथेली पर धर दी। पानी पकड़ाते हुए फुसफुसाई, 'बहुत काम कर लिया है आपने, आजकल तबियत जल्दी बिगड़ जाती है। जरूरतों का ऊँट कभी बैठता है भला, आराम के लिए और समय कब आएगा!' स्नेह-भरे, अँगुलियों के स्पर्श से, अपनेपन और प्रेम की तरंग हृदय तक पहुँच गई। रमा की सौम्य उपस्थिति से, राकेश को अपना बायां अंग मजबूत लगने लगा।

'खुशखबरी है भाई, खुशखबरी। सरकार ने नौकरी की उम्र में दो साल की बढ़ोत्तरी, स्वीकार कर ली है। इस माह के अंत तक नियम लागू भी हो जाएगा।' राकेश के सहकर्मी मोहन ने टेबल ठोककर, घोषणा की और राकेश चौंक पड़ा।

'हमारे राकेश बाबू को सबसे ज्यादा फायदा हुआ भाई, अब दो साल और सरकारी तनख्वाह लेंगे।' दूसरे सहकर्मी ने जोरों से कहा। ना जाने क्यों राकेश को अपना बायां अँग ढीला लगने लगा।

ऑफिस का हिसाब किताब जीवन भर दक्षता से संभालने वाले एकाउंटेंट ने, जीवन की सर्विस बुक की तरफ नजर दौड़ाई। घर-वापसी से पहले राकेश ने, अपने स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के फार्म पर हस्ताक्षर कर दिए।

टूटता तिलिस्म

माँ के पेट से ही उसकी जंग शुरू हो गई थी। माँ के चलने, बोलने, उठने और शरीर के आकार से, गर्भ में ही उसकी टोह ली जाने लगी। दुनिया की चुभती नजरों से डर कर, वह उल्टी घूम गई।

'पैरों के बल जन्मी है, कैसे लच्छन दिखाएगी पता नहीं।' पैदाइश पर स्वागत हुआ था उसका। सिमट कर माँ के पेट से चिपक गई थी वो।

'काहे सकूल जाएगी, कौन कमाई खानी है इसकी। रोटी पोने, बच्चे पैदा करने और घर-गिरस्थी चलाने के लिए सकूल जाने की का जरूरत?' कंधें पर बस्ता

लिए, स्कूल जाने वाले वाले हमउम्रों को देखकर, हीनता के एक और आवरण में वो सिमट गई थी।

अनदेखे, उम्र में बड़े व्यक्ति के साथ जीवन भर के लिए बाँध दिया था, माँग में सिंदूर, हाथों में चमकती चूड़ियों के बीच वह गृहस्थी का स्वांग रचाने लगी।

जरूरतों के हिसाब से उसके बंधन कसे जाते और ढील दी जाती। रिश्तों के महीन धागों में, किसने उसे कितना और कब लपेटा, मालूम नहीं।

मकड़ी की तरह बुनते, उलझते, निकलते कब उम्र पचास पार कर गई, पता नहीं चला।

आज भी उन परतों में घिरी वो अपनी सवा महीने की पोती का झूला हिला रही है। पोती की मासूम हँसी में उसने अपनी वर्षों पुरानी वेदना महसूस की।

'रंग दबा हुआ है, ऐसी लड़कियों के शादी-ब्याह में बड़ी परेशानी होती है।' आशीर्वाद कार्यक्रम में आई औरतों में से एक तीर छूटा।

ढाल बनकर आज वह तन गई। सारे मायाजाल को एक ही वार में काट फेंका।

'इसका रंग दबा है पर बुद्धि नहीं। भविष्य में यह साबित कर दिखाएगी कि दो पीढ़ियों की इच्छाशक्ति जब जुड़ जाती है तो सारी दुनिया के झूठे तिलिस्म को चूर कर देती है।' उसने झूले को हिलाया और अब उस कमरे में, दो औरतों की हँसी गूँजने लगी।

–9967674585

ज़रूरी है नवोन्मेषी साहित्य-सृजन

सूर्यकांत नागर

लघुकथा की स्वीकार्यता, लोकप्रियता और महत्ता में जो वृद्धि हुई है, उसे कायम रखने की जवाबदारी लघुकथाकारों की ही है। कई बार एक ठहराव-सी स्थिति नज़र आती है। वही-वही विषय, वही-वही विमर्श। विधा को नई ऊँचाइयाँ देने के लिए कुछ नया करना होगा। नए विषय, नया शिल्प तलाशना होगा। कुछ विषय और मुद्दे ऐसे हैं, जिन्हें बार-बार दोहराया जा रहा है। सभा-कक्ष में दरवाजे बंद कर बौद्धिक बहस करने से विधा का हित नहीं होगा। ऐसे में कथा कमरे में कैद होकर रह जाएगी। विधा को जड़ होने से बचाना ज़रूरी है। नयापन पकड़ने की कोशिश होनी चाहिए। नवोन्मेषी साहित्य-सृजन आवश्यक है। उन्मेष का नैरंतर्य ज़रूरी है। हमें अधिक उदार होना पड़ेगा। तभी ढाँचे से बाहर आया जा सकेगा। विधा को साहित्यिक और सामाजिक दोनों स्तर पर सही उतरना होगा। विषय पुराना हो, तब भी दृष्टि सूक्ष्म और मौलिक होनी चाहिए। शिल्पगत नवीनता होनी चाहिए। समय का दबाव, जरूरतें और लेखकीय प्रयास और प्रतिभा ही विधा को आगे बढ़ाते हैं। समकालीनता आज के लेखन की बड़ी विशेषता है। बाज़ारवाद के मायावी षड्यंत्र, विश्वव्यापी आतंक, परस्पर बढ़ता, अविश्वास, लिव इन, समलैंगिकता, विश्वयुद्ध की कगार खड़ा संसार, विस्तारवादी नीति, मानवीय एवं जनतांत्रिक मूल्यों का ह्रास और राजनीति को पतनोन्मुखता जैसे विषयों पर नए सिरे से विचार करना होगा। स्मरण रहे, लघुकथा न पत्रकार का यथार्थ है, न इतिहासकार का इतिहास बोध, न धर्माचार्य का धर्मोपदेश और न आदर्शवाद का यूटोपिया।

एक मुद्दा जिस पर मतभिन्नता है और जिस पर लंबे समय से बहस होती रही है, वह है लघुकथा के आकार-प्रकार का। कई वरिष्ठ लघुकथाकारों का मत है कि लघुकथा के आकार-विस्तार पर लगाम नहीं लगनी चाहिए। रचनात्मकता के संबंध में कोई अंतिम फतवा ज़ारी नहीं किया जा सकता। रचना के विधान से ज्यादा ज़रूरी है रचना-संसार। लेकिन यह न भूलना चाहिए कि हर विधा का अपना एक अनुशासन होता है, सीमा और शक्ति होती है। रचना को मोटे तौर पर विधा के दायरे में रहना चाहिए। न भूलें कि 'लघुता' लघुकथा का मूलाधार है। हम मूल को कैसे विस्तृत कर सकते हैं! यदि लघुकथा तीन-चार पृष्ठों में फैली हुई है तो कहानी और लघुकथा में क्या अंतर रहेगा? विस्तार एक तरफ रचनाकार की सामर्थ्य पर प्रश्न चिन्ह लगाता है तो दूसरी तरफ खुद अपनी तथा पाठक की समझ पर प्रश्न चिन्ह लगाता है। ऐसे में उस कथन का क्या होगा जिसमें कहा जाता है कि लघुकथा में जो अनकहा है,

वही कहे गए की ताकत है। और यह भी कि लघुकथा में शब्द सीमित और चिंतन असीमित होना चाहिए। वस्तुतः लघुकथा ऐसी लक्षण-रेखा है जिसके अंदर रहकर ही शस्त्र-साधन करना चाहिए। जैसा कि अशोक भाटिया ने कहा था कि लघुकथा छोटी होते हुए भी शिल्प और सांकेतिकता के बल पर अपने आकार का अतिक्रमण कर, अपनी ताकत दूर तक फैलाती है। प्रतीकों और प्रयोगों द्वारा रचना को संश्लिष्ट और प्रभावी बनाया जा सकता है। ध्यान रहे, प्रयोग कोई सजावट की चीज नहीं है, वह रचनात्मकता का ही एक रूप है।

दरअसल लघुकथा 'स्लाइस ऑफ लाइफ़' है। एक फाँक, एक टुकड़े में जिंदगी का पूरा आभास मिलना चाहिए। और प्रयोग से ही प्रगति संभव है। यदि छायावादी कविता सीमा नहीं लाँघती तो क्या नई कविता जन्म हुआ होता ,?

लघुकथा का आलोचना-पक्ष संतोषजनक नहीं है। साहित्य की विभिन्न विधाओं में संभवतः आलोचना ही सर्वाधिक विवादास्पद, अनुर्वर और अविश्वसनीय विधा है। प्रायोजित समीक्षाओं, आलोचनाओं ने लघुकथा की विकास-यात्र को बाधित किया है। आज आलोचना पूर्वाग्रहों का विकृत चेहरा बन गई है। आलोचना यदि गुटपरस्त, शिविरबद्ध या लिंग आधारित होगी तो रचना तो चाहे एक बार बच भी जाए, आलोचना की इज्ज़त मिट्टी में मिल जाएगी। ईमानदारी से, राग-द्वेष से मुक्त निष्पक्ष आलोचना अपनी उदात्तता में वही दर्जा पा सकती है जो रचना का है। यदि मुख्यधारा के समृद्ध, वरिष्ठ, स्वतंत्र आलोचक लघुकथा आलोचना में हस्तक्षेप करेंगे तो मौलिक दृष्टि सामने आएगी। उम्मीद की जानी चाहिए कि साहित्य के गंभीर आलोचक, आलोचना को भी प्रतिष्ठा का प्रतिमान मानकर वांछित हस्तक्षेप करेंगे।

लघुकथा में अध्यात्म-दृष्टि की न्यूनता है। अध्यात्म का लक्ष्य है मनुष्य का अंतःकरण खुले। मन-मस्तिष्क सक्रिय हो। उसमें प्रेम, अहिंसा, करुणा, सहानुभूति और सात्विकता का भाव जागे। सदाचारी बनने की प्रेरणा मिले। मुख्य चिंता मनुष्यता को बचाने की होनी चाहिए। अध्यात्म मनुष्य की विवेक-शक्ति को जागृत करता है। मानसिक जड़ता को तोड़ता है। कुछ लघुकथाएँ निश्चय ही इस दर्शन की पूर्ति करती हैं। पर अभी बहुत कुछ किया जाना शेष है। यह स्पष्ट होना चाहिए कि अध्यात्म का संबंध किसी धार्मिक विचारधारा से नहीं है। 'अच्छे पड़ोसी', अंधेरा 'संजीव कुमार), 'पाषाण पल्लव' और 'ब्रह्मांड से बड़ा' (वसुधा गाडगिल), तू तो फिर व जन्म ही न ले 'चैतन्य त्रिवेदी), ईश्वर की पूजा (गिरीश पंकज), प्रेम (अमरीकसिंह दीप), आग 'सुरेश शर्मा), 'सूई और तलवार' (राजेन्द्र वर्मा) 'आर्द्रता' (संतोष सुपेकर), सुकेश साहनी, अशोक भाटिया, भगीरथ परिहार आदि की रचनाओं में अध्यात्म का पुट है। सकारात्मक सोच की इन रचनाओं से बेहतर समाज-निर्माण की प्रेरणा मिलती है। मुद्दे और भी हो सकते हैं। उन पर गंभीरतापूर्वक चिंतन कर ऐसी लघुकथाओं का सृजन करना चाहिए, जिससे विधा की साख और नैरंतर्य बना रहे।

-9893810050

लघुकथा का शिल्प

महेश दर्पण

'लघुकथा' विधा असल में लघु कथा नहीं है। प्रारम्भ में लंबे समय न सिर्फ इस पर भ्रांति रही, वाद, विवाद और संवाद भी हुए। मिनी या लघु कहानी को ही लघुकथा मानते हुए अनेक रचनाकारों ने कहानी के संक्षिप्त रूप को एक अलग विधा के रूप में प्रतिषष्ठित करने की चेष्टा की। किंतु जल्द ही यह भ्रांति खत्म हुई और लघुकथा के तत्वों तथा उसके शिल्प की ओर ध्यान देना प्रारम्भ हुआ।

लघुकथा का प्रारंभिक रूप इन विवादों से परे था क्योंकि वहां किसी विधा की शुरुआत से अधिक अपनी बात कहने की चिंता ही प्रमुख रही। इस विधा के इतिहासकार लघुकथा का प्रारंभिक रूप जिन लघुकथाओं में देखते हैं, उनमें उपदेश, नीति, आदर्श का तत्व अधिक मिलता है। वहां जीवन जीने के नियम, आदर्श या तरीके बताने-समझाने का प्रयास नजर आता है। जैसे-जैसे इस विधा ने विकास किया, इसके शिल्प और स्वरूप में भी परिवर्तन हुआ और इसके रचने की प्रक्रिया में कुछ नवीन तत्वों का भी समावेश हुआ।

लघुकथा के शिल्प पर बात करने से पूर्व यह समझना जरूरी है कि आखिर लघुकथा है क्या? क्या यह गद्यगीत का एक रूप है या जिंदगी का कोई स्नैप शॉट! मेरी समझ में दरअसल, जो हम कहानी में न कह सकें, वह लघुकथा में इस तरह से कहें कि कोई विशेष जीवन स्थिति, कोई एक महत्वपूर्ण या साधारण घटना, किसी चरित्र का कोई जेस्चरविशेष या प्रकृति का कोई चित्र जो कहानी के दायरे से बाहर होकर भी एक भिन्न कथारूप में बयाँ किया जा सके। वह उतना ही हो, जितना हमें दिख रहा है यथार्थ में भी और कल्पना के विस्तार में भी। उसी रूप में उसकी सम्पूर्ण प्रभावान्विति भी हो सके। वह एक रचनात्मक कथ्य बनकर उपस्थित हो। पर वह न तो कहानी का संक्षिप्त रूप लगे और न ही उसको विस्तार देकर आप कोई कहानी कह सकें।

लघुकथा अपने आप में एक कॉम्पेक्ट फॉर्म है। उसमें हर नई रचना के साथ यह चुनौती सम्मुख रहती है कि रचनाकार की ओर से की जा रही एक नए कथ्य की खोज अपनी कहन का तरीका भी साथ लेकर आये। अपनी प्रासंगिकता के कारण वह खुद खोजे। यह उसे मिलेगा उसकी अर्थवत्ता से। समकालीन यथार्थ से सीधी मुठभेड़ के कारण न कि केवल कम समय में पढ़ लिए जाने के कारण।

लघुकथा के तत्व ही उसे अन्य विधाओं से अलग करते हैं। इसका सबसे प्रमुख और विशिष्ट है- संवेदना तत्व। अनेक विद्वान इसे विरोध या प्रतिरोध की कला का रचना कौशल ठीक ही मानते हैं। उनके लिए यह जीवंत विवेक के संघर्ष की कथा का एक विशिष्ट रूप है। यह अपनी कथावस्तु के चुनाव में

त्वरित वातावरण सृष्टि का गुण लेकर जरूर आती है किंतु आलंकारिक प्रयोगों की अधिकता इसे कमजोर ही करती है। यहां प्रतीक एवं बिम्ब कविता की भांति अधिक प्रभाव पैदा कर सकते हैं।

लघुकथा में वर्णनात्मकता कहन का एक रूप हो तो सकती है किंतु एक लघुकथाकार को अपनी कहन में नए प्रयोग अवश्य करने होंगे। उसकी कथा में तीव्रता, सांकेतिकता के साथ संक्षिप्ति का ऐसा मेल होना आवश्यक है कि वह किसी भी अप्रिय विस्तार से बच सके। अपने चरम बिंदु तक आते–आते वह प्रभावान्विति का ऐसा आवेग रच सके कि लघुकथा पाठक के मन पर अपनी एक जगह ही बना ले। यानी उसमें अपनी भाषा के जरिए एक स्थिर स्मृति चित्र बनने का अदृश्य कौशल मौजूद हो।

इस विधा की शक्ति है इसमें छिपा व्यंग्य और छोटे आकार में ही कोई बड़ी बात कह जाने का कौशल। अर्थात लघुकथा में अर्थव्यंजन का विशेष महत्व है। इसकी शब्द सीमा को कोई इंचटेप से नापकर निर्धारित नहीं कर सकता। हाँ, यथाशक्य सरल, सुबोध और संप्रेषणीय भाषा में इसके कथ्य की प्रस्तुति विधा को आकर्षक अवश्य बनाएगी।

आप माधव राव सप्रे की श्एक टोकरी भर मिट्टीश् को याद कीजिये। कथा के आरंभ से उसके चरम बिंदु तक पहुंचने की प्रक्रिया में लघुकथा के अन्य तत्वों का योगदान कितना प्रभावी है। इस रचना पर बात करते समय अरसा पहले का इसका रचनाकाल भी ध्यान में रखना होगा। आज की लघुकथा ने अपना सबसे महत्वपूर्ण आधार– यथार्थ, यहीं से ग्रहण किया है। भावपूर्ण लघुकथाएं तो इसके बाद भी लिखी जाती रहीं, किंतु क्रमशः इसमें कमी ही आयी।

कालांतर में लघुकथाकारों ने संवाद के महत्व को समझा। सीधे वाक्यों में कथास्थितियों को प्रस्तुत करने की सलाहियत हासिल की। इसके जरिये रचना को अधिक संप्रेषणीय बनाया। चरित्रों का त्वरित विकास और भंगिमाओं के जरिए बात रखने का कौशल अर्जित किया। सबसे अधिक श्रम लघुकथाकारों ने किया कथा का विन्यास इसकी संक्षिप्ति में अर्जित करने के साथ कालबोध की समझ का विकास करते हुए। आज इसीलिए लघुकथा बोधकथा की जकड़ से बाहर एक ऐसी विधा बन गयी है जिसमें आप शिल्प के अनेक प्रकार देख सकते हैं। वह एक ओर खलील जिब्रान से प्रेरणा लेती है, किंतु फैंटेसी का ऐसा अद्भुत प्रयोग करती भी दिखती है कि उसकी अर्थव्यंजकता में अनायास वृद्धि हो जाती है। उसके लिए मंटो एक प्रेरणा है तो लू शुन की कविताएं भी।

आज की लघुकथा में अनेक विधाओं के उपयोगी तत्वों की आवाजाही नजर आ रही है, यह इस विधा को और अधिक प्रभावशाली बनाएगा।

–9013266057

गौरतलब लघुकथा-संग्रह (2011-2022)

अशोक भाटिया

भगीरथ : बैसाखियों के पैर

भगीरथ हिंदी-लघुकथा के मुक्तिबोध हैं। इनकी लघुकथाओं में मुख्य रूप से श्रम-शक्तियों के संघर्ष और सुख-दुःख को स्थान मिला है। 'पेट सबके हैं' के बाद यह उनका दूसरा संग्रह है। प्रगतिशील चेतना से सम्पन्न, इनकी लघुकथाएँ समाज के वंचित वर्ग के प्रति व्यापक चिंता और तज्जन्य परिवर्तन की आकांक्षा से प्रेरित हैं।

इस संग्रह में 'बैसाखियों के पैर', 'चुनौती', 'धर्म-निरपेक्ष', 'हिम्मत तो देखिए', 'क्या मैंने ठीक किया!', 'सपने में माँ', 'सपने नहीं दे सकता', 'मौनव्रत', 'जीविका', 'यस प्राइमिनिस्टर' अपने समय से सजग सटीक संवाद करती हैं। लघुकथा के सामान्य फ्रेमवर्क से भिन्न, कुछ अमूर्त, प्रतीकात्मक, बड़ी उपयोगी रचनाएँ हैं, जिनमें 'ेतकार', 'छिपकली', 'कोणार्क', 'तिलचट्टे', बुद्ध की आँखें' का पुष्ट वैचारिक धरातल इन्हें महत्व और स्थायित्व प्रदान करता है।

हरभगवान चावला : बीसवाँ कोड़ा

स्वप्नदर्शी कवि-कथाकार हरभगवान चावला के इस पहले संग्रह की रचनाएँ अपने कथा-प्रसंग में गद्य हैं तो कल्पना और भाषा में काव्य का-सा अस्वाद देती हैं।

हरभगवान चावला राजनीतिक सजगता के विलक्षण लेखक हैं। इनकी 'मोहल्ला द्रोह', 'सत्यमेव जयते', 'कानून', 'ख़तरा', 'बन्दूक' जैसी भयावह यथार्थ की लघुकथाएँ राजनीतिक छल-छद्म की उघाड़ते हुए कलात्मक ताज़गी को बनाए रखती हैं। धार्मिक उन्माद के इस दौर में लेखक पाठकों को 'आशीर्वाद', 'गोत्र', 'प्रायोजि़त कार्यक्रम' जैसी कथाओं के ज़रिए धर्म के व्यवसाय के प्रति आगाह करता है, तो 'सृष्टि' जैसी रचना में शुद्धतावाद के पाखंड का तार्किक समाधान भी देता है।

यह पुस्तक पाठकीय चेतना को सम्पन्न बनाती हुई, वर्तमान के विकट यथार्थ की काव्यात्मक अभिव्यक्ति का दस्तावेज़ है।

सुकेश साहनी : साइबरमैन

मानवीय संबंधों के कुशल चितेरे सुकेश साहनी का 'डरे हुए लोग' और 'ठंडी रजाई' के बाद यह तीसरा लघुकथा-संग्रह है। विभिन्न शैलियों का यथावश्यक प्रयोग करने वाले कथा-शिल्पी सुकेश साहनी ने जब भी नये यथार्थ में हस्तक्षेप किया है, वहाँ एक आकर्षक रचना-संसार निर्मित हुआ है। 'मास्टर', 'ओएसिस'

आदि में संवेदना का विस्तार है, तो 'राजपथ' आदि में राजनीतिक विद्रूप और चालबाज़ियाँ बेपर्दा की गई हैं। नये यथार्थ को 'कसौटी' और 'शिनाख़्त' जैसी रचनाओं में देख सकते हैं। 'कोलाज' जैसी लघुकथाएँ आज के भयावह यथार्थ को महीन बुनावट के साथ दिखाती हैं। 'आधी दुनिया' की टोन ही स्त्री-पक्ष की मलामत करते पुरुष की मलामत कर डालती है।

चैतन्य त्रिवेदी : कथा की अफवाह

लघुकथा में सृजन के नये आयाम स्थापित करने वाले चैतन्य त्रिवेदी का, 'उल्लास' के बाद यह दूसरा संग्रह है। रचनात्मक कल्पना के बल पर यथार्थ के बड़े आशयों को लघुकथा में सफलता से उतार लाने की बेजोड़ कला चैतन्य त्रिवेदी के पास मौजूद है। लघुकथा की सामर्थ्य को नई ऊँचाई देने वाले चैतन्य मूलत: कवि हैं। कविता को गद्य में प्रयुक्त कर वे आकार का अतिक्रमण करते हुए कदम-कदम पर सूक्ष्म अर्थ व्यंजनाएँ उभारने में सिद्धहस्त हैं। 'संशयग्रस्त समय', 'नागरिक', 'तुम्हारे ही सरीखे' सामाजिक धरातल की, 'आसान काम', राजनीतिक तथा 'अवदान' पारिवारिक धरातल की बेजोड़ रचनाएँ हैं। सूक्ष्म संवेदना देखनी हो तो 'इन्तज़ाम और कला' पढ़ जायें। 'धर्म पुस्तक' धर्मों का मनोवैज्ञानिक निचोड़ प्रस्तुत करती हुई स्वयं में धर्म-पुस्तक का काम करती है। रचनात्मकता की नयी परिभाषा गढ़ने वाले चैतन्य त्रिवेदी की लघुकथाओं को पढ़ना वास्तव में एक सजग और पुरसुकून अनुभव से गुज़रना है।

तैरती हैं पत्तियाँ : (बलराम अग्रवाल)

इस संग्रह की सभी रचनाएँ, लेखक के शब्दों में, 'जीवित रश्मियाँ और चिनगारियाँ हैं।' आकार की लोचशीलता लिए हुए 'तैरती हैं पत्तियाँ' की लघुकथाएँ, विचार-वीथियों में विचरण करती हुई, रचनाकार की सहज-सजग अभिव्यक्ति का प्रमाण देती हैं। संवादों के ज़रिए बातों-बातों में बड़े संकेत कर जाने की क्षमता इसकी अनेक लघुकथाओं में मिल जाती है। 'समन्दर : एक प्रेम कथा', 'नदी को बचाना है', 'बन्दरों की नयी खेप', 'प्रेमगली अति साँकरी', 'देश इन दिनों', 'मीडिया इन दिनों', जैसी अनेक लघुकथाएँ अपने सरोकारों और निर्वाह के चलते याद रह जाती हैं। इससे आगे रचनात्मक प्रौढ़ता देखनी हो, तो 'उजालों का मालिक', 'उसकी हँसी' जैसी अनेक सुन्दर लघुकथाएँ इस संग्रह को समृद्ध बनाती हैं।

अनर्थ : (कमल चोपड़ा)

चिकित्सक-कथाकार कमल चोपड़ा का यह पाँचवाँ लघुकथा-संग्रह है, जो अपने समय की, साफगोई से इबारत लिखता है। ये कथाएँ मुख्य रूप से धर्म, संप्रदाय, घृणा, कट्टरता, वैमनस्य और इनके राजनीतिक दोहन के विविध आयामों

से सीधे-सीधे टकराती हैं। कल्पना और संकेतात्मकता का प्रयोग न करके भी ये लघुकथाएँ सहज-सजग और भरे-पूरे विश्वसनीय घटना-क्रम से ही पाठक को अपनी रचनाओं का मुरीद बना लेने की सामर्थ्य रखती हैं। राजनीति में विद्रूप और परिवार में संवेदनहीनता के विविध आयामों पर लेखक ने बेधक दृष्टि और बेबाकी से कलम चलाई है। तमाम तरह की संकीर्णता को धता बताने वाली इनकी कथाएँ पहली रचना 'छोनू' से लेकर 'बाँह बेली', 'बताया गया रास्ता' आदि से होते हुए अंतिम रचना 'अभिन्न' तक अपने लक्ष्य में अडिग रहती हैं। धर्म की दुकानदारी को 'बिकाऊ', 'अपराध का नाम' आदि लघुकथाएँ निर्ममता से उघाड़ती हैं।

अन्य प्रमुख लघुकथा-संग्रह (2011-2022)

2012 रामकुमार आत्रेय - बिन शीशों का चश्मा

2014 ज्ञानदेव मुकेश-उतरन, जवाहर चौधरी-सॉरी जगदीश्वर, माधव नागदा - अपना-अपना आकाश, श्याम सुन्दर अग्रवाल-बेटी का हिस्सा

2016 दीपक मशाल - खिड़कियों से

2017 शोभना श्याम - बिखरने से पहले

2018 मार्टिन जॉन - सब खैरियत है, कमल चोपड़ा - अकथ

2019 प्रबोध कुमार गोविल - दो तितलियाँ और चुप रहने वाला लड़का, सुभाष नीरव - बारिश तथा अन्य लघुकथाएँ, वसुध गाड़गिल/अन्तरा करवड़े - धारा (जल तत्व आधारित कथाएँ)

2020 जसबीर चावला - तैंतीसवीं पुतली, श्याम सुन्दर दीप्ति - गुलाबी फूलों वाले कप, संधया तिवारी - अँधेरा उबालना है

2021 योगराज प्रभाकर - फक्कड़ उवाच, सुरेश बरनवाल - अब यह शहर नहीं बसेगा, कान्ता रॉय - अस्तित्व की यात्र, कुमार संभव जोशी - ये आप ही के किस्से हैं

2022 स्व. रवि प्रभाकर - कुकनूस, अमरीक सिंह दीप - सपने में औरत, चंद्रेश कुमार छतलानी-हाल-ए-वक्त

रचना : दो

सुकेश साहनी

रिश्ते

दादी को गांव से आये अभी दूसरा ही दिन था, बहुमंजिला फ्लैट के बीसवें माले में रहते हुए उसे कबूतरखाने-सा अहसास होता था। बेटा-बहू सुबह ही काम पर निकल जाते थे, काव्या स्कूल चली जाती थी। काव्या की देखभाल के लिए जो नैनी रखी गई थी, वह आजकल छुट्टी पर थी। पोती के स्कूल से लौटने से लेकर बहू के ऑफिस से घर आने तक काव्या की देख-रेख का जिम्मा उसी पर था। दादी को बालकोनी की ओर खुलनेवाले लिविंग रूम में कुछ बेहतर लगता था, अधिकतर समय वहीं बिताती थी।

स्कूल से वापस आने के बाद काव्या सामने के फ्लैट में रहने वाले अपने फ्रैंड ऋतिक को खेलने के लिए बुला लाई थी, दोनों बच्चे कोई डिजिटल गेम खेल रहे थे, जो दादी की समझ से परे था।

'बेबी, देखना इस बार भी मैं ही जीतूंगी।' काव्या ने ऋतिक को चिढ़ाते हुए कहा।

'कल की हार भूल गई, माय स्वीट बेबी!'

दादी को उनकी बातचीत बहुत अजीब लगी, 'काव्या, ये तुम लोगों ने बेबी बेबी क्या लगा रखा है, एक दूसरे को नाम से क्यों नहीं बुलाते?'

'अरे ग्रैंडमा, आपको पता ही नहीं, हमारे यहाँ प्यार से एक दूसरे को बेबी बुलाते हैं।'

'नेवर माइंड बेबी' काव्या ने ऋतिक से हँसते हुए कहा, 'दादी गांव से हैं न, चलो इट्स योर चांस।'

दादी को बहुत अजीब लग रहा था, पर वह चुपचाप उन्हें खेलते हुए देखती रहीं, फिर टोकना उन्हें उचित नहीं लगा।

खेलते-खेलते किसी बात पर दोनों में झगड़ा होने लगा, काव्या को लग रहा था कि ऋतिक ने चीटिंग की है, जबकि ऋतिक तरह तरह से अपनी सफाई दे रहा था।

जब काव्या नाराज होकर दादी के करीब सोफे पर बैठ गई तो ऋतिक नरम पड़ गया, काव्या के करीब आकर कान पकड़कर बोला, 'सॉरी बेबी,' फिर काव्या के पास आकर उसकी दोनों बाहें पकड़कर बहुत प्यार से बोला, 'रियली सॉरी... माय स्वीट स्वीट बच्चा!'

ये सब देख-सुनकर दादी हतप्रभ थीं, वह खुद को रोक नहीं पाई, 'काव्या, तुम और तुम्हारा ये दोस्त कैसी बातें करते हो, आने दो पापा-मम्मी को, मैं बताउंगी उन्हें ये सब।'

सुनकर काव्या जोर से हंस पड़ी, 'ग्रैंडमा,जस्ट चिल!! यहाँ जब प्यार से किसी को मानते हैं तो यही बोलते हैं, पापा मम्मा भी आपस में ऐसे ही बिहेव करते हैं।'

–9634258583

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'

मसीहा

दाढ़ी के बाल बेतरतीब। सिर पर ढीली-ढाली पगड़ी-बदरंग और चीकट। जिलेसिंह अपने इस हुलिए से भरी-भीड़ में पहचाना जा सकता था। दिन भर साइकिलों की मरम्मत करता रहता। राह चलते लोग भी उसे झल्ला कहकर ठिठोली करते। उत्तर में वह फिक् से हँस देता। खाड़कुओं द्वारा सरपंच दयाराम की हत्या के बाद से वह अचानक चुप हो गया है, लेकिन उसकी चुप्पी को कोई गम्भीरता से नहीं लेता।

रात के दस बजे. उसके पड़ोसी सतपाल के दरवाजे पर दस्तक हुई।

सतपाल इसे झल्लेसिंह कहकर बुलाता था। जिलेसिंह पगड़ी सँभालते हुए बाहर आया। दो राइफलधारी सतपाल के दरवाजे के सामने खड़े थे। जिलेसिंह ने टोका- 'तुम यहाँ क्या कर रहे? यहाँ से जाओ।

'ओए खोत्ते दे पुत्तर, भग जा। नहीं तो पण्डत को मारणे वाली गोली तेरे भीतर उतार देणी है।' यह बात सुनकर सतपाल का तो खून ही सूख गया।

एक ने दरवाजे पर लात मारी- 'अबे दरवज्जा खोल।'

जिलेसिंह चीते जैसी फुर्ती से उसके सामने आ गया- 'दरवज्जा नहीं खुलेगा।'

'लै मुर्गी दे बच्चे।' दूसरे ने दनादन गोलियाँ बरसा दीं। एक भयानक चीख के साथ जिलेसिंह सतपाल के दरवाजे के सामने ढेर हो गया हत्यारे स्कूटर पर बैठकर फरार हो गए।

सतपाल बाहर आया। उसकी आँखें विस्फारित रह गई-झल्ले...तू।

जहरीली हवा

आँख खुली। किशोर हड़बड़ाकर उठ बैठा। गला सूख रहा था। पानी पीकर थोड़ी राहत मिली। हाशिम गहरी नींद सोया हुआ था। उसे भयंकर सपने पर हैरत हुई। सपने उसे कभी-कभार ही आते हैं पर इस तरह का सपना तो कभी नहीं आता। पूरा शहर पागलपन की आग में धू-धू कर जल रहा है।

सोते समय उसने हाशिम से पूछा था-''इस पागलपन का अंत कैसे होगा?''

देखो भाई किशोर, पागलपन आदमी की फितरत बन गया है। फितरत कभी खत्म नहीं होती। हम जैसों की मित्रता ही इसका उत्तर है।''

''प्राण रहते मैं तुम्हारा बाल भी बाँका नहीं होने दूँगा।'' किशोर ने हाशिम का हाथ अपने हाथ में लेकर कहा।

उसके बाद दोनों सो गए थे।

"मुझे ऐसा सपना क्यों आया? हे प्रभु!" किशोर ने दीर्घ उच्छ्वास छोड़ा। हाशिम की नींद उचट गई। किशोर को बैठा देखकर वह उनींदे स्वर में बोला–"क्यों, क्या बात है? नींद नहीं.....आ रही है?"

"यूँ ही बस।"

"तुम फिर सोचने लगे?" हाशिम ने मीठी झिड़की दी।

किशोर ने उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया। हाशिम करवट बदलकर अबोध शिशु की तरह सो गया।

वह बेखबर सोते अपने जिगरी दोस्त को एकटक देखता रह गया था। भला वह सपने में भी अपने मित्र पर चाकू का वार कैसे कर गया।

रह-रहकर गोली चलने की आवाज वातावरण में दहशत भर रही थी।

–9313727493

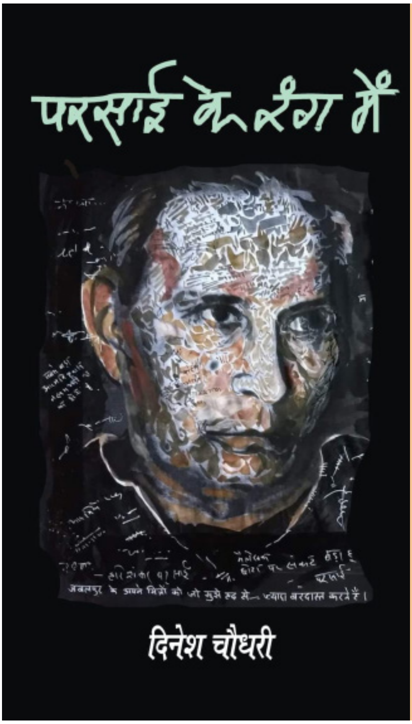

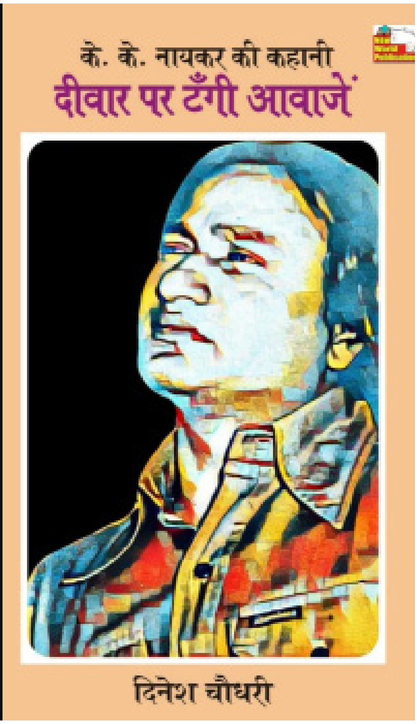

कमलेश भारतीय

स्त्री

वह जार-जार रोये जा रही थी और फोन पर ही अपने पति से झगड़ रही थी। बार बार एक ही बात पर अड़ी हुई थी कि आज मैं घर नहीं आऊंगी। बहुत हो गया। संभालो अपने बच्चे। मुझे कुछ नहीं चाहिए।

पति दूसरी तरफ से मनाने की कोशिश में लगा था और वह आंसुओं में डूबी कह रही थी कि आखिर मैं कलाकार हूं तो बुराई कहां है? क्या मैं घर का काम नहीं करती? क्या मैं आदर्श बहू नहीं? यदि कला का दामन छोड़ दूं और मन मार कर रोटियां थापती और बच्चे पालती रहूं तभी आप बाप बेटा खुश होंगे? नहीं। मुझे अपनी खुशी भी चाहिए। मेरी कला मर रही है। आज मेरा इंतजार मत करना। मैं नौकरी के बाद सीधे मायके जाऊंगी। मेरे पीछे मत आना।

इसी तरह लगातार रोते बिसूरती वह ऑफिस का टाइम खत्म होते ही सचमुच अपने मायके चली गयी।

मां बाप ने हैरानी जताई। अजीब सी नजरों से देखा। कैसे आई? कोई जरूरी काम आ पड़ा? कोई स्वागत नहीं। कहीं बेटी के घर आने की कोई खुशी नहीं। चिंता, बस चिंता। क्या करेगी यहां बैठ कर? मुहल्लेवाले क्या कहेंगे? हम कैसे मुंह दिखायेंगे?

शाम को पति मनाने और लिवाने आ गया। कहां है मेरा घर? यह सोचती अपने रोते बच्चों के लिए घर लौट गयी। पर कौन सा घर? किसका घर? कहां खो गयी कला? किसी घर में नहीं?

तिलस्म

रात के गहरे सन्नाटे में किसी वीरान फैक्ट्री से युवती के चीरहरण की आवाज सुनी नहीं गयी पर दूसरी सुबह सभी अखबार इस आवाज को हर घर का दरवाजा पीट पीट कर बता रहे थे। दोपहर तक युवती मीडिया के कैमरों की फ्लैश में पुलिस स्टेशन में थी।

किसी बड़े नेता के निकट संबंधी का नाम भी उछल कर सामने आ रहा था। युवती विदेश से आई थी और शाम किसी बड़े रेस्तरां में कॉफी की चुस्कियां ले रही थी। इतने में नेता जी के ये करीबी रेस्तरां में पहुंच गये। अचानक पुराने रजवाड़ों की तरह युवती की खूबसूरती भा गयी और फिर वहीं से उसे बातों में फंसा कर ले उड़े। बाद की कहानी वही सुनसान रात और वीरान फैक्ट्री।

देश की छवि धूमिल होने की दुहाई और अतिथि देवो भवः की भावना

का शोर। ऊपर से विदेशी दूतावास। दबाब में नेता जी को मोह छोड़ कर अपने संबंधियों को समर्पण करवाना ही पड़ा। फिर भी लोग यह मान कर चल रहे थे कि नेता जी के संबंधियों को कुछ नहीं होगा। कभी कुछ बिगड़ा है इन शहजादों का? केस तो चलते रहते हैं। अरे ये ऐसा नहीं करेंगे और इस उम्र में नहीं करेंगे तो कौन करेगा? इनका कुछ नहीं होता और लोग भी जल्दी भूल जाते हैं। क्या यही तिलस्म था या है? ये लोग तो बाद में मजे में राजनीति में भी प्रवेश कर जाते हैं।

थू-थू सहनी पड़ी पर युवती विदेशी थी और उसका समय और वीजा खत्म हो रहा था। बेशक वह एक दो बार केस लड़ने, पैरवी करने आई लेकिन कब तक?

बस। यही तिलस्म था कि नेता जी के संबंधी बाइज्जत बरी हो गये।

-9416047075

विकास नारायण राय

आत्मा

पंथ प्रचारकों ने पूछा, क्या मानते हो आत्मा होती है?

मैंने कहा : आत्मा होती है, कभी न कभी कचोटती है।

वे बोले : पुनर्जन्म भी, वरना मरने के बाद आत्मा कहां जाएगी?

मैंने कहा : कहीं नहीं; जब तक जीवन है तभी तक आत्मा है, तभी तक वह कचोटती है।

वे बोले : मरने पर शरीर को नष्ट करते हैं, लेकिन किसी ने आत्मा को नष्ट होते नहीं देखा।

मैंने पूछाः

मरने के बाद स्मृति कहां जाती है?

मरने के बाद भावनाएं कहां जाती हैं?

मरने के बाद इच्छाएं कहां जाती हैं?

मरने के बाद चेतना कहां जाती है?

पंथ प्रचारक चुप रहे; उन्होंने कुछ देर एक दूसरे को देखा। अंत में एक का मुंह खुला : जब तक जीवन है, तभी तक स्मृति है, भावनाएं हैं, इच्छाएं हैं, चेतना है।

उन्हें अपना उत्तर मिल गया था।

डर क्यों रहे हो?

दुश्मन उसकी घात में बंदूक लेकर निकला था। उसे पता चल गया और वह डर गया।

"तुम डर क्यों रहे हो वाहियात आदमी? मैंने तुम्हें कुछ कहा है?"

"मुझे तुम्हारे इरादे से डर लग रहा है।"

"क्या मैं तुम्हें गोली मारने जा रहा हूँ? तुम यह किस आधार पर सोच सकते हो।"

दुश्मन ने बंदूक कंधे पर रख ली। नली का मुँह डरे हुए आदमी की तरफ था। डरा आदमी और डर गया।

"मैंने बंदूक चलाई तो नहीं।"

"नहीं"

"तो तुम बिना वजह ही डर रहे हो न।" यह कहने तक उँगली बंदूक के ट्रिगर पर फँस चुकी थी, "अब तुम बिना वजह काँप-काँप कर सबको परेशानी में न डालो। और चिल्लाने की तो सोचना भी मत। क्योंकि इससे शांति में खलल होगा जबकि तुम भी देख रहे हो कि मैं तुम्हें मार नहीं रहा।"

दुश्मन ट्रिगर को धीरे-धीरे दबाने लगा था,

"क्या मैंने तुम्हें गोली मार दी जो तुम इधर-उधर सहायता के लिए देख रहे हो!" उसने इधर उधर देखना बंद कर दिया।

गोली ऐन उसके दिल को चीरती गयी और मौत यूँ पलक झपकने से भी तेज आयी कि उसने गोली की आवाज भी नहीं सुनी। उसे कभी पता नहीं लगा कि वह दुश्मन के हाथों मारा गया था।

-7082054679

सूर्यनारायण रणसुभे

(1)

पिछले कई वर्षों से वे धर्म, जाति, प्रदेश, भाषा आदि के अंहकारों से मुक्त होकर विशुद्ध मनुष्य के स्तर पर ही जी रहे थे। फुले, अंबेडकर, गांधी, मार्क्स आदि के विचारों को उन्होंने आत्मसात किया था। अपने आचरण में लाया था। अंबेडकर जी के शब्दों में वे डी- कास्ट हो चुके थे। वर्षों से उनके संपर्क में आए उनके कई आत्मीय मित्र उनकी जाति भी नहीं जानते थे और वह भी अपने सम विचारी मित्रों की जाति जानने की जरूरत नहीं समझते थे। अच्छा मनुष्य और बुरा मनुष्य यही दो प्रकार वे मानते थे। और उनके अनुसार विश्व में दो ही जातियां हैं स्त्री और पुरुष। उनका आचरण भी इसी प्रकार का था। परिणामतः सभी जाति धर्म के स्त्री-पुरुष उनके मित्र थे।

समय बीतने लगा। उनकी प्रसिद्धि बढ़ने लगी। उनके लेखन और कृतित्व और व्याख्यानों से प्रेरित प्रभावित संस्थाओं ने, राज्य ने उन्हें पुरस्कृत किया।

उनकी प्रतिष्ठा से उनकी जाति के लोगों की छाती में 56 इंच की हो गई। एक दिन उनकी जाति के प्रतिष्ठित लोग उनके घर आए और उनसे कहा कि 'अभी हाल ही में आपको राष्ट्र का सर्वोच्च पुरस्कार घोषित हुआ है। इस कारण हम लोग अपनी जाति की ओर से आपका भव्य सम्मान करना चाहते हैं।' इसे सुनकर वे पूरी विनम्रता से बोले कि 'देखिए, आप तो जानते हैं कि मैं जाति धर्म के स्थान पर केवल मनुष्य धर्म और मनुष्य जाति को ही मानता हूं। आप अपने हर कार्यक्रम की सूचना मुझे देते हैं, मीटिंगों में बुलाते हैं परंतु मैं कभी वहां नहीं आया। इसी से आप मेरी भूमिका समझ सकते हैं। इस पर उन्होंने कहा कि 'ठीक है, आपने जाति के बंधन को तोड़ दिया है पर हम तो आपको अभी भी अपनी ही जाति का मानते हैं और हमें गर्व है कि आप हमारी जाति के हैं। इस पर उन्होंने कहा, मैं किसी भी जाति के मंच से कोई सम्मान नहीं लूंगा।'

समय बीतता गया। प्रकृति धर्म के अनुसार एक दिन वे गुजर गए। अपने मृत्युपत्र में उन्होंने साफ लिखा था कि उनका देहदान किया जाए।मृत्यु के पर्व पूर्व उन्होंने देहदान की सारी औपचारिकताएं पूरी की थी।

उनकी मृत्यु की खबर आग की तरह फैल गई। उनके घर की ओर लोगों का सैलाब उमड़ा। विभिन्न जाति के लोग आ रहे थे। उनकी जाति के प्रतिष्ठित सबसे आगे थे। लोग उनके बेटे को मनवाने लगे कि देह को अग्नि ही दी जाए। इतने लोगों की इच्छा है। उनकी पत्नी की भी यही इच्छा थी। बेटे ने कहा इतने लोगों की इच्छा है तो अग्नि देंगे परंतु इस शर्त पर कि कोई भी कर्मकांड पहले भी नहीं होगा और बाद में भी नहीं होगा।

ठीक है, लोगों ने कहा। शहर में दो प्रतिष्ठित जातियों के स्मशानगृह थे। सार्वजनिक स्मशानभूमि तो थी ही नहीं। तो लोग वहां पर दौड़े। वहां के प्रबंधकों ने कहा कि जो आदमी जिंदगी भर जाति के खिलाफ बोलता रहा उनका दहन हम अपनी जाति की स्मशान भूमि में होने नहीं देंगे। अब क्या करें?

उनमें से एक प्रतिष्ठित व्यक्ति ने कहाकि 'इधर से थोड़ी दूरी पर सड़क के किनारे अग्नि दी जाए।' निर्णय हुआ। बिना कुछ सूचना या निर्देश के लोग सारी तैयारी कर रहे थे। बेटा असहाय होकर यह सब देख रहा था। क्योंकि वह पिता के विचारों का था। तैयारी करने में उनकी जाति के प्रतिष्ठित लोग सबसे आगे थे।

लाश जब उस जगह पर पहुंची तो पहले विविध स्तर के तथा विविध जाति के लोगों ने श्रद्धांजलि व्यक्त की। उनकी जाति के अध्यक्ष ने कहा 'हमारी जाति के सबसे वरिष्ठ विद्वान को जो जिंदगी भर के लिए औरों के लिए जीते रहे, उन्हें अग्नि देने के लिए जगह नहीं दी गई। इसलिए आज मैं अपनी जाति के बंधुओं से अपील करता हूं कि अपनी जाति की स्मशान भूमि बनाने के लिए आज से चंदा इकट्ठा किया जाए और अगले छह माह में अपनी जाति की स्मशान भूमि साकार हो जाए।'

जाति के लोगों ने इस प्रस्ताव को स्वीकार किया। बड़ी-बड़ी राशियां घोषित होने लगी। अन्य जातियों के लोग वहां से खिसकने लगे। और जाति विरहित समाज का सपना देखने वाले का सपना और शरीर भू-भू जलने लगा

(2)

अत्यंत प्रतिकूल स्थिति से वह होनहार लड़का अच्छे अंकों से स्नातक हुआ। कुछ ही दिनों में उसे अच्छी सरकारी नौकरी भी मिली। यह खबर लेकर मिठाई के साथ वह घर आया। उन्हें बड़ा अच्छा लगाव उसकी मेहनत, ईमानदारी काम आई, उन्होंने सोचा। उसकी जिंदगी बन गई। बीच-बीच में वह कभी कभार आता था। 1 वर्ष बाद वह आया और यह खबर लेकर आया कि उसका विवाह इस इस तारीख को तय हुआ है, शादी गांव की ओर है और उन दोनों को शादी में आना ही आना है। उसका गांव काफी दूर था। काफी पिछड़ा हुआ। और छोटा भी। गांव तक सीधी बस भी नहीं थी। पहले एक गांव जाना पड़ता था; वहां से दूसरी बस लेनी पड़ती थी। उसने कहा कि आप आए इसलिए शादी रविवार को रखी है। आपने मेरे जीवन को बनाया है, वैज्ञानिक दृष्टि की है, आप मेरे संस्कारी पिता हैं। आपको आना मतलब आना ही है। उसने उनकी पत्नी से भी बार-बार कहा कि सर को ले ले आने की जिम्मेदारी आप पर है।

उस रविवार को वे दोनों निकले। जहां बस बदलनी थी, वहां उनका एक भूतपूर्व छात्र उन्हें लेने आया था। बस गांव में पहुंची। उसने खिड़की से देखा कि खुद दूल्हा उन्हें लेने आया था।

अब उन्हें पता चला कि विवाह बौद्ध पद्धति से है। और वह पूर्व का दलित है। उन्हें इससे कोई फर्क नहीं पड़ता था। क्योंकि अपने जीवन में उन्होंने कभी भी किसी भी छात्र छात्रा की जाति समझने की कोशिश नहीं की थी। और महाराष्ट्र में उपनामों से जाति कभी समझ में नहीं आती। एक ही उपनाम के ब्राह्मण, मराठा, पिछड़ा या दलित हो सकता है। उस छात्र को भी इनकी जाति का पता नहीं था। उसने उसे जानने की कोशिश भी नहीं की थी। विवाह संपन्न हुआ।

विवाह उपरांत उन दोनों का सम्मान उसने किया। उपस्थित सभी से उसने कहा, 'मेरे दो मां बाप हैं। एक जन्म देने वाले दूसरी ये। उन्होंने मुझे पढ़ाया मुझे जीवन दृष्टि दी। मां बाप का प्यार दिया। मैं जो कुछ भी हूं इनके कारण हूं'।

वहां से वे दोनों निकले। यह सोचते हुए कि एक वह विवाह जहां था जाति के कारण उन्हें थाली पर से उठाया गया था और एक यह विवाह है जहां उसे सर्वाधिक सम्मान मिला।

वह सोच रहा था कि अगड़े पिछड़े हैं या पिछड़े अगड़े हैं? मनुष्यता के संस्कारों की जरूरत किसे है?

–8378080660, 9423735393

सुभाष नीरव

फितरत : दो रंग

(1)

मुझे तितलियों से प्यार था, उसे फूल अच्छे लगते थे। मैं उसके लिए फूल बन गया खुशबूदार और वह तितली बन गई, खूबसूरत तितली, रंग बिरंगी। वह मुझ पर मंडराती, मुझे चूमती, मुझ संग अठखेलियाँ करती मुझे निहाल कर देती। सारी दुनिया मुझे स्वर्ग लगने लगती।

फिर वह आस पास के दूसरे फूलों पर भी मंडराने लगी, उन्हें चूमने लगी। मेरे दिल में आरियाँ चलतीं। नफरत की आग मुझे जलाने लगी, दुनिया दोजख लगने लगी।

मैं फूल से फिर आदमी बन गया। पर वह लड़की बनकर भी तितली बनी रही।

(2)

वक्त ने करवट बदली। लड़की फूल बन गई। खूबसूरत फूल। जो देखता, दीवाना हो जाता। कुदरत ने मुझे भंवरा बना दिया। अब मैं फूल को चूमता, प्यार करता, उसकी सुगंध का रसपान करता। फूल को अच्छा लगता। वह लहालोट हो जाता। फिर मुझे उस फूल से भी सुंदर फूल दिखे।

मैं खुश था, दुनिया कितनी रंगीन है! फूल बनी लड़की कुढ़ने लगी, उसका चेहरा कुम्हलाने लगा। वह फिर से फूल से लड़की बन गई, पर मैंने भंवरा ही बने रहना कुबूल कर लिया।

–9810534373

अमृतलाल मदान

ऑनलाइन पूजन

इधर पूजा-कक्ष में पूजा की छोटी घंटी दुनदुना रही थी, उधर बैठक में पड़ा मोबाइल टनटना उठा। वृद्ध हैरान कि आज सुबह-सुबह बेटे का फोन! वह डेढ़-दो साल न गाँव आया था ना माँ-बाप को वहाँ बुलाया था। बस फोन पर ही हाल-चाल पूछ, मातृ-पितृ ऋण चुकाता रहता था।

'पापा, आप दोनों नहा-धो लिए हों तो एक अनुरोध है।'

'हाँ-हाँ बेटे। वृद्ध खुश कि शायद बेटा निमंत्रण देने जा रहा है।'

'आप ज़रा दो मिनट इकट्ठे खड़े हो जाएँ। आपका ऑनलाइन पूजन करना है।' बेटा कुछ -कुछ झिझक भी रहा था।

'ओह! आज चौदह फरवरी है, इसीलिए। बेटा, ऑन लाइन क्यों? या तो तुम आ जाओ परिवार के साथ या हमें वहाँ.....।'

'वो सब फिर कभी। हमारे ऑफिस में ऊपर से आदेश आया है कि आज के दिन सब कर्मचारी....'

'तो क्या हम दोनों का पूजन आप दोनों एक साथ करोगे?'

'नहीं पापा वह अपने फोन पर अपनी मम्मी डैडी का पूजन कर रही है। उसे भी तो प्रमाण दिखाना है। बच्चे तो थाली घुमा कर स्कूल...'

'बेटा, बहू को भी बुला लो हम भी इकट्ठे खड़े होकर...'

'नहीं पापा..आप तो जानते ही हो उसका स्वभाव...'

'ओह याद आया बेटा आज तो वेलेन्टाइन डे भी है, सोच रहा हूँ पास शहर के पार्क में जाकर हम दोनों...' वृद्ध ने भी टालना चाहा।

'पापा पार्क में इकट्ठे एक ही बैंच पर न बैठ जाना, कहीं किसी संस्कृति दल वाले...'

तभी वृद्ध को बहू की कर्कश आवाज़ सुनाई दी, 'जल्दी कर लो तुम भी उन बूढ़ों का पूजन...ऑफिस का टाइम हो रहा है।'

वृद्ध ने फोन काट दिया। वृद्धा अभी भी पूजा-कक्ष में इन्हीं बच्चों के सुखद भविष्य की प्रार्थना कर रही थी, हर रोज़ की तरह...

-9466239164

राणा प्रताप

जिंदगी का गायक

साला, बुड्ढा बहुत भावुक था, बहुत जिद्दी और न टूटने वाला इंसान।

कुछ भी कहो, दार्शनिकता उसमें कूट-कूट कर भरी थी।

शायद....

शायद क्या? उसे पृथ्वी के उस टुकड़े से बहुत प्यार था, जिस पर वह रहता था।

यानी कि अपने देश से?

उसे हवा, चांदनी और पक्षियों के सुनहले हरे पंखों से भी बहुत प्यार था।

लेकिन अपनी जिंदगी के प्रति उसमें इतनी नफरत क्यों भरी थी?

उसे अपने आप पर भी इतना गुस्सा क्यों आता था?

"बुड्ढा था कुछ अलग हटकर।"

"उसने हिटलर से मुलाकात की थी।"

"उसे गद्दार भी कहा गया था।"

"उसे जेल में बंद कर दिया गया था। उसे यातना दी गई थी। भूखे रखकर उसे तड़पाया गया था। "

"कुछ भी हो, उसका देश-प्रेम पवित्र था,एकदम निष्कलंक।"

"प्रकृति की हर शै पर वह मरता था।"

"क्या वह पर्यावरणविद था?"

"नहीं यार! उसकी जहनियत कुछ और किस्म की थी। सच पूछो तो वह जिंदगी का गायक था।"

(न्यूट हैम्सन के लिए)

9632639707

आलोक कुमार सातपुते

खतरा

'दुनिया के फलां धर्म वाले एक हों...फलां धर्म खतरे में है। फलां धर्म के उपदेशक ने कहा।'

'दुनिया के ढेकाना धर्म वाले एक हो जाएं...ढेकाना धर्म खतरे में है। ढेकाना धर्म के उपदेशक ने डराया।श

अमका और ढमका धर्म वालों ने भी खतरे की दुहाई दी।

फलां राष्ट्र खतरे में है। एक बड़े नेता ने राष्ट्रधर्म की दुहाई देते हुए बताया।

फलां जात खतरे में है एक जातिवादी राजनीति करने वाले ने अपनी रोटी सेंकने की गरज से बताया।

फलां भाषा खतरे में है। भाषा की राजनीति करने वाले ने लोगों को भाषा के नाम पर डराया।

इसी तरह अमका-ढमका, और फलां-ढेकाना राष्ट्र, जाति और भाषा वालों ने भी अपनी-अपनी चालें चली।

कुछ दिनों बाद धर्म, राष्ट्र, जाति और भाषा के नाम पर दुनिया में विश्वयुद्ध छिड़ गया। अंत में मनुष्य का ही अस्तित्व खत्म हो गया। सिर्फ धर्म, राष्ट्र, जाति और भाषा ही बचे रहे, मनुष्य के बिना जिनकी दो कौड़ी की हैसियत नहीं रही।

शोषक

'मुझे तो ऐसा लगता है कि सारे सरकारी स्कूल-कालेजों की फीस प्राइवेट जितनी ही बढ़ा देना चाहिए। इसके अलावा सभी सरकारी अस्पतालों की फीस भी प्राइवेट अस्पतालों जितनी कर देनी चाहिए, तब अक्ल ठिकाने आयेगी इन देशद्रोहियों की।'

'आप बड़े देशभक्त लग रहे हैं भाई...वैसे आप करते क्या हैं?'

'मैं पिछले पांच सालों से एक सरकारी दफ्तर में बाबू हूँ।'

'शायद आप कान्वेंट में शिक्षित हैं?'

'नहीं, मेरी तो सारी शिक्षा सरकारी स्कूल-कॉलेज में ही हुई है।'

'अच्छा! वैसे आप लोग किस कालोनी में रहते हैं?'

'हम लोग तरुण नगर में रहते हैं।'

'अरे वो तो पूरी तरह अवैध अतिक्रमण वाली स्लम बस्ती है।'

'हाँ, है तो सही। अब क्या बताएं सर, टेक्नॉलजी के चलते सारी सरकारी

जानकारियां ऑनलाइन हो गई हैं, सो अब बाबूगिरी में ऊपरी कमाई ज्यादा नहीं रही, वरना अब तक तो मैं भी अपनी उस स्लम बस्ती को छोड़कर किसी महंगी कालोनी में घर ले चुका होता, या कहीं अच्छी जगह पर जमीन लेकर दो-तीन मंजिल तान दिया होता।'

'आपके पिता क्या करते हैं?'

'उन्होंने बड़े ही संघर्षों से हमें पढ़ाया। उनका एक छोटा सा पान का ठेला है।'

'कहाँ पर है उनका पान का ठेला?'

'वो फोकट पारा के नुक्कड़ पर है।'

'अरे वही ठेला जो एक सरकारी नाले के ऊपर अतिक्रमण करके रखा गया है?'

'हाँ वही...लेकिन आप क्या बार-बार अतिक्रमण-अतिक्रमण कह रहे हैं। क्या आप इतनी देर तक टटोलने के बाद मुझे मेरी औकात बताना चाह रहे हैं?'

'अरे नाराज क्यों होते हो भाई...मैं तो वर्तमान दौर में आपकी देशभक्ति टटोल रहा था।'

-07440598439

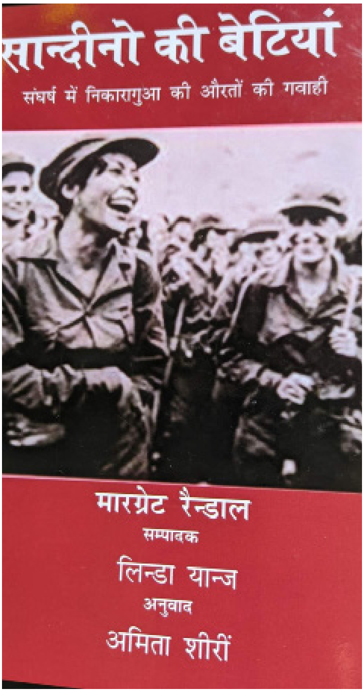

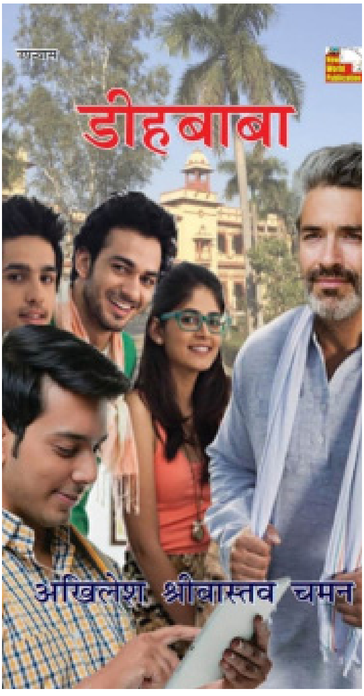

योगराज प्रभाकर

ढोल

मैं इस आलीशान कोठी में पौधों की कटाई-छटाई कर रहा हूँ। जितनी सुंदर कोठी है उससे भी कहीं सुंदर इसकी मालकिन है। मैं उसकी सुंदरता देखकर दंग रह गया हूँ। उम्र पचास के आसपास ही होगी, शरीर छरहरा, जैसे छेनी से तराशी कोई मूर्ति। दो-तीन बार मेरे पास से गुजरी तो लगा जैसे मोगरे के फूलों से लदी सैकड़ों डालियाँ की महक मेरे अंदर तक उतर गई हो। लॉन के साथ वाले कमरे के अंदर से उसके हँसने की धीमी-धीमी आवाज मुझ तक पहुँच रही है, हँसी भी ऐसी, जैसे दूर कहीं चाँदी की घंटियाँ मद्धम स्वर में खनक रही हों। मालिक भी अंदर ही है, लेकिन मैंने सिर्फ उसकी आवाज ही सुनी है, अभी तक शक्ल नहीं देखी। जबसे मैं यहाँ आया हूँ वे पति-पत्नी अधिकांश समय एक साथ और एक ही कमरे खिलखिलाकर हँसते हुए ही मिले। और एक मेरी बीवी है, तीस की भी नहीं हुई, लेकिन हमेशा हल्दी सने हाथ, कपड़ों से आटे की गंध, उलझे हुए बाल, ब्याई से फटी एड़ियाँ...उफ्फ! कभी चूल्हे के आगे तो कभी गैया का गोबर सँभालती हुई। छूने की कोशिश करता हूँ तो एक ही जवाब, 'क्या करते हो? अम्मा ओसारे में बैठी है, बापू बाहर घूम रहा है।' ये अमीर औरतें पता नहीं क्या खाती हैं, न बुढ़ापा न मोटापा।। इसका पति कितना भाग्यशाली है, बार-बार मेरे मन में यही ख्याल आता है। मैं पौधें की निराई-गुड़ाई कर तो रहा हूँ, लेकिन अंदर से आ रही अस्पष्ट आवाजें बार-बार मेरा ध्यान भटका रही हैं। मैं जान न चाहता हूँ कि ये बड़े लोग आखिर अकेले में बातें क्या करते है, मगर कुछ भी सुन नहीं पा रहा हूँ।

दरवाजा एकदम खुल गया है, वे दोनों बाहर आ गए हैं और मुझसे थोड़ी ही दूर खड़े हैं। मुझे लगा कि दोनों मुझे अजीब-सी नजर से देख रहे हैं मैं सकपका-सा गया हूँ, कहीं इन्होंने मेरी चोरी तो नहीं पकड़ ली है...नहीं! क्योंकि वे दोनों निर्लिप्त भाव से कोठी के गेट की तरफ चल पड़े हैं।

'अब ये आठ से लेकर बाईस तक दुबारा टूर पर जाएँगे...तब मिलेंगे, ओके?" मालकिन ने लगभग फुसफुसाते हुए कहा, लेकिन मैं सब कुछ सुन पा रहा हूँ। "हे भगवान!" मैं कानों को हाथ लगाता हूँ। मैं जैसे गहरी नींद से जागा हूँ। अचानक सच का आदमकद आईना मेरे सामने आ खड़ा हुआ है, अब मैं सब कुछ साफ-साफ देख पा रहा हूँ। गेट से लौट रही कोठी की मालकिन ने मुझे पैसे पकड़ाए तो मैंने ध्यान से उसकी ओर देखा। गाढ़ा खिजाब भी कनपटी के बालों की सफेदी छुपा नहीं पा रहा है। मैंने देखा कि एकाएक छुपी हुई झुर्रियाँ उजागर

हो गई हैं। उसके माथे की लाल बिंदी काले टीके में बदल गई हैं। सहसा मेरी पत्नी का मुस्कराता हुआ निर्मल-सा चेहरा मेरी आँखों के आगे घूमने लगा है, मैं उससे नजरें नहीं मिला पा रहा हूँ।

"धिक्कार है!" मेरे अंदर से बहुत भारी-सी लानत निकलती है, आधी अपने लिए और आधी उस निर्लज्ज महिला के लिए।

"हुँह! कहाँ मेरी पत्नी, एकदम सिया सुकुमारी...और कहाँ ये नकटी शूर्पणखा।" बड़बड़ाते हुए मैं कोठी से बाहर आ गया हूँ।

मेरी बरसों पुराना साइकिल अब हवा से बातें कर रही है। मैं जल्दी से अपने घर पहुँच जाना चाहता हूँ, अपनी नेक और शरीफ पत्नी के पास।

घूरा

एक-एक करके मेरे सभी साथी गिनती में आ गए, उनकी शक्ति के अनुसार उन्हें युद्ध में शामिल कर लिया गया।

चतुरंगी सेना, चार टुकड़ियाँ, हर टुकड़ी में तेरह-तेरह सैनिक। और सभी मोर्चे पर तैयार-बर-तैयार।

किंतु आश्चर्य! घोर आश्चर्य...न तो मेरा नाम ही पुकारा गया और न ही मुझे किसी गिनती में शामिल किया गया।

बस...मैं कालकोठरी में बंद, अकेला...उदास और उपेक्षित।

कितने ही युद्ध हुए, कितनी बाजियाँ पलटीं।। लेकिन मैं अनगिना ही रहा, मेरी किस्मत नहीं बदली।

उस दिन मैं उनींदा-सा, अधमरा-सा अँधेरी कोठरी में पड़ा अपनी किस्मत को कोस रहा था,

तभी एकदम से शोर उठा -

पहली आवाज, 'बादशाह खो गया - खो गया है बादशाह।'

दूसरी आवाज, 'बिना बादशाह के पूरी पलटन सिरकटी लाश-सी हो गई है।

तीसरी आवाज, 'अरे कोई तो इसका हल ढूँढ़ो रे!'

चौथी आवाज, 'बादशाह न मिला तो मैदान छोड़कर भागना पड़ेगा।'

पाँचवीं आवाज, 'मैदान छोड़कर भागना बुजदिली होगी...कोई उपाय सोचना पड़ेगा।'

सामूहिक आवाज, 'तो जल्दी से सोचो, ऐसा न हो कि बाजी हाथ से निकल जाए।"

फिर यह शोर फुसफुसाहट में बदल गया। शायद कोई गंभीर मंत्रणा चल रही थी,

मैं कान लगाए सुनने की कोशिश कर रहा था। कालकोठरी में बंद कोई इसके

अलावा और कर भी क्या सकता है।

लेकिन मुझे कुछ भी सुनाई नहीं दे रहा था।

एक बार फिर से शोर उभरा, पहले से भी कहीं तेज...मुखर।

मेरे कयास की पतंग अभी उड़ी ही थी कि अचानक मेरी कोठरी का दरवाजा खुला।

एक अनुभवी स्वर उभरा,

'मिल गया मिल गया, बादशाह का बदल मिल गया। सौंपो गद्दी इसे।'

मुझे कालकोठरी से निकाला गया, पूरी इज्जत से शानदार सिंहासन पर बिठाया गया।

युद्ध फिर से शुरू हुआ...मेरे नेतृत्व में।

किसी और के भाग बदले या नहीं बदले, मुझे नहीं पता। लेकिन मेरे जरूर बदल गए।

ताश का जोकर जो हूँ।

–98725–68228

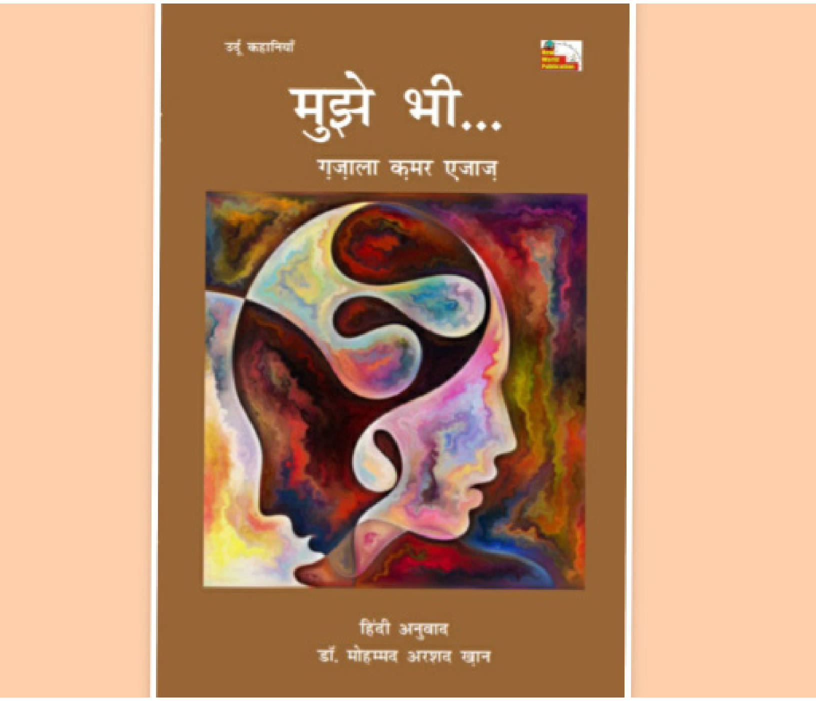

श्यामबाबू शर्मा

माँ की वर्षगाँठ

जिसके पास गैलरी में पहले से पड़ी थी उसने सुबह ही सही स्थान पर लगा दी। किसी ने एल्बम से मोबाइल में कैद किया और संतान संस्कारी सिद्ध हुआ। मदन ने जद्दोजहद कर दिद्दा के पास से अम्मा के पूरे पांच फोटो अपने स्टेटस में अपलोड कर राहत की सांस ली।

नेपथ्य से माँ की आवाज आई– मदन आशा है तुम सब कुशल से होंगे। तुम्हारा समर्पण देखकर मैं भाव विभोर हूं। पूरी मेहनत लगन और निष्ठा से तुमने जिस तरह मेरे छायाचित्र को संपादित किया है उससे मैं जीवंत तो उठी हूं।

मैं तुम्हें और तुम जैसे सुपुत्रों को आभार तो क्या अशेष आशीष देती हूं। पश्चिमी सभ्यता संस्कृति को आभार देने हेतु शब्दकोश में शब्द कब हैं। अगर आज यह न होती तो..हम कहां होतीं!

शिक्षक दिवस

भोला बक्श इंटर कॉलेज में आज प्राचार्य गौरी शंकर त्रिवेदी, उपाचार्य बिंदा सिंह (ठाकुर साहब), अध्यापक हरीराम मिश्र, त्रिपाठी जी, शिवचरण दीक्षित, अंबिका शर्मा और गंगाप्रसाद सब एक कतार में। समभाव सम्मान हेतु विराजमान हुए। गुरु महिमा के श्लोक मधुर आवाज में विद्यालय प्रांगण को दैवीय बना रहे थे।

सभी कार्यों हेतु अलग-अलग बच्चों को नामित किया गया था। किसी ने चंदन लगाया किसी ने पुष्पहार से गुरुवंदन किया। समापन बदरी परधान के पोते अंकुर को सभी गुरुजनों के चरण स्पर्श के साथ करना तय था।

प्रिंसिपल ने आशीर्वाद दिया। उपाचार्य ने सिर पर हाथ रखा। किसी ने दीर्घजीवी, और किसी ने सद्मनुष्य होने की शुभकामनाएं दीं। गंगाप्रसाद भावविभोर हो रहे थे। अश्रु पूरित नेत्रों से अंकुर को अशीषने के लिए शब्द अनुसंधान करने लगे।

अंकुर आगे बढ़ा, झुका कि पीछे से आवाज आई

- नमस्ते नमस्ते करो...

उनके पैर नहीं छुए जाते।

श्लोक चल रहा था..

गुरुर ब्रह्मा गुरुर विष्णु गुरुर देवो महेश्वरः ...।

–9863531572

सन्तोष सुपेकर

जो उसे पता है

'जय रामजी की' उसने कहा पर हाथ नहीं मिलाया मुझसे। और मैं भी चौंका नहीं। उसे जानता हूँ बरसों से। उसके हाथ हमेशा धूल से सने रहते हैं। सीमेंट की धूल से। वह बरसों से मालगोदाम पर सीमेंट की बोरियाँ उठाता रहा है। उसके कपड़े, मुँह, हाथ, पैर सब सने रहते हैं हमेशा सीमेंट से। सीमेंट की धूल से। उससे टकरा जाओ तो धूल उड़ती है सीमेंट की। उसकी साँसों से भी हमेशा गन्ध आती है सीमेंट की। वह चाय पीता है तो उसके मुँह में थोड़ी-थोड़ी सीमेंट की धूल जाती है रोज।

लेकिन उसे ये नहीं पता कि क्या होता है सीमेंट में एयर कॉन्टेंट का महत्व, उसे यह भी नहीं मालूम कि सीमेंट में ट्राई केल्शियम एलुमिनेट या ट्राय केल्शियम सिलिकेट का क्या काम है।

इतना सीमेंटमयी होने पर भी उसका घर, उसका अपना घर, सीमेंट का क्यों नहीं है, उसे ये भी शायद नहीं पता।

पर हाँ, उसे पता है जिंदगी जीने का फार्मूला। जो उसकी मीठी, 'मिलावटरहित' मुस्कान में झलकता भी रहा है,

जब कहा था उसने, बगैर मुझसे हाथ मिलाए- 'जय रामजी की'।

चौथा संस्करण

अपनी नई लिखी लघुकथा को लेकर बहुत पेसोपेश में था वह। उसे कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा था। कुछ समझ नहीं आ रहा था कि क्या करे। ऐसा लग रहा था कि भाव कुछ बिखर रहे हैं शिल्प कुछ बेतरबीत है।

आखिर उसने एक फैसला किया, जैसा कि उसने कहीं सुना था, एक ही विषय पर लिखी गई लघुकथा को उसने अब तीन तरह से लिखा।

पहला प्रारूप, आलोचकों के लिए, दूसरा, प्रबुद्ध पाठको के लिए और तीसरा प्रारूप आम पाठक के लिए। तीनों प्रारूप ले जाकर उसने एक वरिष्ठ साहित्यकार को दिखाए।

"हुम ये तीनों एडिशन तो हुए उन सबके लिए।" पढ़कर उन्होंने एक नई ही बात की, "पर तुम क्या सोचते हो इस कथ्य को लेकर? इसी रचना का एक चौथा प्रारूप भी तो तैयार होना चाहिए तुम्हारे अनुसार। नहीं? जैसा तुम इसे लिखना चाहते थे। खुद को, खुद की भावनाएँ इसमें समाहित कर एक बार और इसे लिख कर

देखो।" वरिष्ठ साहित्यकार ने सुझाव दिया।

"ओह" उसने आश्चर्य से कहा, "यह तो मैंने सोचा ही नहीं था।"

नए उत्साह से वह उस लघुकथा को, जैसा लिखना चाहा था वैसा लिखने बैठ गया। इस प्रयास में उसने दिन रात एक कर दिये, खून सुखाकर, पलकों के बालों को जैसे कलम बनाकर लिखा।

लम्बे समय बाद जब वह लघुकथा पूर्ण हुई और उसने फिर उसे पढ़ा तो खिल उठा। वही रचना उसे अब एक करीने से गुंथी हुई माला लगने लगी।

उसने उसे फिर वरिष्ठ लेखक को दिखाई तो वे भी झूम उठे, बोले, 'देखा, कितना परिवर्तन आ गया?इस रचना के बाकी तीन प्रारूपों की अब कोई जरूरत नहीं रही। यही लघुकथा अब आलोचकों, प्रबुद्ध पाठकों आमजन और तुम्हारे, अर्थात सबके अनुसार तैयार हो चुकी है।'

–9424816096

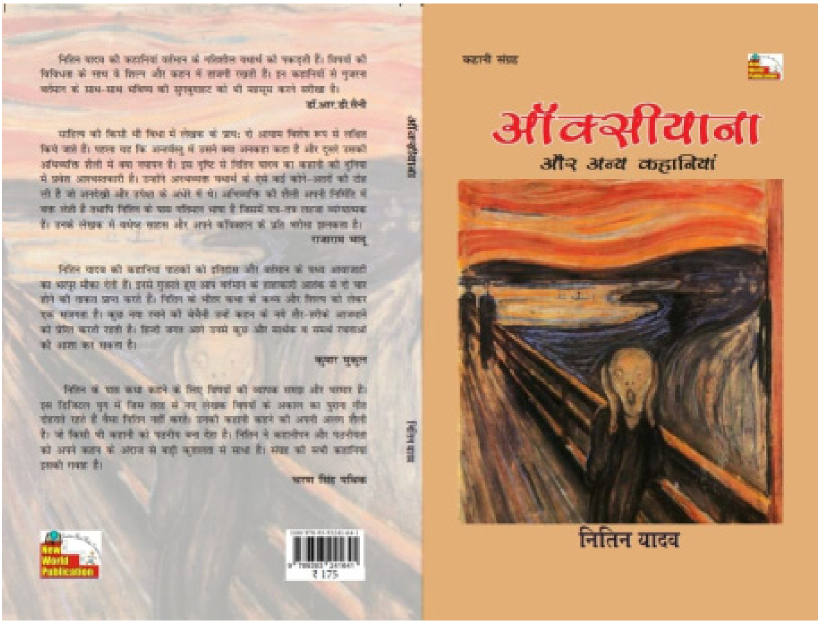

मीनू खरे

प्राइमरी स्कूल

अपने मोबाइल पर एकाएक बेसिक शिक्षा अधिकारी का नम्बर देख प्राइमरी विद्यालय की प्रिंसिपल हड़बड़ा गयीं

खड़े होकर फोन रिसीव किया, "प्रणाम सर!"

बी.एस.ए. महोदय बोले, कैसा चल रहा है विद्यालय?"

"सर हमारा रिजल्ट सौ प्रतिशत रहा। अटेंडेंस भी टॉप रही। सर दाखिले भी पिछले साल से दोगुने हुए।"

"हम्म्म!"

"सर हम पब्लिक स्कूल से सिर्फ अंग्रेजी में पिछड़ते थे पर हमने बच्चों के अंग्रेजी बोलने पर भी मेहनत की जिससे हमारे बच्चे भी अब अंग्रेजी बोल रहे हैं. लोग अपने बच्चों को हमारे स्कूल में खूब डाल रहे हैं।"

"हम्म्म"

"सर हम खेल और भाषण प्रतियोगिता में जिला स्तर पर टॉप हुए हैं। कुछ बच्चे तो पब्लिक स्कूल छोड़ के हमारे यहाँ आये हैं सर। यही मेरा सपना था कि सरकारी विद्यालय पब्लिक स्कूल से बेहतर हों सर!"

"तो अब आप सपने से बाहर आ जाएं।"

"समझी नहीं सर!"

"आपकी शिकायत मिली है कि आप क्षेत्र में वैमनस्य फैला रही हैं। पब्लिक स्कूल छोड़ने के लिए अभिभावकों पर दबाव बना रही हैं। कुछ लोगों पर हमले भी करवाए है आपने।"

"नहीं तो सर! सब बिलकुल झूठ है! हम कम पैसों में उत्कृष्ट शिक्षा दे रहे.. पब्लिक स्कूल में फीस ऊंची है और पढ़ाई हमसे खराब इसलिए लोग बच्चों को यहाँ भेज रहे।"

"पब्लिक स्कूल किसका है पता है? नहीं न? इतने बड़े लोगों का स्कूल ठप करा के नौकरी कर पाएंगी आप?"

"फिर हम क्या करें?"

"आप सिर्फ मिड-डे मील पर ध्यान दीजिए ...बाकी आराम कीजिए!"

इसके बाद विद्यालय सिर्फ मिड-डे मील पर केन्द्रित हुआ।

प्रिंसिपल ने खाली समय में परचून की दुकान खोल ली।

याह्वी की डायरी

आज मम्मी घर पर नहीं थीं। मेरा चिप्स खाने का मन था। मैं पास की दुकान से चिप्स ला रही थी कि एक अंकल मेरे पास आये जिन्हें मैं जानती भी नहीं थी।

अंकल कहने लगे; "तुम्हारी मम्मी को चोट लग गयी है...बहुत खून बह रहा है..मम्मी आपको बुला रही हैं..आप चलो मेरे साथ।"

मैं एकदम से घबरा गयी। फिर मुझे याद आया कि मम्मी ने कहा था कि अजनबियों के साथ जाना खतरनाक हो सकता है।

मम्मी ने मुझे एक पासवर्ड बता रखा है और कहा है कि; "अगर मैं तुमको किसी अजनबी से बुलवाऊँगी तो उसे यह पासवर्ड बता दूँगी। तुम उससे पासवर्ड पूछना। अगर वो अजनबी पासवर्ड बता दे तो तुम उसके साथ आ सकती हो पर अगर वो यह पासवर्ड न बता पाए तो समझना कि वो झूठ बोल रहा है।"

मैंने अंकल से पासवर्ड पूछा तो वो बोले; "आपकी मम्मी ने तो कोई पासवर्ड नहीं दिया है."

मैं बोली; "अंकल फिर तो मैं आपके साथ नहीं चल सकती।"

अंकल बोले; "आपकी मम्मी को बहुत खून बह रहा, जल्दी चलो नहीं तो वो मर जाएंगी."

मैंने कहा; अंकल मैं नहीं जाउंगी। अगर आप मेरे साथ जबरदस्ती करोगे तो मैं दुकानवाले भैया से शिकायत कर दूँगी।"

इतना सुनते ही अंकल डर गए और वहां से भाग गए। मुझे मजा आया!

मम्मी तुमने मुझे भी कम्प्यूटर जैसे पासवर्ड से सेव कर दिया।

थैंक-यू मम्मी!

याह्वी गोस्वाभी

क्लास 2 ए

एस डी कान्वेंट, बरेली

–9415390900

कनक हरलालका

ब्रिलिएंट

रमा जी की अवस्था दिनों दिन बिगड़ती जा रही थी। आज कुछ ज्यादा ही खराब थी। मानसिक अस्वस्थता के कारण वे सभी इकट्ठा हुए लोगों से केवल अपने बेटे की बात कर रही थीं।

'अरे वह पढ़ने में बहुत अच्छा था। हमेशा फर्स्ट आता था। पता है उसे कॉलेज से ही विदेशी नौकरी के लिए चुन लिया गया था। अब वह अमेरिका में है। मैंने उसे लैपटॉप पर बारिश की बूंदें भेजी थीं। हवा का संगीत भेजा था। मेघों की तस्वीर भेजी थी। उसे न बचपन से ही सावन बहुत अच्छा लगता था। देखना वह जल्दी ही आएगा। मेरे लिए नई साड़ी लाएगा। हमेशा कहता है माँ तुम फटी साड़ी मत पहनो। अरे सुनते हो बेटा इतने पैसे भेजता है अब तो केला मूड़ी छोड़कर इधर आओ।'

रमा जी को नहीं बतलाया गया था कि उसके लैपटॉप में बिजनेस के डीटेल्स डाउन लोडेड हैं। उससे बारिश की बूंदें डिलीट कर दी गई हैं। रमा जी को नहीं बतलाया गया था कि उनका बेटा हवाई जहाज में बैठ गया है पर वह भारत नहीं कनाडा जाएगा। कि वहाँ पर इमोशन नहीं केवल प्रमोशन चलता है। वहाँ पर अतीत नहीं है केवल भविष्य है।

रमा जी को यह भी नहीं बतलाया गया था कि उनके पड़ोसी का लड़का भी उनके बेटे की राह पर फर्स्ट आकर विदेश जाने के लिए दिन रात एक कर रहा है।

–9706265667

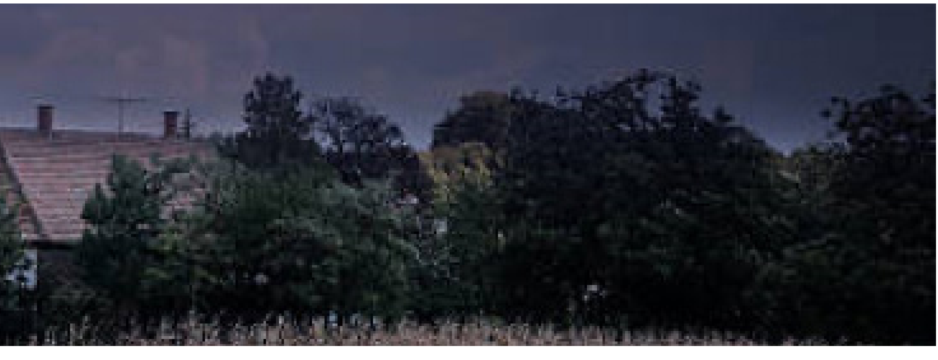

अवधेश तिवारी

विराम-चिह्न

मुझे विराम-चिह्न बहुत पसंद थे।
मेरा बचपन मुझे अल्पविराम की तरह प्रतीत हुआ।
फिर यौवन के खूबसूरत दिन अर्धविराम की तरह बीत गए।
प्रौढ़ावस्था में हर जगह प्रश्नवाचक-चिह्न मेरा पीछा करते रहा।
और जीवन की चतुर्थ अवस्था यानी बुढ़ापे में मैं स्वयं विस्मयादिबोधक बन गया।

जिस दिन मैं मरणासन्न था, मेरे चारों ओर पूर्णविराम वायुमंडल में नाच रहे थे।

एण्ड और एण्ड

दो भाई थे। बड़ा जितना लोभी था, छोटा उतना ही आत्मसंतोषी था। दोनों एक ही शिक्षक के पास ट्यूशन पढ़ते थे।

एक दिन शिक्षक उन्हें शुद्धलेख लिखना सिखा रहे थे। शिक्षक ने कहा, 'एंड शब्द तीन-तीन बार लिखकर बताओ।'

शिक्षक ने दोनों भाइयों की जब कॉपियाँ जाँची तो बड़े भाई ने लिखा थाAnd, And, And....और छोटे ने लिखा था End,End,End...।

-9893025431

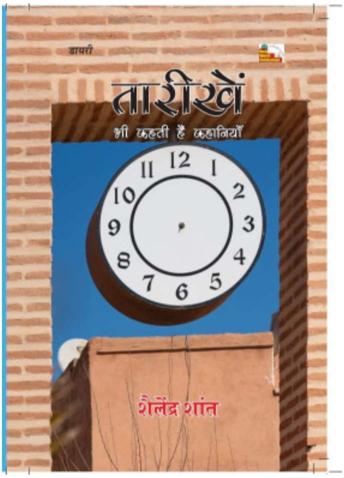

रतन चंद 'रत्नेश'

बेखबर

'सुनती हो अनन्या...हमारे बगलवाले फ्लैट में रहने वाले रमेश बाबू की कल रात किसी ने हत्या कर दी है।' सुबह-सुबह हाथ में अखबार थामे अनिरुद्ध ने अपनी युवा पत्नी से कहा।

अनन्या तेज कदमों से उसके पास आई।

'तुम्हें किसने बताया?'

'अरे मुझे किसने बताना था। ये देखो खबर छपी है।' कहते हुए अनिरुद्ध ने अनन्या की ओर अखबार बढ़ा दिया।

पेंटिंग

इस बार नाटक की रिहर्सल के समय सभी कलाकारों ने अपनी-अपनी भूमिका में जान डालने की पूरी कोशिश की और वे सभी उसमें सफल भी दिख रहे थे परंतु निर्देशक को एक ही चिन्ता खाए जा रही थी। वे मंच पर ड्राइंग-रूम की दीवार पर कुछ बेहतरीन पेंटिंग्स टांगना चाहते थे ताकि मंच जीवंत हो उठे।

उन्हें अपने एक परिचित मशहूर पेंटर की याद आई जो इसी शहर में रहते थे। फोन पर उनसे संपर्क साधा और समय लेकर उनसे मिलने उनके घर जा पहुंचे।

कुशलक्षेम के बाद निर्देशक ने पेंटर से गुजारिश की, 'अपने नाटक के मंचन के लिए आपकी दो पेंटिंग्स चाहिए।'

इस पर पेंटर ने कहा, 'देखिए, यों तो मैं अपनी पेंटिंग्स किसी को नहीं देता परंतु आप मेरे परिचित हैं, इसलिए ना भी नहीं कह सकता, पर एक शर्त है।'

निर्देशक की आस बंधी, 'निस्संकोच कहें क्या शर्त है?'

'मेरी पेंटिंग्स आपको बहुत एहतियातन ले जानी होंगी। जैसी जाए, वैसी आए। कर सकेंगे?'

निर्देशक ने कहा, 'निश्चिन्त रहें। मैं इसकी गारंटी देता हूं।'

मंचन के दिन निर्देशक महोदय स्वयं अपने दो साथियों के साथ वाहन में उन दो पेंटिंग को सावधानी से ले गए।

नाटक सम्पन्न हुआ और दोनों पेंटिंग्स भी सही-सलामत पेंटर के घर वापस पहुंच गईं।

नाटक को भारी सफलता मिली। निर्देशक महोदय को बधाइयां मिलने लगीं। कुछ जानकार भी घर आए तो उनसे उन्होंने कहा, 'नाटक की सफलता में सिर्फ मेरा ही हाथ नहीं, उन कलाकारों का भी उतना ही योगदान है जिन्होंने अपनी अभिनय कला की छाप छोड़ी। बहरहाल उन पेंटिंग्स के बारे में आपका क्या ख्याल है?'

'कौन-सी पेंटिंग?' आगंतुकों ने एक दूसरे को प्रश्नभरी निगाहों से देखा।

जाफर मेहदी जाफरी

बचत

महीने की पहली तारीख को उसने अपनी छोटी सी तनख्वाह बीवी के हाथ पर लाकर रख दी। बीवी ने रूपये लेकर अल्लाह का शुक्र अदा किया और पूछा

'तुमने इसमें से पैसे लिए!'

'नहीं...किस लिए?'

'अपने जूते के लिए'

वह मुड़ा। दहलीज पर रखे जूते उठा लाया।

'देखो...इसका लेदर कितना अच्छा है। 12 साल हो गये लेकिन अभी तक कहीं से भी नहीं फटा है। एक छेद भी नहीं हुआ है।'

'ठीक कह रहे हो लेकिन इसका सोल...तला तो साथ छोड़ रहा है।'

वह सुनी अनसुनी करता हुआ बोला।

'तनख्वाह उतनी ही है। मंहगाई बहुत बढ़ गई है।'

फिर उसने उलट कर जूता देखा और मुस्कुराते हुए जेब में हाथ डाला और बन्द मुट्ठी बीवी की हथेली पर खोलता हुआ बोला।

'तला चिपकाने के लिए फेविकॉल ले आया हूँ...दस रूपये में...'

–9889053590

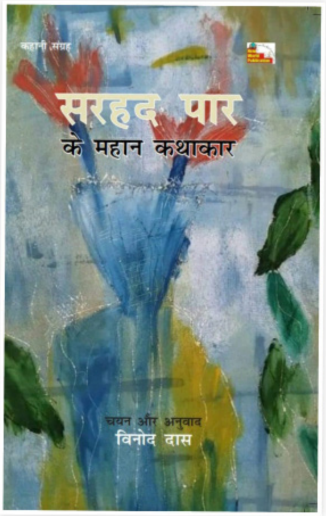

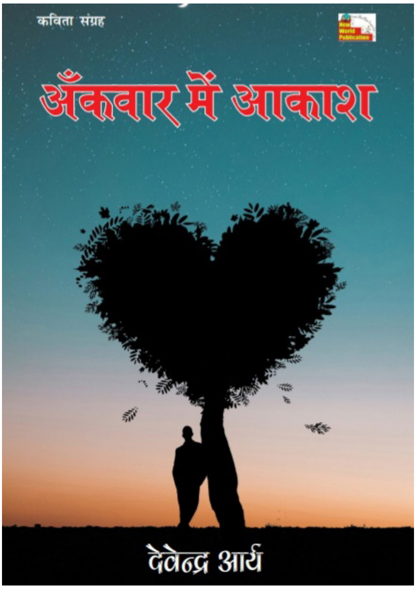

पवन शर्मा

हक

'बाहर भीड़ लग गई है। मीडिया वाले भी आ गए हैं।'

'हूँ।'

'बताओ, ऐसे कैसे, कब तक चलेगा?'

'ये सब सोचने का काम मेरा है। तुम्हें नहीं सोचना।'

'जानता हूँ।'

'फिर इतनी चिंता क्यों करते हो?'

'चिंता होती है...उन्हें अभी तक उनका मुआवजा नहीं मिला है...उनकी जमीन लेने के बाद भी।'

'चुप रहो, मुझे मत समझाओ...समझे।'

'उन्हें खाने के लाले पड़ गए हैं...उनके पास जमीन थी तो खेती करके खा ही लेते थे। अब तो जमीन ही नहीं है उनके पास।'

'शट् अप!'

'.....................।'

'कितने लोग हैं? '

'लगभग बीस-पच्चीस होंगे। कहते हैं- बिना मिले नहीं जाएंगे...फैसला करके जाएंगे।'

'ओ. के., बुलाओ सबको, पर मीडिया की एंट्री नहीं होनी चाहिए। '

'ठीक है, पर सब गुस्से में हैं। यहाँ आकर बलवा न कर बैठें वो लोग। '

'क्या करेंगे?...प्रश्न उछालेंगे...चीखेंगे-चिल्लाएंगे...और क्या?'

'वो तो ठीक है, पर...'

'सब कटी जड़ों वाले रिरियाते लोग हैं...गर्दनें झुकाना जानते हैं।'

'अब वो दिन गए...आप गलत सोच रहे हैं...हर साँस डूबी-डूबी-सी है उनकी, फिर भी जिये जा रहे हैं...ऐसे लोग बहुत खतरनाक होते हैं, जब उन्हें अपना हक नहीं मिलता।'

–9425837079 / 8319714936

पूरन सिंह

ये गंगाजल है

उन सभी को न जाने किसने बता दिया कि इरफान मियां के घर सभी मुसलमान इकट्ठे होकर साजिश रच रहे हैं कि वे कल मां दुर्गा के मंदिर को ध्वस्त कर देंगे।

बस फिर क्या था सभी लोग इकट्ठे होने लगे।

उन सभी के हाथों में, तलवारें, भाले, काँटा, बल्लम, गदा और त्रिशूल थे और वे सभी जय श्री राम, हर हर महादेव, जय भवानी के नारे लगाते हुए इरफान मियां के घर में घुस गए थे।

उस समय इरफान मियां अपने परिवार के साथ हंस-हंसकर बातें कर रहे थे। भीड़ और भीड़ का उन्मद देखकर वे सन्न रह गए। इसके पहले कि वे कुछ बोलते, तलवार लहराते हुए कोई बोला था, 'क्यों वे कटिल्ले, साले, मां दुर्गा का मंदिर तोड़ेगा'। इरफान मिया सन्न। जान गए थे अब मौत बहुत दूर नहीं है। 'हरामी अपने घर में साजिशें रचता है मुसल्लाओं के साथ।' भाला सीधा करते हुए लम्बे जनेऊवाला गुर्राया था।

इरफान मियां ने हिम्मत की 'ऐसा कुछ नहीं है। हम निर्दोष हैं'।

'तो ठीक है इसके घर की तलाशी लो।' गदाधारी बोला था।

इरफान मियां के घर की तलाशी ली जाने लगी थी। कहीं कुछ नहीं मिला था। हां टांड पर एक बड़े से जार में कुछ पारदर्शी तरल, जल सदृश था। उठा लाया था कोई उसे, 'ये-------ये-------ये एसिड है। इसी से...'

मृत्यु सामने खड़ी थी फिर भी इरफान मियां को हंसी आ गई थी।

'डर नहीं है। मौत सामने है फिर भी हंस रहा है, साले'। लाठी थामे था, वही बोला था।

'आप हिंदू हैं और एसिड और गंगाजल में फर्क नहीं जानते। ये गंगाजल है'।

इरफान मिया का यथार्थ जानकर सभी सन्न रह गए थे। अब हवा में लहलहाते भाले, फरसे, कांता, बल्लम, लाठी और त्रिशूल झुके हुए थे।

-9868846388

कमल कपूर

जनम-जनम मोहे जननी ना कीजो

"मैडम जी! माँ जी अपने कमरे में नहीं हैं," नाश्ते वाली ट्रे मेज पर धरते हुए शबनम ने कहा तो वह लापरवाही से बोलीं," "अरे! वॉशरूम में होंगी। तू वहीं नाश्ता धर आती न! जब जी चाहता खा लेतीं महारानी।"

"वॉशरूम में भी नहीं हैं। मैंने दरवाजा खटखटाकर देख लिया मैडम जी! रात के खाने वाली थाली भी ज्यों की त्यों धरी है।"

"मैं देखती हूँ। तुम साहब को लेकर आओ।"

सबने मिलकर पूरी कोठी छान मारी किन्तु वह कहीं नहीं निलीं।

"दिन-रात तो उन्हें कोसती थी तुम कंचन! तुम्हारी जली-कटी आखिर कब तक बर्दाश्त करतीं बेचारी...चली गईं। देख लो, ना तो उनके ठाकुर जी हैं यहाँ और ना ही उनके कपड़े और बैग," माँ जी के सपूत ने कहा तो वह बिफर उठी, "तो आपने ही कौनसा ताज पहना दिया उन्हें। अजी! आपकी तो माँ थी न! आप ही परवाह कर लेते न उनकी। 'सर्वेंट-क्वार्टर' में रखने का फैसला भी तो आपका ही था न? मैं तो अपनी मम्मा को कभी सर्वेंट-क्वार्टर में ना रखूँ।"

"कमाल हैं आप लोग। एक-दूसरे पर इल्जाम मढ़े जा रहे हैं। माफ करना साहब जी! मैडम जी! आप दोनों ने माता जी के साथ जो बर्ताव किया, ऐसा तो कोई जानवर के साथ भी नहीं करता। तंग आकर माता जी गाँव चली गई हैं और मैं ही उनको सुबह चार बजे वाली बस में बैठाकर आया हूँ। इसके लिए चाहें तो मुझे नौकरी से निकल दें आप," देहरी पर गार्ड सखाराम खड़ा था। वे लोग कुछ कह पाते, उससे पहले ही उसने जेब से एक बंद लिफाफा निकाला और साहब के हाथ में थमााकर वहाँ से चला गया। लिफाफे में माँ का खत था।

मेरे 'सपूत'!

तेरा सुखी संसार देखने एक दिन तेरे बिन बुलाए औचक ही आ गई थी तेरे द्वार पर और बेपनाह दुःख और अपमान बटोरकर अब बिना बताए औचक ही जा भी रही हूँ। तुम लोगों के दिए कष्टों की फेहरिस्त इतनी लंबी है कि उन्हें बयान करने की ताकत मुझमें नहीं। सच कहते थे तुम्हारे बाबूजी 'जिनके लिए तुम जान दिये देती हो और सब कुछ कुर्बान करने पर तुली रहती हो, तुम्हारे वे दोनों सपूत कभी तुम्हें पानी भी ना पूछेंगे।' वही तो हो रहा है बिटवा! एक सपूत तो पल्ला झाड़कर बिदेस ही जा बसा और दूसरा अपनी माँ को अपने साहबी मखमली ठाठ में टाट का पैबंद समझता है। अभी तो मेरे हाथ-पाँव भी चल रहे हैं और मेरा घर भी सलामत है...गाँव में बहुतेरे रिश्ते भी हैं मेरे और इज्जत भी इसीलिए अपनी दुनिया में लौट रही हूँ और कभी कभी तुम्हारी चौखट पर पलटकर ना आऊँगी। बस अब तो बिटवा! हर दिन...हर पल छिन,, भगवान से यही प्रार्थना करूँगी...जनम-जनम मोहे जननी ना कीजो।

संध्या तिवारी

व्याख्या

आज पति और भाई को साथ साथ गिफ्ट दिया, पति को न जाने क्यों लगा कि भाई का गिफ्ट मंहगा है। भाई के पीठ फेरते ही पति इस तरह फट पड़ेंगे

यकीन नहीं था...

'तुम हमेशा अपने मायके वालों की फ्रिक में ही लगी रहना, उनसे तुम्हारा लगाव जग जाहिर है लेकिन कम से कम मेरी आँख कूचने के लिए तो कुछ दिखावा कर लिया करो।'

'लेकिन मैंने आजतक...' उसने सहमते हुए कहा

'चोप्प...' पति थप्पड़ दिखाते हुए गुस्से से दहाड़ा

इतना अपमान...उसे लगा कि धरती फट जाए और वह उसमें समा जाये लेकिन न धरती फटी और न उसका कलेजा।

ग्लानि गलित मन लिए उसने संस्कार चैनल लगा दिया

कथावाचक पांडवों की अंतिम यात्रा की कथा सस्वर सुना रहा था

'भइया...बड़े भइया...देखो न द्रौपद्री को क्या हुआ...द्रौपदी उठ ही नहीं पा रही...।'

सभी भाई काल के गाल में समाती द्रौपदी के पास आ खड़े हुए, सिवाय युधिष्ठिर के।

अपने हाथ में पकड़े डण्डे को हिमालय पर जमी बर्फ में धंसाते हुए वह बर्फ में पिघलती द्रौपदी की ओर पीठ किये ही बोले;

'मैं जानता था...सबसे पहले तू ही गलेगी द्रौपदी...तुझे सदेह स्वर्ग जाना इसलिए नसीब नहीं हुआ...क्योंकि तूने हम पांच पतियों के साथ पक्षपात किया...। तेरा एकांतिक भाव केवल अर्जुन के लिए था...बाकी हम चार के लिए तो केवल कर्त्तव्य भाव ही ...।'

मरणासन्न याज्ञसैनी का म्लान मुख बुझते दीये की लौ सा भभक उठा...मौत से ठंडी बर्फ पर उसके नेत्रों से दो गर्म आँसू गिरकर बिला गये...काँपती आवाज में हटात् उसने कहा;

'हे धर्मराज! मेरे पूरे जीवन की निष्ठा की ऐसा व्याख्या तो केवल धर्म ही कर सकता है। दूसरे में भला इतनी सामर्थ्य कहाँ?'

उस समय ऐसा लगा जैसे–द्वापर से आधुनिक युग तक स्त्री निष्ठा की यही व्याख्या है शायद...

–7017824491,

शोभना श्याम

ड्यूटी

'जान एक बढ़िया सी अदरक की चाय पिला दो तो उठ कर तैयार होऊं। आज तो गजब की सर्दी है।'

'मगर आज तो इतवार है, इतनी सुबह कैसे उठ गए? तैयार क्यों होना है?'

'हम तो नौकर है भई, हमारे लिए क्या इतवार क्या छुट्टी। किसी संस्था ने बच्चों का पेंटिंग कम्पीटिशन रख दिया। बस! लग गयी ड्यूटी बच्चों को ले जाने की। न ये प्रतियोगिताएँ रखने वाले मौसम देखते हैं, न ये भेजने वाले। बताओ! इतनी सर्दी में बच्चे क्या पेंटिंग करेंगे? सुन्न हाथों से पेंसिल ब्रश तो पकड़े नहीं जाएंगे। खैर, अपन को तो अपनी ड्यूटी करनी है।'

वह बड़बड़ा रहा है ..।

'सुनिए, बंटी का फोन आया है, भाई साहब का एक्सीडेंट हो गया है।'

'क्या! इतनी सुबह भैया एक्सीडेंट कराने कहाँ निकल गए। लाओ मुझे दो फोन।.. हेलो बंटी ये कैसे हुआ? क्या? दूध लेने निकले थे? टेम्पो ने टक्कर मार दी। ओह, कौन से अस्पताल ले जा रहा है? अच्छा, तू चिंता न कर! सब ठीक हो जाएगा। तू अस्पताल ले के पहुंच, मैं बस अभी आता हूँ।'

उसने झटपट स्कूल का नम्बर मिलाया, 'हेलो सर!'

'सर, मेरे बड़े भाई का एक्सीडेंट हो गया है। प्लीज सर, मैं बच्चों को नहीं ले जा सकूँगा। प्लीज सर!....थैंक्स सर।'

'क्या हुआ जी?'

'सर ने बोल दिया वो किसी और की ड्यूटी लगा रहे हैं ...चलो ये मसला तो निपटा। अब भैया के पास जाता हूँ।, बंटी कह रहा है बहुत चोट आयी है।'

'अरे, रे, पहले चाय तो पी लो। कड़ाके की सर्दी है...और ...रिलेक्स। बंटी अस्पताल तो ले गया है न। इलाज तो डॉक्टरों को ही करना है।'

'हाँ वो तो है। इतनी सर्दी में मन तो नहीं है रजाई से निकलने का मगर...'

फोन मिला कर, 'हेलो बंटी ...पहुंच गया अस्पताल? चलो शुक्र है डॉक्टर मिल गए। इलाज शुरू हुआ? अरे बेटा, कहते हुए भी शर्म आ रही है। आज स्कूल में बच्चों को एक कम्पीटिशन में ले जाने की ड्यूटी लगा रखी है। बहुत खुशामद की प्रिंसिपल से, कहते हैं, इतने शार्ट नोटिस पर किसे लाऊं? आप बच्चों को स्कूल से लेकर इवेंट पर पहुँचो, तब तक किसी का इंतजाम करता हूँ। बस बेटा जल्दी से जल्दी वहाँ से निकलकर सीधा अस्पताल पहुँचूँगा। तब तक तू सम्भाल लेना। और चिंता न कर सब ठीक हो जाएगा। बढ़िया अस्पताल है। ठीक है? टेक केयर!'

रजाई ओढ़ते हुए –

'सुनो जरा एक कप चाय और बना दो। तब तक एक नैप ले लेता हूँ। फूऽऽऽ! बहुत सर्दी है।'

गोकुल सोनी

डायन

छोटे से जंगल के इस आदिवासी गाँव में दो महीने की, सुन्दर वस्त्रों में लिपटी बहुत सुन्दर बच्ची 'परी' को देखने, भीड़ लगी हुई थी, जिसे एक नर्स गोद में लिए हुए थी। नर्स ने धन्नू और उसकी घरवाली को बुलाया और पूछा– बोलो इस बच्ची को तुम अपने पास रखना चाहते हो या मैं ले जाऊँ? पर हाँ, फिर कभी इसे वापस लेने मत आना।

धन्नू ने झटपट उसके कपडे हटाकर देखे। अरे! इसके पैर तो एकदम सीधे हैं, बहुत सुंदर भी। दो महीने का पूरा घटनाक्रम उसकी आँखों में तैर गया जब उसकी घरवाली ने उलटे पाँव वाली बच्ची को जन्म दिया था।

दाई ने यह खबर पूरे गाँव में फैला दी, कि धन्नू की घरवाली के यहाँ उलटे पांव वाली बच्ची हुई है, गाँव में सनसनी फैल गई। गाँव के हर कोने में खड़े लोगों के झुण्ड बस इसी बात की चर्चा कर रहे थे कि अब जरूर गाँव पर विपदा आने वाली है।

कल्लू– भूरे दादा, जरूर यह डायन है जो बच्ची का रूप धरकर आई है। पास के गाँव में भी एक बार ऐसा हुआ था। फिर जो महामारी आई तो सौ–दौ सौ लोग तो यूँ ही निबट गए थे।

भूरे दादा – इस डायन को भी इसी गाँव में आना था। जरूर धन्नू के पिता की आत्मा होगी। वह था भी पक्का गंवार और लड़ाका गाँव में उसकी किसी से नहीं बनती थी। वही गाँव वालों से बदला लेने आया है।

कल्लू– धन्नू की माँ फुलिया भी कम थी क्या? वह भी तो पूरे गाँव को सर पर उठाये रहती थी। वो भी तो किसी डायन से कम नहीं थी। जरूर वही पूरे गाँव को सताने आई है। दाई कह रही थी, बहुत सुंदर है। अब तो ये समझो कि जिसने भी सुंदर और मासूम समझकर गले लगाया, उसी का खून पी जायेगी।

तुरंत ओझा जी भी आ गये, बोले सुनकर मैं फौरन दौड़ा चला आया हूँ।

भूरे दादा ओझा जी से बोले– अब तो आप ही गाँव को इस विपत्ति से बचा सकते हो।

ओझा जी बोले– इसमें तो पूजा भी काम में नहीं आयेगी।

अब तो एक ही उपाय है, कि बच्ची को जंगल में गड्ढे में गाड़कर उसके ऊपर बड़ी चट्टान रख दी जाए ताकि वह वापस न आ सके। धन्नू न माने तो फिर उसके पूरे परिवार को गाँव से बाहर कर दिया जाए।

अचानक डॉ. अनूप मल्होत्रा आर्थोपेडिक सर्जन की गाडी आकर रुकी। सभी

की बात सुनकर वे मुस्कराकर बोले– मैं चाहता हूँ कि यह डायन मेरा खून पिए।

उन्होंने इशारा किया, नर्स तुरंत बच्ची को ले आई। माँ ने कुछ हल्का प्रतिरोध किया परन्तु वे अपने साथ बच्ची को ले गए थे। उन्होंने ही उसका आपरेशन किया था और परी नाम रखा। आज वे उसे वापस गाँव लेकर आये थे।

बच्ची की माँ ने फौरन परी को नर्स के हाथ से झपटा। वह बच्ची के पैर चूमती जा रही थी। उसकी आँखें बह रही थी और वह बोलती जा रही थी...नहीं मेरी बेटी डायन ना है, वह तो परी है परी। फिर बच्ची को धन्नू की गोद में देकर डाक्टर साहब के पैर पकड़ लिए। अब उसके आंसू डाक्टर के पैरों को धो रहे थे।

–7000855409

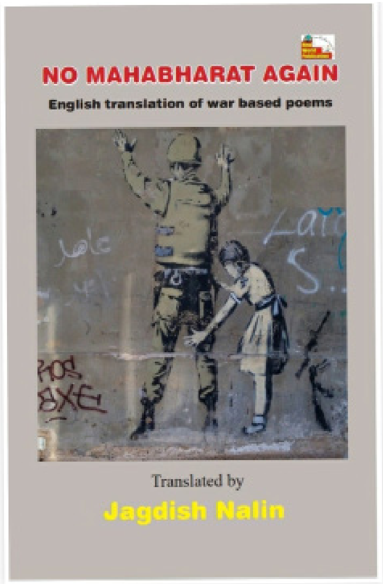

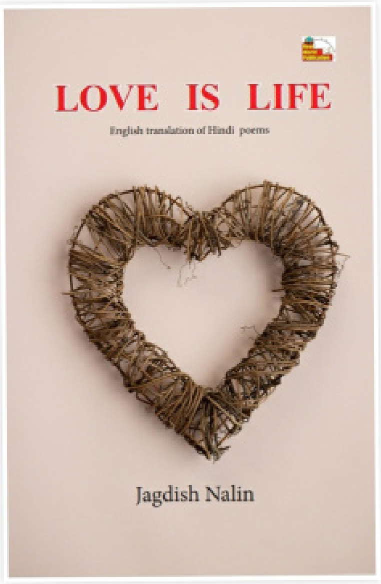

अशोक गुजराती

लेखक

मेरी दो किताबें प्रकाशित हो गयीं। अख़बारों में ख़बरें छपीं (स्थानीय चैनेल पर साक्षात्कार के साथ मेरी रचनाओं का पाठ हुआ (फे़स-बुक पर अनेक प्रतिक्रियाएं मिलीं। ऐसे में मुझे एक पुरस्कार मिलने की घोषणा भी हो गयी। अभिनंदन समारोह आयोजित हुआ। हमारा छोटा-सा क़स्बा है। कई-कई लोगों तक मेरे लेखन की चर्चा पहुंची। दोस्त बढ़े, परिचितों की संख्या में वृद्धि हुई।

मैं बहुत ख़ुश था लेकिन एक समस्या ने मुझे परेशान कर दिया। गाहे-ब-गाहे मित्रें, रिश्तेदारों, पहचान वालों के इस तरह फ़ोन आने शुरू हो गये...।

'भाई साहब, आपका लेखन में बहुत बड़ा नाम हो गया है. मेरी बधाई लें। एक काम इस ग़रीब का भी कर दें- मेरी बिटिया की शादी अगले महीने तय हो गयी है। यदि आप अपना क़ीमती समय निकाल कर विवाह के निमंत्रण पत्र का मज़मून लिख देते...'

'अरे गोयल साहब, आपकी किताबों की प्रसिद्धि तो आसमान छू रही है। मेरी दुआ है कि आप दिन दूनी, रात चौगुनी तरक्की करें. हां, इस बीच एक तकलीफ़ देना चाहूंगा। क्या है कि हमारे पार्टी वाले मेरा सम्मान करना चाहते हैं। उन्हें मेरी प्रशंसा में मान-पत्र तैयार करना है। यदि आप उन्हें यह मान-पत्र लिखवा दें...'

'यार विनीत, मैं बड़ी मुश्किल में फंस गया हूं। तू ही इससे उबार सकता है। मेरे बॉस के ज्ञानी पुत्र को राज्य स्तरीय निबंध प्रतियागिता में भाग लेना है। बॉस पीछे पड़ गया है कि तू महान लेखक है, तुझसे निबंध लिखवा लाऊं...'

–9971744164

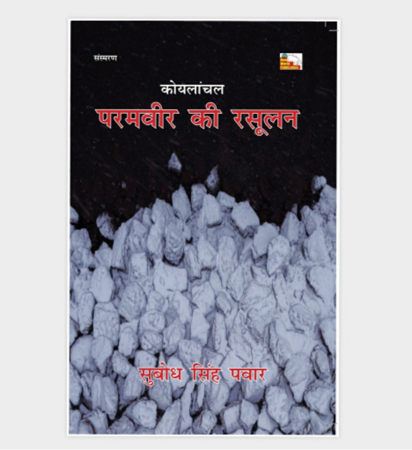

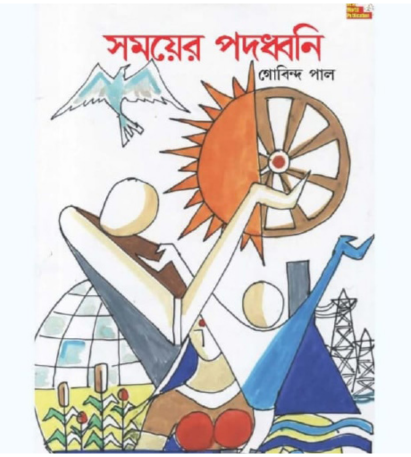

उमेश महादोषी

मुक्ति का रास्ता

अचानक वो आयी, आकर मेरे सामने बैठ गयी, ठीक वैसे ही जैसे 'उस दिन' तक आकर बैठ जाती थी।

निराशा से उबरते हुए मैंने उसका स्वागत किया, ''मुझे विश्वास था कि तुम आओगी। ...तुम मुझे कभी निराश कर ही नहीं सकती।''

''तुमने तो अपने जीवन की रिक्तता को भर लिया था। फिर आज...''

''नहीं, उस दिन तुम मिन्नी के बारे में सुनते ही चली गयीं! मैं तुमसे पूरी बात नहीं कह पाया। इन दिनों मैंने कितना याद किया, कितना पुकारा तुम्हें, पर तुम आज आयीं तो तब, जब मिन्नी मुझे छोड़कर चली गयी।''

''उस दिन मुझे लगा था कि अब मेरे लिए तुम्हारे पास स्पेस नहीं रहा, तुम मुक्त हो चुके हो मुझसे...। शायद इसीलिए तुम्हारी आवाज भी मुझ तक नहीं पहुँची।''

''नहीं, तुम्हारे लिए मेरे पास स्पेस कभी खत्म नहीं हो सकता। तुमसे मुक्त होने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। ऐसी बात तुम्हें सोचनी भी नहीं चाहिए। और तुम जिसे रिक्तता को भर लेना कहती हो, वह तो जीवन की आवश्यकता की पूर्ति...।''

''मैं जानती हूँ। मैंने ही कितनी बार तुमसे कहा था कि जीवन को कभी अधूरा और अतृप्त नहीं जीना चाहिए। तुम्हारी भावुकता और आवश्यकता को भी मुझसे अधिक कोई नहीं समझ सकता, इसलिए मिन्नी को मैंने ही प्रेरित किया था तुम्हारे साथ आने को।''

''फिर...?''

''मैं इस दुनिया से जाने के बाद भी तुमसे अलग नहीं हो पायी; तुम याद करो, रोज तुम्हारे सामने बैठी रहती थी। मैंने कितनी बार अपने हस्ताक्षर की आवश्यकता पूछने के बहाने तुम्हारे अन्तर्मन को समझने का प्रयास...''

''वो कैसे?''

''प्रत्येक जगह तुम्हारी अँगुलियों पर बैठकर हस्ताक्षर मैंने ही तो किये थे, पर भावनात्मक स्मृतियों की लहरों के बावजूद तुम्हारे अन्तस में मेरी मृत्यु ही अंतिम सत्य की तरह पैठी रही। भावनात्मक स्मृतियों की लहरें तुम्हें मुझसे अलग भी नहीं होने दे रही थीं।''

''ओह! किन्तु उस दिन...''

''उस दिन भी तुम्हारे स्वर में वही भाव निहित था। निम्मी के आ जाने के बाद तो कुछ और भी गहन रूप में!''

"फिर आज कैसे मुझ पर दया आ गयी?"

"तुम मेरे भटकाव को नहीं समझ रहे हो! वैसे भी प्रेम में दया नहीं होती है! आज तुम्हारी आवाज में पीड़ा थी, जो मेरे हृदय को झकझोर गयी...निम्मी के व्यवहार से मिली ठेस से जनित पीड़ा के तारों की झंकार मुझे अपनी ओर खींचने लगी, मैं स्वयं को रोक न..."

"तो क्या मुझे मेरी भूल का प्रायश्चित करने का अवसर दोगी?"

"भूल नहीं, मुझे भटकाने का प्रायश्चित करना होगा। इसके लिए तुम्हें मेरा कहना मानना होगा।"

"मैंने सदैव तुम्हारी हर बात मानी है...!"

"तो जाओ, मिन्नी को मनाकर ले आओ और उसे अपने जीवन की आवश्यकता की पूर्ति नहीं, मेरी प्रतिमूर्ति मानकर अपनाओ। अपने जीवन की नहीं, मेरी रिक्तता को भरो। मुझे भटकाव से मुक्ति दो!"

"पर..."

"पर-वर कुछ नहीं! भटकाव से मुक्ति ही जीवन का सत्य है; तुम्हारे लिए और मेरे लिए भी! निम्मी के लिए तुम्हारा प्रेम ही हमारे सत्य तक पहुँचने का रास्ता बनेगा।"

–09458929004

प्रतापसिंह सोढ़ी

भाग्यशाली

लम्बा–सा चोगा पहने और चेहरे पर मास्क लगाये वह एक मजदूर के टापरे में दाखिल हुआ। खटिया पर लेटा हुआ मजदूर आराम कर रहा था। एक अजनबी को सामने खड़ा देख वह घबराते हुए खटिया से उठा और बड़बड़या ''कौन हो तुम?''

''कुछ देर में तुम्हें मालूम हो जायेगा। पहले तो तुम यह बताओ कि तुम्हारा मजहब क्या है? मेरा मतलब यह है कि तुम हिंदू हो या मुसलमान।'' मास्क से झाँकती आँखों की पुतलियों को घुमाते हुए बोला।

''न तो मैं हिन्दू हूँ और न ही मुसलमान। मैं एक हिन्दुस्तानी हूँ।'' यह सुनते ही चोगे वाला मजदूर के पास पहुँचा। उसने चोगे में छिपी पिस्तौल निकाल मजदूर के गले पर अड़ा धमकाया, ''जल्दी से बता दे कि तू हिन्दू है या मुसलमान वरना मैं तुझे जान से मार दूंगा।''

इस धमकी का मजदूर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। बड़ी निडरतापूर्वक वह बोला ''मैं तो पहले ही से किस्मत का मारा हुआ हूँ। मुझे तो बहुत पहले ही मर जाना चाहिए था। जन्म लेते ही मुझे कचरे के ढेर में फेंक दिया गया था। एक नेक इंसान ने कचरे के ढेर से मुझे अनाथालय पहुँचा दिया था। वहीं मैं पला और बड़ा हुआ।''

यह सुन चोगे वाला हैरान होते हुए उसे देखता रहा। कुछ सोचने के बाद उसने पूछा अनाथालय वालों ने तुम्हारा कोई नाम तो रखा होगा?"

''हाँ, रखा था।''

यह सुनते ही चोगे वाले के चेहरे पर मुस्कान बिखरी। उसे लगा कि नाम जानने के बाद उसकी तमन्ना पूरी हो जायेगी। ''क्या नाम रखा था तुम्हारा अभागा।"

यह सुनते ही उसने अपने चोगे की बड़ी सी जेब में पिस्तौल रखी और बोला ''तुम अभागे नहीं भाग्यशाली हो।" तेज कदमों से वह टापरे से बाहर हो गया।

–09830235285

रामकुमार घोटड़

बँधे हाथ के जीव

वे अपने क्षेत्र के एक प्रभावशाली राजनेता थे। जब भी वे चुनावी व अन्य सामान्य जनसभा में जाते तो अपने छोटे पौत्र को, एक राजनैतिक उत्तराधिकारी के तौर पर साथ ले जाते। एक शाम वो चुनाव प्रचार के बाद घर लौटे तो उस नाबालिग पौत्र ने अपनी शंका समाधान के लिए पूछ लिया– ''दादाजी! जब आप किसी पॉश कॉलोनी के बंगले, महल, हवेलियों के लोगों को मिलते हो तो उनसे हाथ मिलाकर, गले मिलते हुए बात करते हो, और गरीब, मजदूर की झोपड़-बस्ती में चुनाव प्रचार करते समय उनसे हाथ जोड़ राम-रूमी, दुआ-सलाम करते हुए वोट माँगते हो, उनसे हाथ क्यों नहीं मिलाते-''

''बेटा! यह अन्तर समझने व इसे बनाये रखने के लिए ही तो मैं, तुम्हें अपने साथ रखता हूँ-।''

''मैं कुछ समझा नहीं दादाजी!''

''बेटा! गुलाम भारत की सामन्तवादी जागीरदारी व्यवस्था में इन गरीब-मजदूर तलबे समुदाय के लोगों के हाथ बंधे हुए थे, सिर्फ जागीरदारों के यहाँ काम करने तक ही खुले रहते थे। देश की आजादी के बाद, संविधान ने इनके हाथों को खोलने के प्रावधान कि, लेकिन हम जैसे जनप्रतिनिधि पुरानी परम्परा बने रहने में ही अपना भला समझते हैं और ऐसा दौर के चलते, ये लोग मानसिक रूप से इतने अनजान बन गये कि इनको एहसास ही नहीं कि हमारे हाथ भी है...जब इनके हाथ ही नहीं तो, बेटा, हाथ मिलायें कैसे...?'' इतने में ही फोन की घंटी दनदना उठी और दादाजी फोन पर बात करने में व्यस्त हो गये।

वह नाबालिग उत्तराधिकारी दादाजी की बात को न समझते हुए भी समझने की उलझन में रमने लगा।

–9414086800

मधु संधु

मूक आमन्त्रण

रिटायरमेंट के बाद वह सरकारी घर से अपने इस नए मकान में शिफ्ट हो गई थी, पर मकान की दीवारें अभी सूनी थी। वह नित्य मोबाइल की गैलरी खोलती, बेटे-बहू, बेटी-दामाद, नाती-नातिन की फोटो देखती---- शॉपिंग ऐप्स में कई तरह के फ्रेम देखती और फिर व्हाट्स ऐप में चयन के लिए संग्रहित करती जाती।

फिर फोटोग्राफर से भी बात हो गई और फ्रेम भी तय हो गए। बच्चों के आने से पहले घर की दीवारें भी सज-धज कर बोलने, गाने, मुस्काने लगी।

अब नाती-नातिन अपने चित्र देख पक्षियों सा चहचहा रहे थे। पूरे घर में हुड़दंग मचा रहे थे। बेटा-बहू, बेटी-दामाद के मन में भी अपनत्व की लहर दौड़ रही थी। एक गहमागहमी मन को ऊर्जा, उत्साह और तेज दे रही थी। उल्लास, तसल्ली, स्नेह, संतुष्टि से वातावरण सराबोर था।

स्मृतियों में जी रही मां भी आसन्न समय को स्पर्शाने कभी कभार उनके यहां जाने लगी। वहां आधुनिकता थी, तरतीब थी, आभिजात्य था, किन्तु माँ के शिशु मन के लिए दीवारों पर अपनत्व का वैसा मूक आमन्त्रण नहीं था।

-8427004610

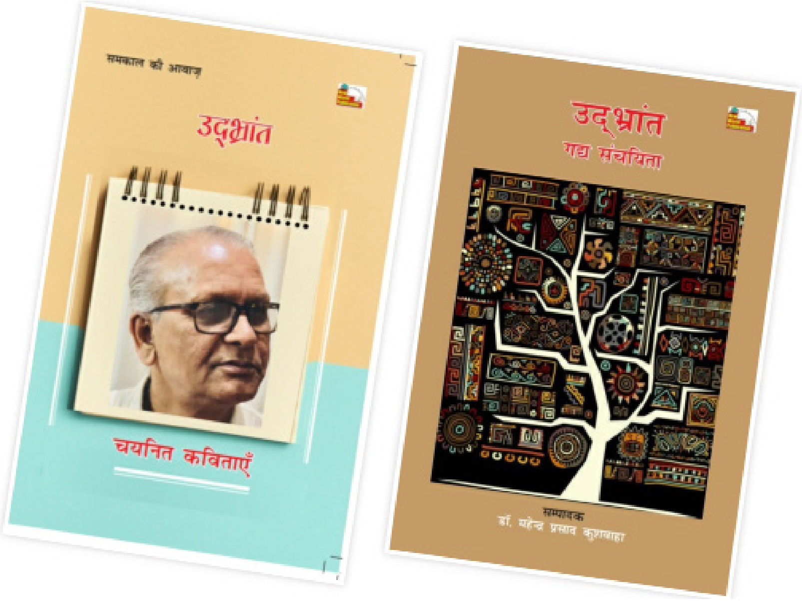

पवन जैन

स्वर्ग का पता

बहुत दिनों बाद आज अर्चना का फोन आया।

मैंने झट से उठाया और रोश में बोलने लगी, 'याद आ गई मेरी, कहाँ थी इतने दिन? किसी गोष्ठी में भी नहीं दिख रही।'

उसने शांति से जवाब दिया, 'हाँ यार आजकल बहुत व्यस्त रहने लगी हूँ।'

'कहाँ व्यस्त रहती हो?'

'सुबह-सुबह पूजा-पाठ, फिर भोग लगाकर फ्री होती हूँ तो बच्चों की देखभाल। शाम को सत्संग, पता ही नहीं चलता कब दिन गुजर जाता है।'

'ओहो, तू कब से इतनी धार्मिक बन गई कि सुबह-शाम मंदिरों के चक्कर लगाती रहती है।'

'मंदिर, मंदिर नहीं, मेरा घर ही मंदिर है।'

'क्या मतलब?'

'तुझे तो मालूम है मेरे सास-ससुर मेरे साथ ही रहते हैं, ससुर जी 98 साल के और सास 95 की। अब दोनों अशक्त हो गए हैं, सुबह दोनों को उठाना, चाय-पानी कराना, नहलाना-धुलाना यही पूजा-पाठ है मेरा। मैं पत्थरों की मूर्तियों को नहीं सजाती, इन जिंदा मूर्तियों की ही साज-संभाल करती रहती हूँ।'

'तेरी देवरानी भी तो है, वह कुछ नहीं करती क्या?'

'वह भी करती है, सारा किचिन तो उसने ही संभाल रखा है, बच्चों के टिफिन, पूरे परिवार का नाश्ता, भोजन, रात का खाना वही तो करती है।'

'और वह क्या बता रही थी, शाम को सत्संग?'

'हाँ, रात्री भोजन के बाद पूरा परिवार माँ-बाबू जी के कमरे में बैठता है। सभी अपनी-अपनी बाते बताते हैं, कोई समस्या हो तो समाधान हो जाता है, बच्चों की फरमाइशों पर भी गौर हो जाता है।'

'फिर तो बढ़िया है, तेरा घर तो स्वर्ग है बिल्कुल।'

'हाँ यही बताने को तो फोन किया था, बता कैसी लगी मेरी यह कहानी, 'स्वर्ग से सुंदर घर बिल्कुल मौलिक है।'

तभी उसके बाबू जी की आवाज फोन पर सुनाई दी, 'बहू कब से भूखा बैठा हूँ।'

'अभी फोन रखती हूँ, बाबू जी चिल्ला रहे हैं, एक मिनिट की भी चैन नहीं पकड़ते।'

तभी उसकी सास की आवाज आई 'तुम ज्यादा न चिल्लाओ जी।'

लम्बी सांस छोड़ने की आवाज ...फोन कट गया।

–9425324978

महेंद्र कुमार

रेपिस्तान

लोग आज टीवी पर वह देख रहे थे जो इसके पहले उन्होंने कभी नहीं देखा था।

बात आज से कुछ महीनों पहले की है। 'प्लीज! मुझे छोड़ दो।' पर उसने उसे नहीं छोड़ा। और जब छोड़ा तो उससे कहा, 'मुँह बन्द रखना।' नहीं तो वह उसे आगे भी नहीं छोड़ेगा। लड़की सिसक रही थी।

वह गहरे सदमे में थी और कई दिनों तक इससे बाहर नहीं निकल सकी। 'अरे क्या हुआ कुछ बोल तो?' माँ से उसका दुःख देखा नहीं जा रहा था। अन्ततः उसने सबकुछ बता दिया और फूट-फूट कर रोने लगी।

अगले दिन वह थाने में थी। पुलिस ने जब आरोपी का नाम सुना तो एफआईआर लिखने से मना कर दिया। आरोपी सत्ताधीश पार्टी का प्रभावशाली राजनेता था।

'साली की इतनी हिम्मत कि मेरे खिलाफ थाने में पहुँच गई?' नेता जी गुस्से में थे। 'और तूने उसे यूँ ही जाने दिया?' थानेदार चुप था।

दूसरे दिन एक आदमी लड़की का हाथ पकड़कर वैन के अन्दर खींचता है और उसे फार्म हाउस ले जा कर पटक देता है। 'लगता है तुझे स्वाद चखाना ही पड़ेगा।' इसके बाद नेता और उसके गुर्गों ने एक-एक कर लड़की को सत्ता का स्वाद चखाया।

'आ गई अक्ल या अब भी कुछ कमी है?' लड़की ने नेता की आँख में आँख डालकर देखा और जमीन पर थूक दिया। नेता मुस्कुराया और बोला, 'बस इतनी ही औकात है तुम लोगों की।'

अगले दिन पुलिस ने लड़की के पिता व भाई पर फर्जी मुकदमा लादकर उन्हें जेल में डाल दिया। घर को अवैध बताया और उसे गिरा दिया।

लड़की के पास अब कुछ भी नहीं बचा था। एक माँ थी और वह टूटी हुई दीवार से सटकर रो रही थी।

'यह सबकुछ मेरी वजह से हुआ है।' लड़की का दिल किया कि वह आत्मदाह कर ले। अन्ततः उसने खुद को समेटा, दोबारा हिम्मत जुटाई और इस बार जनता की अदालत में पहुँच गई। धीरे-धीरे उसके साथ अन्य लोग भी जुड़ने लगे। धरनास्थल पर अब काफी भीड़ होने लगी थी। लोगों ने लड़की से मामले को कोर्ट में ले जाने के लिए कहा। कोर्ट के आदेश पर एफआईआर दर्ज हो गई। नेता पर दबाव बढ़ रहा था।

पार्टी अध्यक्ष ने आनन-फानन में एक मीटिंग बुलाई और कहा, 'यह सब

क्या हो रहा है? चुनाव सर पर हैं। आपको अपना टिकट कटवाना है क्या?' यह पहली बार था जब उस नेता से किसी ने इस तरह से बात की थी। 'लगता है आप भूल रहे हैं कि पिछली बार मैंने पार्टी को कितनी सीटें जितवाई थीं?' नेता ने याद दिलाया। 'तो क्या इस बार उतनी ही सीटें हरवाने का इरादा है?' अध्यक्ष ने पलट कर पूछा। 'आपस में लड़ना बन्द करिए।' राष्ट्रप्रमुख ने बीच-बचाव करते हुए कहा, 'और नेता जी आप, समेटिए इस सबको।'

अगले ही दिन नेता के समर्थक सड़कों पर रैलियाँ निकाल रहे थे, 'यह हमारे नेता के खिलाफ षड्यन्त्र है। हम यह अन्याय नहीं होने देंगे।' एफआईआर ठण्डे बस्ते में होने के बावजूद शाम तक जज का भी तबादला करा दिया गया। 'धरनास्थल पर एक ट्रक भेजकर लड़की को मरवा दें?' किसी ने सुझाव दिया। 'नहीं। इससे भी बुरा।' नेता ने मीटिंग में हुए अपने अपमान को याद करते हुए कहा।

एक विशेष पीआर टीम लड़की और उसके समर्थकों को बदनाम करने में लगा दी गई। 'यह हमारी पार्टी के नेताओं पर चारित्रिक आक्षेप लगाने की अन्तर्राष्ट्रीय साजिश है। विदेशी ताकतें नहीं चाहतीं कि देश में फिर से हमारी मजबूत सरकार आए।' चीरहरण शुरू हो चुका था।

दो ही दिन में हवा पूरी तरह से बदल गई। जनता अब प्रदर्शनकारियों के खिलाफ थी। स्टेज सेट हो चुका था।

आज लोग वह देखने वाले थे जो इसके पहले उन्होंने नहीं देखा था। मीडिया वाले धरनास्थल को लाइव कवर कर रहे थे। तभी वहाँ उपद्रवी लड़कों के एक हुजूम ने हमला बोल दिया। उनके हाथों में पिस्तौल थी। उन्होंने भीड़ को बन्धक बना लिया। दो लड़के उस लड़की की तरफ बढ़े और उसके कपड़ों को तार-तार करने लगे। लड़की निर्वस्त्र हो चुकी थी और उसकी माँ बेहोश। वे उसके जिस्म को गिद्ध की तरह नोंचने लगे। कैमरा ऑन था और देश में रेप का लाइव प्रसारण चालू। सभी की नजरें टीवी स्क्रीन से चिपकी थीं। वे खुश थे और ताली बजा रहे थे।

काम पूरा होने के बाद लड़कों ने 'राष्ट्र जिन्दाबाद' के नारे लगाए और वहाँ से चले गए। उनके जाते ही वहाँ पर राष्ट्रीय सुरक्षा एजेंसी आती है और लड़की व उसके साथियों को गिरफ्तार करके चली जाती है।

–7007025886

सुनील गज्जाणी

अभी जिंदा है मेरा गाँव

मुम्बई की चकाचौंध छोटे भाई को रह-रहकर आकर्षित कर रही थी। वो भी चाहता था कि अपने बड़े भाई की तरह मुम्बई में रहकर रोजगार करें, मगर बड़ा भाई नहीं चाहता था की वो यहाँ आए, परन्तु छोटे का हठ था कि वो मुम्बई जायेगा ही जायेगा बस। आखिरकार थकहार कर बहुत सोच-विचार के बाद उनसे अपने भाई को समझाने के लिए पत्र लिखा।

प्रिय, अनुज।

शुभाशीष। माँ-बापू को चरण स्पर्श और बच्चों को प्यार। आशा है की घर में सभी राजी-खुशी होंगे, मैं यहाँ ठीक हूँ।

अनुज! मैं शायद अपनी भावनाओं को फोन पर बार-बार नहीं दर्शा सकता था इसलिए पत्र लिखना ही मुनासिब समझा। हाँ, एक बात कि तुम इस पत्र को यहाँ की तस्वीर से बेहतर मेरी आत्मकथा के कुछ अंश समझकर ही पढ़ना।

अनुज, तुम गाँव के सीधे-साधे मोर हो और यहाँ हर तरफ गिद्ध ही गिद्ध हैं जिनके चंगुल से तुम निकल नहीं पाओगे। यहाँ लम्बे-लम्बे खेतों की जगह ऊँची-ऊँची इमारतें हैं। आम आदमी तो यहाँ साँसें भी मानो गिन-गिनकर लेता है, रास्ता भी अपने कदम नाप-नापकर चलना पड़ता है। हाँ, गाँव की तरह सीधी पगडंडियों के बजाय यहाँ सर्पीले रास्ते हैं जो हरेक की समझ से परे हैं। तुम्हें आश्चर्य होगा कि यहाँ आदमी भी फुटपाथों पर भय-आशंका में करवटें बदलते हुए अपनी रातें गुजारते हैं जबकी गाँव में जानवर भी घरों में सुख की नींद सोते हैं! यहाँ हर तरफ लाइनें ही लाइनें हैं इंसानों की, रोजगारों की बेरोजगारों की और तो और सुबह झाझरु जाने तक की लाइनें लगती हैं यहाँ। यहाँ सिर्फ अपनी सोचते हैं, गाँव की तरह दु:ख-दर्द नहीं बाँटते। बैलों के गले में बँधी घंटियाँ गाँव की तरह यहाँ सुनने को तो क्या देखने तक को नहीं मिलती, सिर्फ शोर बस शोर और प्रदूषण। यहाँ आदमी, आदमी बनकर नहीं मशीन बन कर जीता है। गाँव की मौज मस्ती तो यहाँ बस सपने समान है।

अनुज! गाँव में हमारी किराने की दुकान अपने गाँव के हिसाब से कितनी बड़ी है भले ही उससे तुम्हें रोज सौ-दो सौ की बिक्री हो मगर संतुष्टि तो है ना, जो यहाँ ऐसी कभी नहीं मिल सकती। हाँ, माँ-बापू सुबह सैर को रोज जाते हैं, यहाँ भोर होती है मगर ताजी हवा नहीं, माँ-बापू इतनी उम्र में भी तंदरुस्त है गाँव में, जबकि यहाँ तो नित नयी बीमारियाँ हैं। टी.वी. और अखबारों में तुम देख पढ़ ही रहें होंगे इन दिनों।

अनुज! मुझे तो गाँव मजबूरी में छोड़ना पड़ा और आज भी मजबूरी में सिर्फ अपने कमरे तक, फैक्टरी तक ही सिमट कर रह गया है और तुम आजादी क्यूँ खोना चाहते हो? हाँ, अब भी तुम समझना नहीं चाहते तो मना नहीं करूँगा, भले ही आ जाओ मगर इतना याद रखना कि तुम गाँव में अकेले हो कर भी तुम्हारे साथ पूरा गाँव होता है और यहाँ तुम आओगे तो इस मायावी नगरी में अपने बड़े भाई को नहीं किसी अजनबी को पाओगे। अनुज, सोचना जरा ऐसा मैंने क्यों कहा। कहने को बहुत कुछ है मगर इतने में ही समझ लो तो बेहतर है। पत्र को यहाँ विराम दूंगा। माँ-बापू को प्रणाम।

तुम्हारा भैया

धर्मा राम

थोड़े दिनों बाद अनुज का प्रत्युत्तर आया- 'भैया। मैंने आप के पत्र रूप में आपकी आत्मकथा पढ़ी। भैया, मैं कहना चाहता हूँ कि मैं दुकान में और कौनसे से आइटम रखूँ? और यह कि मैं घूमने तो आ सकता हूँ ना?' धर्मा राम सजल नेत्रों से पत्र पढ़कर बुदबुदाया- 'माँ-बाबू जी में, तुम से अभी जिंदा है मेरा गाँव!'

– 9950215557

अनिता रश्मि

तड़का

सिगरेट फूँकती, शराब गटकती अदाकारा को वे दिन याद आए, जब वह दिलों पर राज करती थी। सब उसके मुरीद। आहों-सिसकारियों में वह। फंतासी, जुगुप्सा में भी। वह करोड़ों में खेलती थी।

'आज मेरी क्या स्थिति हो गई। मेरी कल्पना में भी नहीं था, ये दुर्दिन आएँगे।' - मन में क्षोभ!

अदाकारा ने बहुत हाथ-पाँव मारे, कुछ काम नहीं आया। उसका प्रभाव सबके मन से उतर चुका था। निर्माता, निर्देशकों की निगाह में वह दूध में पड़ी मक्खी बन चुकी थी। कहीं काम नहीं मिल रहा था। सब कहते, षविवाह और उम्र की ढलान हानिकारक हो गई।'

आखिर भटकती आत्मा को एक कैमरामैन ने चुटकियों में हल सुझाया, उसे रास आ गया। उसने पहले से ज्यादा ग्लैमरस फोटो सेशन करवाए। युवाओं को भी मात देनेवाली उसकी पोशाक में ज्यादा खुलापन था। पेड इंटरव्यू में खुलकर अपने विचार रखे, खुलेपन के पक्ष में। माँ-बहन की गालियाँ उसके आभिजात्य होठों से फूल की तरह झड़ रहे थे।

वेब सीरिज ने झट उसे लपक लिया और विश्वामित्रों का तप भंग करने के लिए ओटीटी पर स्वर्ग की अप्सरा अवतरित हो गई। अब बच्चों का स्वाद बदलने का हठ रंग ले आया था।

– 9431701893

बालकृष्ण गुप्ता 'गुरु'

सर्प की जाति

"जिस शाम बापू, माँ को मारते हैं, अगले दिन सुबह रोटी मिलेगी निश्चित हो जाता है।

वह मूर्ति के सामने खड़ा था। उसके मस्तिष्क ने याद किया, बचपन में सुनता था कि डाकू कहीं डाका डालने के पहले अपने आराध्य के दर्शन करना नहीं भूलते थे।

मन ने कहा– 'डाकू तो गरीब होते थे। तुम तो खुद धनवान हो।'

मस्तिष्क ने मन को समझाया– 'मैं भी डाकू ही हूँ। गरीब, बेसहारा युवतियों, महिलाओं की इज्जत पर डाका डालता हूँ।'

मन ने कहा– 'डाकू, डाका डालने के बाद गरीबों में धन बाँटा करते थे इसलिए पकड़ में नहीं आते थे।'

मस्तिष्क मुस्कराया फिर बताया, 'मैं भी धन नेताओं, पुलिस वालों, पत्रकारों को बाँटता हूँ। इसलिए पकड़ में नहीं आता।'

मन ने गंभीर होकर समझाया– 'डाकू एक दिन जरूर पकड़ा जाता है, जिंदा या मुर्दा।'

मस्तिष्क मौन हो गया।

– *09424111454*

प्रेरणा गुप्ता

वीरान साँझों में

कल कल करती लहरों के संग मछलियों की अठखेलियाँ भी बीच-बीच में सुनाई दे रही थीं। मैं अपने विचारों में डूबने-उतराने लगा...।

वो शाम भी तो कुछ ऐसी ही थी, जब मैं अपनी जीवनसंगिनी का दाह संस्कार करने के बाद उसकी अस्थियों को विसर्जित करने यहाँ आया था।

अस्थियाँ प्रवाहित होते ही लहरों में छुपी मछलियाँ तेजी से लपक पड़ी थीं और मैं घंटों किनारे पर बैठा रहा था।

एकाएक मछलियों की हलचल तेज हो गयी। फिर कोई आया था किनारे पर, किसी अपने की अस्थियाँ विसर्जित करने।

यादों का सैलाब तेजी से उमड़ पड़ा। पत्नी की आवाज कानों में जीवंत हो टकराने लगी, जब मैं न रहूँगी, तब समझ में आएगा। ये रतजगा करने वाले दोस्त भी आखिर कब तक साथ देंगे तुम्हारा...?

दिल डूबने लगा। उखड़ती साँसों को संभालता मैं बुदबुदा पड़ा, तुम ठीक ही कहती थीं।

बेटे-बहू ने भी कह दिया कि अब माँ तो रही नहीं, जो देर रात तक बैठी आपकी राह निहारा करती थीं। हम दोनों को सुबह जल्दी उठकर ऑफिस के लिए भी निकलना होता है। अच्छा होगा कि घर की एक चाभी अब आप अपने पास रखा करें। खाना टेबल पर रखा मिल जाएगा।

मैं धक्क से रह गया था...! गरम-गरम रोटी बनाकर खिलाने वाली पत्नी की छवि आँखों में तैर आई।

शांत लहरों में चाँद का प्रतिबिम्ब अब झिलमिलाता नजर आ रहा था।

तभी कानों में आवाज सुनाई दी, "रात बहुत हो गई बाबू, लौट जाओ। जाने वाला तो चला गया...।"

–8299872841

कुसुम पारीक

जिंदा उम्मीदें

'आज के बाद मैं कभी उससे नहीं मिलूँगा चाहे कुछ भी हो जाये क्योंकि अब मेरे पास ऐसे मित्र हैं जो मुझे हमेशा खुश रखने की कोशिश करते हैं और आज उन्होंने जो वीडियो भेजा उसे देखकर तो अब मैं आराम की नींद सोऊंगा।'

बिस्तर पर जितनी शांति महसूस करते हुए वह सोया था उतना ही अशांत होकर अचानक उठ बैठा,भय के मारे पसीने से तरबतर कांपता शरीर। उसकी आँखें बंद थीं जिन्हें खोलना चाहता था लेकिन उन रेंगते हुए कीड़ों को महसूस कर रहा था जो उसे बचपन से डरा रहे थे, अब उसने आँखें और कस कर बन्द कर ली थीं।

उस डर को वह जितना भूलने की कोशिश करता, उतना ही उसे अपने पास पाता था।

काफी जद्दोजहद के बाद उसने हिम्मत कर बिस्तर की साइड में रखा हुआ मोबाइल उठाया और वही वीडियो निकाला जिसे देखकर वह सोया था जैसे-जैसे वीडियो चलता गया उसके मन के भाव बदलते गये और अंत में उसका डरा हुआ मन,एक दम शांत हो गया था। अब उसे वह जीवन-सूत्र मिल गया था जिसमें जीने के लिए उम्मीदों की रोशनी थी।

वह धीरे से उठा और अलमारी खोलकर वहाँ छुपाई हुई एक डायरी निकाली और उसके एक-एक पन्ने को फाड़ने लगा,जैसे जैसे वह फाड़ता जा रहा था उसमें लिखी हुई उस डर की हर एक इबारत मिटती जा रही थी जो उसने शब्दों में तब उतारनी शुरू की थी जब वह बारह साल का बच्चा था और चाचा ने पहली बार शिकार बनाया था और उस दिन के बाद पन्ने बढ़ते गये थे।

अपने कुछ आभासी मित्रों की सहायता से आज वह उस दलदल से बाहर आ चुका था।

-9974294151

राधेश्याम भारतीय

फीनिक्स-गर्ल

राधिका स्कूल से घर आई।

वह किताबों के झोले को खूंटी पर टाँगने लगी तो उसे याद आ गया कि आज मैडम ने बहुत-सा काम दिया है। बापू से कॉपी के लिए पैसे माँग लाती हूँ।

आशा के पंख लगा, जा पहुँची बापू के पास। बापू घर के सामने खाली पड़ी जगह पर ताश खेल रहा था।

''बापू! बापू.. मुझे कॉपी चाहिए।'' राधिका ने गुहार लगाई।

उस समय बापू समझ नहीं पा रहा था कि कौन-सा पत्ता डाले और कौन-सा नहीं। बहुत सोच-विचार के बाद पत्ता डाला। गर्दन पीछे की ओर घुमाई और पूछा-''हाँ राधिका, बोल क्या कहती है?''

''बापू, कॉपी चाहिए। यदि आज काम न किया तो मैडम गुस्सा होंगी। उन्होंने काम देते हुए कहा भी है कि सभी बच्चे काम अवश्य करके लाएँ।'' ऐसा कहते हुए उसके आशा-भरे पंख खुलने को आतुर हो रहे थे।

''घर चल, मैं अभी आया।'' वक्त की नजाकत को समझते हुए इतना ही कहा बापू ने।

आज तो नयी कॉपी पर मोतियों से अक्षर लिखूँगी। शाबाशी दिए बगैर न रहेगी मैडम। अब वह जैसे उम्मीद के पंखों के सहारे उड़ान भरने ही लगी थी।

बापू आया।

''के जरूरत पड्री थी तन्नै वोड्डे पिस्सै माँगन की (तुझे वहाँ पैसे मांगने की क्या जरूरत पड़ गई थी) दो-चार दिन रुक नहीं सकती। कितने दिन तो हो गए काम पर जाए...।''

''....बापू! चले जाया करो ना ......माँ भी तो जाती है।'' बहुत हिम्मत कर लड़की मन की बात कह ही गई।

''इब तू सिखावेगी, मन्नै। जादा मास्टरनी बणण की जरूरत कौन्या, समझी (अब तू सिखायेगी मुझे। ज्यादा मास्टरनी बनने की जरूरत नहीं)'' ज्वालामुखी-सा फट पड़ा था बापू।

''सारे खेल का नाश मार दिया।'' बड़बड़ाता हुआ निकल गया था फिर से ताश खेलने के लिए।

राधिका के अरमान जैसे राख हो गए। एक पल को वह अचेत हुई, पर अगले ही पल, फिर से पंखों को फडफ़ड़ाया और दुकान पर जा खड़ी हुई।

''अंकल, एक कॉपी दे दीजिए। शाम को मेरी मम्मी पैसे दे देगी।'' अनुरोध-भरा आग्रह किया लड़की ने।

''ना बिटिया, ना। उधर तो बंद है।'' लाला ने जैसे रटा-रटाया जवाब दिया।

''अंकल, मम्मी दिहाड़ी से लौटते ही पैसे दे देगी।''

‘‘खाक दे देगी। जितना कमाकर लाती है, उससे ज्यादा का तो सामान माँगती है। नहीं, हमसे नहीं होता। नकद दो, नकद लो।’’ यह कहते हुए लाला ने मानो लड़की के पंखों को फिर से निष्प्राण कर दिया।

लड़की निराश मन से घर आई और बेजान-सी खाट पर जा पड़ी।

खाट पर पड़े-पड़े ही एक विचार उसके जेहन में कौंध। वह फुर्ती से उठी और अपनी पुरानी कॉपियाँ को खंगालने लगी। उनके बीच से उसे एक कॉपी ऐसी मिली, जिसमें एक साथ कई कोरे पन्ने बचे पड़े थे। यह देख उसके पंखों में फिर से जान आ गई और खुशी-खुशी से उन कोरे पन्नों पर सुनहरे अक्षरों में अपने भविष्य की इबारत लिखने लगी।

बीज

‘‘सर जी, चार बच्चे कल स्कूल न आने के लिए छुट्टी माँग रहे हैं।’’ कक्षा सातवीं के प्रभारी मास्टर जी ने हैडमास्टर के सामने कहा।

‘‘ एप्लीकेशन लिखवा लीजिए और छुट्टी दे दीजिए। इसमें मुझसे पूछने वाली क्या कोई बात है? ’’

‘‘सर वे चार बच्चे........!’’

‘‘कौन-से चार बच्चे!’’ हैडमास्टर साहब की जिज्ञासा अनायास प्रबल हो उठी।

‘‘सर, वे दूसरे धर्म के हैं। वे कह रहे हैं कि कल उनकी मस्जिद में बाहर से कोई मौलवी जी आ रहे हैं। वे उन्हें अच्छी-अच्छी बातें बतायेंगे.....।’’

‘‘मना कर दीजिए। उनसे कहिए यहाँ पर सब अच्छी ही बातें सिखाई जाती हैं।’’ हैडमास्टर जी ने मास्टर जी की बात पूरी होने से पहले ही कहा।

यह सुन मास्टर जी वहीं खड़े रहे।

‘‘मास्टर जी, जाइए और उन्हें स्पष्ट मना कर दीजिए।’’ हैडमास्टर साहब ने मास्टर जी को वहीं खड़े देख कहा।

‘‘सर...नहीं कर सकता!’’

‘‘क्यों नहीं कर सकते! बताइए, आप ऐसा क्यों नहीं कर सकते?
हैडमास्टर ने अपनी बात पर जोर देते हुए पूछा।

‘‘सर, पिछले सप्ताह दो लड़कियों ने शिवरात्रि पर व्रत रखने के लिए छुट्टी माँगी थी तो मैंने उन्हें छुट्टी दे दी थी।’’

‘‘तो....।’’

‘‘तो सर वे लड़के यही बात पकड़े हैं कि जब आपने उन लड़कियों को छुट्टी दे दी तो आप हमें भी छुट्टी दे दीजिए। सर, अब आप ही बताइए मैं क्या करूं?’’

यह सब सुन हैडमास्टर गहन चिंतन में डूब गए और फिर उसी भाव में बोले-‘‘मास्टर जी, आपने बीज ही गलत बो दिए हैं।’’

– 9315382236

अनिल मकरिया

गुल, गुलशन और गुलफाम

बाग के गुलों की किस्मत उस बाग के निगहबान से बंधी थी। वह चाहे तो किसी को गुल तोड़ने दे, वह चाहे तो गुलों को डालियों पर ही मुरझाने के लिए छोड़ दे।

गुलों को अपने बागबान पर नाज भी था कि बिलावजह वह किसी गुल की कुर्बानी बर्दाश्त नहीं करता था। वह दौर भी आया जब गुलों के बागबान ने उनकी किस्मत गुलकंद बनाने वालों के हवाले कर दी थी।

अब बाग के गुलों को बेतरतीब तोड़ा जाने लगा।

कईबार कलियों तक को खिलने से पहले उनकी डालियों से रुखसत कर दिया जाता था।

बागबान ने नगद की अफीम को इस कदर सूंघ लिया था कि उसे कलियों की चीखें तक सुनाई न देती। डालियों ने अपने काँटे तेज व लंबे कर दिए लेकिन वे कैंचियाँ लेकर आ गए। डालियों ने वे काँटे तज कर उनकी राहों में बिछा दिए लेकिन वे जूते पहनकर आ धमके।

बाग के पुराने वृक्षों तक जब उनकी मर्मांतक चीखें पहुँची तो उन्होंने हवाओं, पक्षियों व कीट-पतंगों को आदेश देकर गुलों के परागकण का दूसरे बागों में पलायन करवा दिया, जिससे बाग की जमीन जल्द ही अपनी हरियाली खोने लगी इससे बाहर से आने वाले परागकणों को भी परागण के लिए मुफीद परिस्थिति मिलना लगभग असंभव हो गया था।

पुराने पेड़ तो बदस्तूर खड़े थे लेकिन जमीन को जीवंतता देने वाले पौधे धीरे-धीरे नदारद होने लगे। लोगों ने बाग की उस निर्जीव धूसर जमीन पर उसी स्वतंत्रता सेनानी का पुतला खड़ा कर दिया जिसके नाम पर कभी वहाँ महकते गुलों का बाग लहलहाता था।

माजी बागबान अब उस पुतले पर गिरी परिंदों की बीट साफ करता है।

–9372992611,

पवित्रा अग्रवाल

पड़ोसी धर्म

'अम्मा कल मैं खाना पकाने को नहीं आऊंगी '

'कहीं जा रही हो?'

'नहीं अम्मा वो हमारे बाजू वाले हैं न, उनकी बेटी को लडके वाले देखने को आ रहे हैं। उनका घर या कहूं कि कमरा अच्छा नहीं है ...हमारा घर थोड़ा ठीक है। वो पूछे थे कि बच्ची को दिखाने का काम आप के घर में करदें?...अम्मा मैं मना नहीं कर पाई ....एक दिन आप संभाल लो .'

'ठीक है पद्मा' कह कर मुझे कुछ ध्यान आ गया। मेरी बेटी उर्मी को कोई लड़का पसंद था वह उसे हम से मिलाना चाहती थी। मैं बेटे के पास गई हुई थी। मैं ने सोचा अकेला ही तो आएगा, घर ही बुला लेते हैं। बेटा भी तैयार था पर बहू ने घर बुलाने को मना कर दिया था...बेटा भी कसमसा कर चुप हो गया था। उसने मिलने का इंतजाम होटल में किया था।

एक ये हैं रोज खाने कमाने वाले। पड़ोसी-धर्म निभाने के लिए उसने अपने घर में तो जगह दी ही। साथ ही अपने काम से एक दिन की छुट्टी भी ले रही है। '

– 9393385447,

मनोरमा पंत

नोटबंदी का बैताल

सरकार साधारण जनता की हमदर्द बनना चाहती थी। अमीर गरीब की खाई बढ़ती ही जा रही थी। देश में काला धन बढ़ता ही जा रहा था। सोच समझकर काला धन बाहर निकालने के लिए गरीबों की हितैषी सरकार ने योजनाबद्ध तरीके से अचानक नोट बंदी कर दी। पूरे देश की जनता की पीठ पर बेकारी, भूखमरी, गरीबी, अशिक्षा के बेताल चिपके हुए थे। अचानक वे सब बेताल गायब हो गये और सबकी पीठ पर सवार हो गये आश्वासन के बेताल।

अब बेताल की भूमिका बदल गई, जनता बेताल से प्रश्न करती और बेताल धमकाकर उन्हें चुप कर देता।

पर जनता का धैर्य काफूर हो गया और उसने बेताल से पूछा- बता नोटबंदी से हमें क्या मिला?

बेताल ठठामार कर हँसा और बोला- मूर्खों! जैसे सारी नदियाँ अंततः समुद्र में ही मिलती हैं, वैसे ही सरकारी योजनाओं का लाभ अमीरों को ही प्राप्त होता है।

–9229113195

मधु जैन

नैनों की भाषा

वह मुठ्ठी में पैसों को दबाये बोझिल कदमों से घर की ओर चला जा रहा था। उसे समझ ही नहीं आ रहा था घर पहुँच कर बच्चों और पत्नी को क्या जवाब देगा। सांत्वना देने के लिए अब माँ भी घर पर नहीं है। पत्नी की किचकिच से तंग आकर माँ को वृद्धाश्रम छोड़ आया था। मूर्ति बनाने की कला उसे विरासत में मिली थी। वह मूर्ति बनाता था और माँ हमेशा की तरह मूर्ति के चेहरे की भाव भंगिमाओं को सधे हाथों से उकेरती थी। पत्नी का काम मूर्ति के जेवरों और कपड़ों की सज्जा करना था। दशहरा पर दुर्गा जी की मूर्तियों की बिक्री से उसका साल भर का राशन और सभी के कपड़ों का इंतजाम हो जाता था पर इस बार...

घर पहुँचते ही पत्नी ने मुस्कुरा कर चाय का गिलास पकड़ाया।

'सुनो! इस बार मैं माँ के हिस्से की दो साड़ियाँ यानि चार साड़ियाँ लूंगी' इठलाती हुए बोली।

'चार क्या इस बार तो मैं एक भी साड़ी न दिला पाऊँगा।'

'क्यों ?

'इस बार आधी मूर्तियाँ भी नहीं बिकी।' कहते हुए चेहरे दर्द उभर आया

'ऐसे कैसे हो सकता है हमारी मूर्तियाँ तो हाथों- हाथ बिक जाती थी।'

'हाँ, पर लोगों का कहना है इस बार मूर्तियों की आँखों में वो आकर्षण नहीं है जो हमेशा रहता था। उदास आँखों वाली मूर्तियाँ उन्हें नहीं चाहिए।'

'पर चेहरा तो आपने हमेशा की तरह ही बनाया था फिर क्यों...?'

जब भी आँखों में रंग भरता हूँ तो माँ की आँखे सामने आ जाती हैं।

'जब माँ की आँखों में उदासी हो तो दुर्गा माँ कैसे मुस्कुरा सकती हैं।'

–9407182120

अर्चना राय

अर्चना राय

पशुजात

शहर की अत्याधुनिक जीवन शैली जीने की जल्दबाजी में गृहस्थी की गाड़ी अब अकेले रजत को खींचना बहुत भारी पड़ रहा था। इसलिए नम्रता ने अपनी छुट्टियाँ कैंसिल कर नौकरी पुनः शुरू करने की तैयारी पूरी कर ली थी।

'बस एक फार्म और भरना है....कल से नौकरी पर जाना शुरू।' वह मन-ही- मन सोच है रही थी कि तभी कालिंदी ने आकर कहा 'मेमसाब मैं कल काम पर नहीं आ पाएगी।'

'क्यों नहीं आओगी?...मैं कुछ दिनों से देख रही हूँ, हर दूसरे दिन छुट्टी कर रही हो...आखिर बात क्या है?'

'वो क्या है न! मेमसाब मेरी गाय है न, वसुधा उसने अभी हाल ही में बछड़ा जना है।'

'हाँ! तो इससे तेरे आने- न- आने का क्या संबंध है?'

'पहले तो सुबह उसे खोल देते थे तो दिनभर घूमकर अपना पेट भर लेती थी। पर जब से बछड़ा जना है, उसके पास से एक पल के लिए भी नहीं हटती है उसी के आस-पास ही भूखी-प्यासी खड़ी रहती है।'

'तो? ...'

'मैं उसे भूखा तो नहीं छोड़ सकती इसलिए उसी के चारा- पूरा की व्यवस्था करने बाजार जाना होता है।'

'देखो कालिंदी, अब ऐसे नहीं चलेगा...'

'आप ही बताइये? मैमसाब, जि सने धाय बनकर मेरे बच्चों को पाला, उसे भूखा कैसे रहने दूं?'

'कालिंदी,...मैं भी तो काम पर जाने की तैयारी कर रही हूँ और तुम...'

'क्या करूँ मेमसाब? वसुधा आखिर है तो जानवर...हमारे तरह इंसान होती तो शायद समझ जाती।' कहकर कालिंदी बाहर निकल गयी।

अचानक अपने दुधमुंहे बच्चे के रोने की आवाज सुन उसके लिए पालना घर एडमिशन का फार्म भरती नम्रता का हाथ अचानक थमा- सा गया।

ईमेल-**Archana.rai1977@gmail.com**

सुनीता मिश्रा

जंग जारी है

उसका बहुत मन करता माई के पैर के लच्छे,जो तिलक साहूकार के पास गिरवी हैं, उन्हें छुड़ा लाये। पर हर बार ब्याज का सपोला फुफकार मार देता।

विधवा रत्ती को उसकी दो साल की बेटी के साथ उसने अपने घर बिठा लिया था। कितना बावेला मचा था।

माई ने अपने लच्छे तिलक साहूकार के यहाँ रेहन रख, गाँव भर को ज्योनार कराई, तब गाँव वालों के हिया में चैन पड़ा।

बारह साल हो गये इस बात को।

बप्पा बीमार पड़ा, माई की हसुली भी तिलक की तिजोरी में रेहन हो गई। बप्पा तो दुनियाँ की कैद से छुटकारा पा गये। लच्छे और हसुली न छूट पाये तिजोरी की कैद से।

अब तो ब्याज के सपोले, कर्ज के साँप बन गये।

रत्ती की बिटिया भी बड़ी हो गई। ब्याह लायक।

ब्याह का इंतजाम करना है।

उसके कंधे सपोलों के बोझ से झुक गये।

आज फिर जायेगा वह तिलक साहूकार के यहाँ।हाथ में दबी है डिबिया। माई का बेंदा है, सोने का। माई ने रत्ती को दिया था।

सामने टकरा गई बिटिया।

'बप्पा हम बोर्ड परीक्षा में अपने स्कूल में अव्वल आयें हैं। हमें आगे पढ़ाओगे न बप्पा?'

कुछ देर वह चुप खड़ा रहा। फिर जोर से उसने अपने कंधे झटके। सपोले छिटक कर दूर जा गिरे। तनकर खड़ा हुआ। मुस्कराया, बिटिया को गले लगा लिया।

–9425716678

खेमकरण 'सोमन'

दोस्तों की महफिल

दोस्तों की खुशनुमा महफिल में उन्होंने सबको देखा। एक मुझे छोड़कर बाकी सभी दोस्तों से गर्मजोशी के साथ मिले। उनसे हाथ मिलाया, गले मिले। हालचाल पूछा। फिर हम सबको एक जगह ले जाकर बोले, ''ये देखिए, आज ही ली है नई गाड़ी। बीस लाख से अधिक की बैठी है। जल्द ही ऐसी पार्टी करूँगा कि याद रखेंगे आप सब साहब।''

हम सभी दोस्तों ने उन्हें बधाइयाँ दीं। फिर उन्होंने अपने घर-परिवार, उपलब्धियाँ एवं अपनी पुस्तैनी रसूख पर बातचीत शुरू कर दी। लगभग एक घंटे बाद अपने दोस्तों से विदा लेकर मैं, वहाँ से रुख्सत हुआ कि ठीक दस मिनट बाद ही एक दोस्त का फोन आ गया। बार-बार 'बहुत जरूरी काम है' का वास्ता दिया, अतः अपने दोस्तों की महफिल में मुझे वापिस लौटना पड़ा।

वापिस लौटकर मैं जैसे ही महफिल में घुसा, वैसे ही वे अपने सोफे से खड़े हो गए। झट से अपने दोनों हाथ मेरी ओर बढ़ा दिए। मैंने भी अपने हाथ बढ़ा दिए। मेरे दोनों हाथों को अपने दोनों हाथों में लेकर वे कुछ क्षण तक हिलाते-डुलाते रहे। फिर कहा, ''सर, बहुत सुना है आपके बारे में। माफ कीजिएगा कि आपको पहचानने में बहुत देरी की मैंने।"

मैंने कहा, ''नहीं, इसमें आपकी कोई भी गलती नहीं। यह हमारे देश की परंपरा और विरासत है कि जब तक हम किसी को महंगे कपड़ों में, महंगी गाड़ियों में, हाथों में एकाध लाख का मोबाइल, शोर-शराबा या विलासितापूर्ण जीवन की नदी में डूबते-नहाते हुए न देख लें, मन में उनके प्रति कोई मान-सम्मान और अपनत्व जागता ही नहीं!''

उन्होंने बनावटी मुस्कान के साथ मुझे देखा। फिर एक ऐसा काम सौंप दिया जिसे उनके अनुसार केवल मैं ही कर सकता था। तत्पश्चात उन्होंने मुझे खुश करने के लिए मेरे हाथों में नोटों की गड्डियाँ थमा दीं।

बस यहीं पर वे, चूक गए थे।

-9045022156

संदीप तोमर

राजा, प्रजा और धनिक

जब से धर्म का भय काबिज हुआ, राजतन्त्र को बड़ी सुविधा हुई, उसी दौर में एक राजा हुआ, प्रजा का प्रिय। जनता जब भी किसी बात के लिए दरबार में आती, राजा उन्हें धर्म की जरूरत समझाता, जनता राजा की जयकार करके वापिस लौट जाती, राजा की प्रसिद्धि बढ़ती जा रही थी, जनता के मन में भी श्रद्धा का स्तर बढ़ता जा रहा था।

राजा को प्रजा पर शासन करने में कोई असुविधा नहीं हुई, राजा जो भी फरमान जारी करता, जनता उसे सहर्ष मान लेती, राजा जो भी कर लगाता, प्रजा भुगतान कर देती। भक्तिमय शासन की प्रतिष्ठा के किस्से आसपास के राज्यों में भी फैलने लगे।

एक बार राज्य में भीषण अकाल पड़ा, प्रजा ने अन्न के लिए दरबार में गुहार लगाई, राजा ने कहा– "तुम धार्मिक लोग हो, व्रत, उपवास का महत्व समझते हो।"

प्रजा राजा की जयकार करते हुए वापिस अपने गहर लौट गयी।

फिर एक बार माहमारी फैली, राजा ने कहा– हम धार्मिक लोग हैं, सामूहिक कीर्तन करेंगे, महामारी हमारा कुछ नहीं बिगाड़ पायेगी। प्रजा ने राजाज्ञा का पालन किया, नियत समय पर थाली बजा, मोमबत्ती जला पूजा–अर्चना की गयी।

राजा की पताका लहराती रही, प्रजा संतुष्टि के चरम पर पहुँचती रही। एक बार एक धनिक राजा के पास और उसने लम्बे समय तक शासन करने की युक्ति राजा को समझाई, राजा सुनकर खुश हुआ, अब दोनों मिलकर शासन करने लगे। धनिक को अपना व्यवसाय करने में कुछ सैनिकों की जरूरत महसूस हुई, उसने राजा के सम्मुख अपनी समस्या रखी, राजा ने अल्प अवधि की भर्ती योजना शुरू की, अल्प समय में ही राजकोष से प्रशिक्षित सैनिक धनिक के पास नौकरी पा खुश हुए। धनिक इस बात से खुश था कि उसे बिना धन व्यय किये सैनिक मिल गए। कालांतर में धनिक सभी राजकीय फैसले स्वयं लेने लगा, अन्य राज्यों के राजाओं के साथ भी उसकी मंत्रणा होती, राजा को लगता उसके काम का बोझ कम हो रहा। अंततः धनिक ने एक दिन घोषणा की – "राजा ने अधिकांश राजकीय समाप्ति या तो मुझे बेच दी है या फिर मेरे पास रेहन के रूप में रखी है, मेरे पास खुद की सेना भी है, फिर इस राजा की राज्य को क्या आवश्यकता है, मंत्री–परिषद मुझे राजा स्वीकार करें।"

धनिक के विश्वासपात्र मंत्रियों ने एक स्वर में कहा– "नए राजा की जय हो।"

राजा कुछ कहता उससे पूर्व ही धनिक के सैनिक उसे नजरबन्द करने के लिए आगे बढ़ चुके थे। उसके बाद से प्रजा को कभी राजा के दरबार में किसी ने गुहार लगाते नहीं देखा।

–8377875009

महावीर रवांल्टा

प्रतिवाद

राजधानी से पहाड़ी कस्बे के लिए रवाना हुई परिवहन निगम की बस में रास्ते में कुछ सवारी उतरते कुछ चढ़ते।

रास्ते में पड़ने वाले एक कस्बे में बस के रुकते ही एक अधेड़ महिला बस में चढ़ी। बस में चढ़ते ही उसने अपनी पीठ पर लगा थैला चालक के बराबर में रखे गत्तों के डिब्बों के ढेर के ऊपर रख दिया और स्वयं खाली सीट की ओर बढ़ने लगी।

'अरी, तुमने यह क्या कर दिया?' वह सीट पर बैठ पाती इससे पहले कंडक्टर उसकी ओर बढ़ता हुआ बाघ की तरह दहाड़ने लगा श्मालूम है जिन डिब्बों के ऊपर तुमने अपना बैग रखा है उनमें क्या है?' महिला चुप थी। उसे समझ नहीं आ रहा था क्या कहे। 'उनमें बर्थ-डे केक रखा है। किसी ने मंगाया है। पूरे दो हजार का है। इसका नुकसान कौन भरेगा? जन्मदिन पूरे साल में सिर्फ एक बार ही आता है पर तुम जैसे लोग क्या जानो--तुम लोग आगा पीछा कुछ नहीं सोचते बस अपनी --' कंडक्टर गुर्राते हुए कहे जा रहा था और महिला असहाय झेंपकर एक ओर जड़ सी खड़ी बस उसे सुन रही थी। उसे बैठने की हिम्मत भी नहीं हो रही थी। उसे अपनी गलती पर अफसोस भी था। कंडक्टर गुर्राते हुए अपने प्रवचन जारी रखे हुए था। बस में सवार सभी लोग खामोश व तटस्थ थे।

'कंडक्टर साहब, आप ये क्या अनाप-शनाप बके जा रहे हैं? भला इसमें माता जी का क्या दोष' तभी वहां खड़े युवक से नहीं रहा गया और उसने प्रतिवाद किया।

'अरे तुम कहां बीच में कूद पड़े? तुमसे तो मैंने कुछ कहा नहीं!' कंडक्टर की दहाड़ अब उसकी ओर थी।

'मुझसे नहीं लेकिन माता जी से--इनकी उम्र का कुछ तो लिहाज करते। घर में तुम्हारी भी तो मां बहिन--'

'तुम मेरी मां बहिन पर मत जाओ वरना--' कंडक्टर का गुस्सा बेकाबू सा हो रहा था।

'वरना क्या--? अपनी मां-बहिन की बात आई तो कैसे तिलमिला रहे हो। जरा सोचो, माता जी की इसमें भला क्या गलती थी उन्होंने अनजाने में अपना बैग तुम्हारे डिब्बों के ऊपर रख दिया था और माफ करना यह सवारी बस है कोई माल वाहक गाड़ी नहीं जिसमें तुम कुछ भी लादकर चलते रहोश कंडक्टर के सामने चट्टान बने युवक ने उसे नसीहत की घुट्टी पिला दी थी।

'हां हां तुम बिल्कुल सही कह रहे हो' बस में सवार किसी व्यक्ति का स्वर

उभरा तो उसके साथ दूसरे स्वर भी उभरने लगे।

'हां भैया मुझसे ही भूल हुई, तुम ठीक कह रहे हो' कंडक्टर के सामने सिवा हथियार डालने के अब कोई चारा नहीं रह गया था।

'बैठ जाओ माता जीश उसने कहा और उसके बैठते ही टिकट उसकी ओर बढ़ाते हुए बोला– 'पचास रुपए!'

बस पहले की तरह आगे बढ़ रही थी और लोग उसी तरह शांत बैठे हुए थे।

–8894215441, 6397234800

उषा लाल

जागीर नहीं

ओढ़ाए संस्कारों से लदी–फदी विमला ने जैसे ही ससुराल की देहरी पर कदम रखा, स्वयं के ज़मीर को भूल वह हर किसी की हाँ–में–हाँ मिलाने की पहेली बन गई। बात ठीक हो या ग़लत, वह पलटकर जवाब ही नहीं देती थी, हमेशा खुश रहती या खुश रहने का दिखावा करती थी। एक पारिवारिक समारोह के दौरान, सबकी उपस्थिति में, जब पति ने उसे शराब परोसने को कहा, तो उसने आनाकानी की, जिसकी पति–महाशय ने कभी कल्पना भी नहीं की थी। वैसे भी ऐबी व्यक्ति लोकलाज से ऊपर उठ चुका होता है। उसे आनाकानी वाला व्यवहार इतना नागवार गुज़रा कि पहले तो वह ज़ोर से गुर्राया, तिस पर भी असर न होता देख पत्नी को चार–पाँच झापड़ रसीद कर दिए। तडाक्–तड़ाक् की आवाज़ और बीते दिनों की ज़लालत ने आग में घी का काम किया। वह निर्णायक अवस्था में उठी और ओढ़ाए – खोखले बन्धनों की रस्सी झटक, उसे धाकियाते हुए, निकल पड़ी–स्वाभिमान की किश्ती पर सवार होकर...।

–9466772474

रश्मि स्थापक

कसौटी

'क्यों रे गज्जू, तूने तो अभी सेझोपड़ी टिप-टॉप कर ली।'

'अरे! साहब...आप...कुछ अखबार के लिए पूछने आए हो.. क्या? 'गज्जू ने झोपड़ी के बाहरी हिस्से को मजबूत और मोटे कपड़े से ढँक कर उसे तारों से कसते हुए कहा।

'अखबार का आदमी हूँ पूछूँगा तो सही ...पर तुम्हारी झोपड़ी देखकर मन प्रसन्न हो गया...चेहरा भी देखो कैसा खिल गया है।'

'अरे साहब क्यों मजाक करते हो...मानसून के पहले सब ठीक-ठाक करना पड़ता है...अभी टाइम मिल गया है फिर काम पर लग जाऊँगा..।'

'सीधे-सीधे पूछता हूँ...कौनसी पार्टी सही लगती है?'

'हम गरीबों का क्या...जो समझ में आ गया वह पार्टी अच्छी।'

'यार तुम सीधे-सीधे नहीं बता रहे हो...अच्छा चलो इतना बताओ पिछले चुनाव में तुम्हें कौन सी पार्टी का उम्मीदवार अच्छा लगा था और क्यों?'

'सही बताऊँ...साहब जो निर्दलीय खड़ा हुआ था न वही अच्छा लगा।'

'निर्दलीय....वह तो हार गया था न?'

'हाँ साहब...।'

'फिर...क्या तुम्हारी जान पहचान का था...या तुम्हारा कुछ काम करवाया क्या उसने?' पत्रकार ने आश्चर्य से पूछा।

'बाकी के तो बैनर फट गए...पर साहब उसने इतने अच्छे कपड़े के बैनर बनवाए थे कि...बाद में सब मेरी झोपड़ी में काम आ गए....कित्ती बारिश हुई...एक बूंद पानी अंदर नहीं आया साहब।'

-9165699467

मनोज कर्ण

समुद्र मत बनो

समुद किनारे बैठे हुए जोड़े का मन भी समुद्र की लहरों के समान उफान पर था। इस बार पहल प्रेयसी की तरफ से हुई थी– 'अजी नजदीक तो आओं..... और पास!' प्रेयसी ने प्रेमी को अंकपाश में जकड़ लिया। समुद्र की लहरें उठती–गिरती रहीं।

प्रेमी मौन होकर प्रेम जकड़ में कसा रहा। कुछ क्षणों बाद लड़की चुप्पी तोड़ते हुए बोली– 'क्या आपके मन में हिलोरें नहीं उठती?'

'मैंने आज तक यही देखा और सुना है कि लड़कें आवारा कहलाते हैं। परायी लडकियों के साथ या करीब होकर। लेकिन सब झूठी बातें हैं, बकवास है। हम...हम तो अनुगामी हैं, सहचर हैं!' प्रेमी ने दार्शनिक सा जवाब दिया। समुद्र में फिर लहरें उठीं-- गिरी!

लड़की उत्साहित होते हुए बोल पड़ी, 'अपना दर्शन रखो अपने पास और चलो यहाँ से। ऊपर चलकर कोई कमरा किराए पर लेते है। देखो....वो देखो ये लहरें.....मुझे भी समुद्र बनने का मन कर रहा। क्या तुम बनाओंगे मुझे समुद्र?

'नहीं, कतई नहीं।'

'क्यों?'

'क्योंकि समुद्र कितनी जिन्दगीयाँ लील जाता है। लेकिन हम अपनी जिंदगियाँ लीलने नहीं देंगे। हम तो दिल की लहरों से एक नई लहर पैदा कर जीवन के अस्तित्व को सहेज कर रखेंगे।' प्रेयसी की नजरें प्रेमी के चेहरे पर टिकी थी। नजरों में आमंत्रण साफ दिखाई दे रहा था।

प्रेमी ने प्रेयसी का हाथ अपने हाथ में पकड़ा और बोला, 'मन की लहरों पर सामाजिक बंधन होता है, पर समुद्र की लहरें स्वतंत्र विचरती है, न कोई भय न कोई बंधन। तुम केवल स्त्री बनी रहो, समुद्र नहीं। क्योंकि स्त्री अपने मन पर बखूबी नियंत्रण कर लेती है पर समुद्र नहीं।'

समुद्र की लहरें फिर उठी, गिरी। उठती–गिरती रहीं। स्त्री मन सृजनरत रहा...!'

–9958396353,

प्रादेशिक
बघेली लघुकथा

सुषमा सिंह करचुली

नजर

आज से धान की कटाई शुरू होनी थी। विष्णुदेव उत्साह से भरे खेत पहुँच गये। कटाई करने आये मजदूरों में हरिया को न देख उन्होंने दीवान से पूछा– हरिया क्यों नहीं आया?

'मालिक हरिया बहुत बीमार है, इसलिए उसने अपनी औरत को भेजा है।' दीवान ने कहा।

विष्णुदेव की नजरें कटाई करते मजदूरों पर पड़ीं। पचीस–तीस साल की एक औरत को देखते हुए उन्होंने पूछा– यही है क्या?

दीवान ने कहा– जी मालिक, यही है।

उन्होंने उसे अपने पास बुलाया। हरिया का हालचाल पूछा। शाम को हरिया को डॉक्टर को दिखाने की बात कहकर चले गये।

शाम के सात बजे अपनी जीप में दीवान के साथ विष्णुदेव हरिया की झोपड़ी के दरवाजे पर थे। बाहर से ही आवाज लगायी। हरिया बाहर आया, पीछे–पीछे उसकी पत्नी भी आ खड़ी हुई। बड़े स्नेह भरे शब्दों में उसे डाँटते हुए अस्पताल चलने को कहा। विष्णुदेव का यह रूप देख हरिया को आश्चर्य हुआ। हमेशा गाली–गलौज की भाषा में बात करने वाले मालिक में इतना प्रेम कहाँ से उमड़ रहा है? अपनी जीप में बैठाकर वह हरिया को अस्पताल ले गये और भर्ती करवा दिया।

रात के दस बजे हरिया की झोपड़ी का दरवाजा खटका। हरिया की पत्नी का जी धक्क से रह गया– इतनी देर कौन हो सकता है? यही सोचती हुई वह दरवाजा खोलने ही वाली थी, तभी उसे बाहर की आहट से खतरे का आभास हुआ। उसने खपरैल में अटका हँसिया निकाल कर अपनी साड़ी के भीतर छुपा लिया और दरवाजा खोल दिया। दरवाजा खुलते ही विष्णुदेव शराब के नशे में लड़खड़ाते और कुटिलता से मुस्कुराते हुए भीतर घुसने को हुए, तभी हरिया की पत्नी ने कहा– रुक जाइये मालिक! भीतर पैर रखने से पहले यह सोच लेना, कि मुझे धान काटने के अलावा और बहुत कुछ काटना भी आता है।

विष्णुदेव को एक झटका सा लगा। वह लौटकर अपनी जीप में बैठे और वापस हो गये।

–8889254695 अनुवाद : राम गरीब पाण्डेय 'विकल' 'गीतायन',